प्रेम पत्र तीसरा भाग जो कि पहली मई सन् १८६५ ई० से ३० एप्रिल सन् १८६६ ई० तक समाप्त हुआ उसके बचनों का

सूची पत्र

बचन संख्या	सुरखी यानी खुलासा मज़मून बचन	पृष्ठ संख्या
१	राधास्वामी मत के मानने वालों और उनकी जुगत के मुवाफ़िक़ अभ्यास करने वालों का सहज में, बग़ैर कष्ट और कलेश और मेहनत और मशक़्क़त के, पूरा उद्धार मुमकिन है, जो वे राधास्वामी दयाल की शरण दृढ़ करें और उनके हुक्म के मुवाफ़िक़ अपनी रहनी और रोज़मर्रा का अभ्यास दुरुस्त करें।	१
२	वक़्त के संत सतगुरु और साध की ज़रूरत, वास्ते हासिल होने सच्चे उद्धार के, और उनकी महिमा और पिछली टेकों का निषेध।	१७
३	वर्णन हाल सुरत के उतार और चढ़ाव का, और गुरु स्वरूप की महिमा और भजन की तरक़्क़ी का जतन, और संसारी व्यवहार और परमार्थी बर्ताव की दुरुस्ती।	२७
४	शब्द की महिमा और हर जगह रचना में उसकी कारवाई का वर्णन, और यह कि उसी के वसीले से जीव का सच्चा और पूरा उद्धार, संत सतगुरु की दया से मुमकिन है। और किसी तरह से धुर पद में पहुँचना और जन्म-मरण से सच्चा छुटकारा मुमकिन नहीं है।	५०
	बचन महात्माओं के	६८
५	वर्णन हाल सच्चे खोजी और परमार्थी, और भी माया और उसकी रचना और घेर का, और ज़रूरत सतगुरु और उनके सतसंग की, और महिमा कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की, जिनके चरणों में सब को प्रीति और प्रतीत लानी चाहिये, और बिना जिनकी मेहर और दया के, किसी का कुछ काम नहीं बन सकता, और हाल उपदेश-कर्ताओं का, और नसीहत उनको और कुल्ल उपदेशियों यानी राधास्वामी मत के सतसंगियों को।	८३

बचन संख्या	सुरखी यानी ख़ुलासा मज़मून बचन	पृष्ठ संख्या
१५	परमार्थियों को तीन क़ायदों पर ख़्याल रखने से अभ्यास में विघ्न कम वाक़ै होंगे, और परमार्थ की तरक़्क़ी दिन २ होती जावेगी।	२९५
१६	सतसंगियों को मौज और रज़ा पर क़ायम रहना चाहिये, और दुख-सुख की हालतों में भरोसा दया का रख कर परमार्थ में ढीले और रूखे-फीके नहीं होना चाहिये।	३०३
१७	वर्णन सच्चे प्रेमी और परमार्थियों की हालत और रहनी और पकड़ और व्यौहार का, और यह कि ऐसी हालत और रहनी कैसे आवे।	३१७
१८	राधास्वामी मत और सुरत-शब्द अभ्यास की महिमा और वर्णन बड़-भागता उन जीवों की, जो प्रीति और प्रतीत सहित अभ्यास कर रहे हैं।	३३६
१९	वर्णन हाल मन की तरंगों और ख़्यालों का, जो कि कर्म-भर्म के सूक्ष्म रूप हैं, और यह कि जब तक इनकी कमी और सफ़ाई न होगी, तब तक मन और सुरत दुरुस्ती से अभ्यास में नहीं लगेंगे और प्रेम की तरक़्क़ी नहीं होगी, और जतन काटने उन ख़्यालों और तरंगों और कर्मों का।	३४७
२०	वर्णन भूल और भर्म और जीव की निर्बलता का, और यह कि बिना मेहर और दया कुल्ल मालिक और संत सतगुरु के, और अभ्यास उस करनी के, कि जो वे बतावें, इसका उलट कर निज घर में पहुँचना यानी सच्चा उद्धार मुमकिन नहीं है।	३७२
२१	वर्णन इस बात का, कि सच्ची मुक्ति क्या है और कौन जुगत से और कहां पहुँचने पर यह हासिल हो सकती है।	३८८
२२	सच्चा मत और सच्चा पंथ क्या है ? और उसकी कार्रवाई क्या है ? और किस तौर से होती है और उससे क्या फ़ायदा हासिल होगा ?	३९७
२३	असली सत्त में जो अमर, अजर और परमानन्द स्वरूप है, पता और भेद लेकर, प्यार और भाव लाना और बढ़ाना चाहिये, तब असत्य यानी माया के देश और जन्म-मरण से छुटकारा होगा।	४०४
२४	तीन बातें हमेशा सुमिरना यानी याद रखनी चाहियें और तीन बातें बिसरना यानी भूलना चाहियें ॥	४१६

बचन संख्या	सुरखी यानी ख़ुलासा मज़मून बचन	पृष्ठ संख्या
२५	वर्णन उस जुगत का, कि जिससे परमार्थी को संसार का दुख-सुख कम व्यापे, बल्कि बिल्कुल न व्यापे, और अभ्यास में थोड़ा-बहुत रस और आनन्द बराबर मिलता रहे, और आहिस्ते २ बढ़ता जावे ।	४३०
२६	राधास्वामी मत वालों को अपने उद्धार की निस्बत किसी तरह का शक और संदेह मन में नहीं लाना चाहिये, क्योंकि जो कोई राधास्वामी दयाल की शरण लेकर, सुरत-शब्द का अभ्यास करेगा, उसका पूरा उद्धार एक, दो, तीन, हद चार जनमों में ज़रूर हो जावेगा ।	४४७
२७	सच्चे परमार्थी को, वास्ते अपनी तरक़्क़ी के, सात बातों की सम्हाल रखनी ज़रूरी है ।	४५५

राधास्वामी मौज से, प्रेम पत्र जारी।
दृढ़ विश्वास होय चरण में, और प्रीति गाढ़ी।।
सुमिरन, ध्यान और भजन में, नित नया आनंद पाय।
सतसंगी सब उमँग उमँग, राधास्वामी महिमा गाय।।

राधास्वामी दयाल की दया राधास्वामी सहाय

प्रेमपत्र राधास्वामी

तीसरा भाग

बचन १

राधास्वामी मत के मानने वालों और उनकी जुगत के मुवाफ़िक़ अभ्यास करने वालों का सहज में, बग़ैर कष्ट और क्लेश और मेहनत और मशक़्क़त के, पूरा उद्धार मुमकिन है, जो वे राधास्वामी दयाल की सरन दृढ़ करें और उनके हुक्म के मुवाफ़िक़ अपनी रहनी और रोज़मर्रा का अभ्यास दुरुस्त करें।

१—जो कि अनेक पदार्थ और भोग इस रचना में मालिक ने पैदा किये, वे दया करके अपने प्रेमी और भक्त जनों के वास्ते रचे, ताकि वे उसकी क़ुदरत की कारवाई को

देखें और दया की परख कर के मगन होकर शुकराना बजा लावें और उन भोगों और पदार्थों के साथ मुवाफ़िक़ हुक्म मालिक के और साथ उन क़ायदों के (जोकि उसने संत सतगुरु रूप धारन करके वास्ते समझौती जीवों के जारी फ़रमाये) होशियारी से बर्ताव करें ताकि उन भोगों का जहर असर न करे यानी नशा अहंकार और ग़फ़लत का पैदा करके उनको भूल और भरम में न डाले और सच्चे मालिक से बे-मुख न करे।

२—इस दुनिया में जो कार्रवाई कि जीव कर रहे हैं, वह तीन क़िस्म की हैं—एक स्वार्थ, दूसरी स्वार्थ-परमार्थ, तीसरी निर्मल यानी ख़ालिस परमार्थ।

३—स्वार्थ उस कार्रवाई को कहते हैं कि जो वास्ते अपने गुज़ारे के, इस दुनियाँ में, और परिवरिश और सम्हाल अपनी देह और कुटुम्ब-परिवार वग़ैरा की, और सम्हाल और तरक़्क़ी दुनिया के भोग बिलास और नामवरी की, की जावे।

४—स्वार्थ-परमार्थ उस कार्रवाई को कहते हैं कि जो वास्ते प्राप्ति सुख और मान-बड़ाई के, इस लोक में ख़्वाह परलोक में, चाहे इस जनम में ख़्वाह आइन्दा के जनम में, या वास्ते राज़ी और ख़ुश करने किसी देवता के या हासिल करने किसी क़िस्म की सिद्धि और शक्ति वग़ैरा के या

वास्ते प्राप्ति स्वर्ग या बैकुण्ठ या मुक्ति या ब्रह्म-लोक वग़ैरा के, की जावे।

५—निर्मल परमार्थ उसको कहते हैं कि जो भक्ति और अंतर-अभ्यास की कमाई प्रेम सहित इस मतलब से की जावे कि जिस से मन और सुरत (जोकि अब माया के घेर में फँसे हुए हैं) दिन २ उस घेरे से निकलते जावें और त्रिकुटी के परे, सुरत, मन से न्यारी होकर, सच्चे मालिक के चरनों में पहुँच कर उसके दर्शन का विलास देखे और परम आनन्द के भंडार में पहुँच कर परम शान्ति को प्राप्त होवे और काल-क्लेश और जनम-मरन के दुखों से क़तई छुटकारा हो जावे, यानी पिंड और ब्रह्मांड के पार चढ़ कर कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुँचे और उस भक्ति और प्रेम की कारवाई में सिवाय प्राप्ति दर्शन अपने प्रीतम कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के, और कोई चाह किसी क़िस्म की न रहे और दिन २ उस मालिक के चरनों में प्रीत और प्रतीत बढ़ती रहे।

६—कसरत से जीव स्वार्थ की कारवाई में लगे हैं और असली स्वार्थ-परमार्थ भी बहुत थोड़े जीव समझ-बूझ के साथ करते हैं और निर्मल परमार्थ कोई बिरले जीव, जिन पर ख़ास दया कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की है, कमाते हैं।

७—स्वार्थी जीव हमेशा नीची-ऊँची जोनों में भरमते रहेंगे और स्वार्थ-परमार्थ वाले ऊँचे देशों में सुख और आनंद पावेंगे और कोई २ ब्रह्म पद में पहुँचेंगे, लेकिन सच्चे और कुल्ल-मालिक का दर्शन सिर्फ़ निर्मल परमार्थियों को मिलेगा और उन्हीं का सच्चा छुटकारा जनम-मरन और काल-क्लेश से होवेगा।

८—निर्मल परमार्थ बग़ैर मदद सच्चे और पूरे गुरू के हासिल नहीं हो सकता है। इस वास्ते कुल्ल जीवों को जो सच्चे मालिक की भक्ति करना चाहते हैं, लाज़िम और मुनासिब है कि पहले खोज सतगुरु का करें और उनसे मिल कर भेद निज धाम और उसके रास्ते का और जुगत चलने की दरयाफ़्त करके अभ्यास शुरू करें और जिस क़दर बन सके, उनका सतसंग करके कर्म, भर्म और संशय वग़ैरा अपने दूर करावें, क्योंकि जब तक भरम और संशय मन में रहे आवेंगे, तब तक अभ्यास दुरुस्ती से नहीं बनेगा और न सतगुरु और सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रेम जागेगा। और बिना प्रेम के रास्ता आसानी से तै नहीं होगा और न अभ्यास में रस और आनंद जैसा कि चाहिये, प्राप्त होगा।

९—सतगुरु के बचन सुन कर और उनका कोई दिन संग करके जीवों को वह क़ायदा कि जिस तरह उनको संसार

में बर्तना चाहिये, मालूम होवेगा और निर्मल भक्ति की रीति भी वे ही सिखावेंगे कि जिससे गृहस्थ में रह कर इस तौर से परमार्थ की कमाई कर सकें कि माया के जाल में न फँसें और इन्द्रियों के भोगों में बंधन न होवे और दिन-दिन देह और दुनिया से, अंतर में, न्यारे होते जावें और कुल्ल-मालिक के चरणों में प्रीत-प्रतीत बढ़ती जावे और दर्शन का शौक़ तेज़ होता रहे ।

१०—जो सच्चे परमार्थी हैं, वही सतगुरु के सतसंग में ठहरेंगे और उनके उपदेश के मुवाफ़िक कार्रवाई करके अपना कारज आहिस्ता २ बनावेंगे । और जिनके मन में दुनिया और उसके सामान का भाव और प्यार ज़बर है, उनसे संत सतगुरु का उपदेश कम माना जावेगा और उनकी जुगत यानी सुरत-शब्द की कमाई भी दुरुस्ती से नहीं बन पड़ेगी । लेकिन जो उनके चित्त में सच्ची अभिलाषा राधास्वामी धाम में पहुँचने की है तो उनका मन भी आहिस्ता २ निर्मल होकर, उसमें प्रीत सच्चे मालिक के चरनों की ज़बर हो जावेगी और फिर संसार के भोग उनको अपनी तरफ़ खैंच और बाँध नहीं सकेंगे ।

११—जो आसान जुगत जीवों के छुटकारे के वास्ते, बग़ैर छोड़ने गृहस्थ आश्रम और उद्यम के, कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल ने जीवों पर अति दया करके इस वक़्त में जारी

फ़रमाई है, उसका शुकराना किसी तरह अदा नहीं हो सक्ता। वह जुगत (सुरत-शब्द योग की) ऐसी असर वाली है कि जो कोई थोड़ी अहतियात के साथ बर्ताव करे तो उस पर संसार और उसके भोगों का असर बहुत कम पहुँचेगा, बल्कि दिन २ निर्मल होकर कोई काल में अपने निज धाम में पहुँच जावेगा और दुनिया का भी भोग, ब-निस्बत दुनियादारों के, ज़्यादा रस और स्वाद के साथ उसको हासिल होवेगा और उसका ज़हर उस पर असर नहीं करेगा। गुरू नानक ने कहा है "पूरा सतगुरु पाइया और पूरी पाई जुक्ति, हसंदियाँ खिलंदियाँ खवंदियाँ पिवंदियाँ, बिच्चे पाई मुक्त" यानी गृहस्थ में रह कर और गृहस्थ आश्रम के सर्व व्यवहार और भोगों में अहतियात के साथ बर्तते हुये संतों की जुगत की कमाई करने से सच्ची मुक्ति हासिल हो सक्ती है।

१२—उस अहतियात की थोड़ी शरह बतौर हिदायत अभ्यासियों के इस जगह लिखी जाती है और वह यह है कि फ़िज़ूल कामना यानी इच्छा संसार और उसके मान-बड़ाई और भोगों की मन में न उठावें, क्योंकि इच्छा के उठाने से जतन यानी कर्म करना पड़ेगा और जो वह जतन दुरुस्त बैठा यानी इच्छा पूरण हुई, तो उसके भोगों में ज़रूर बंधन पैदा होगा और मन उसके रस में लिपट कर मलीन होगा, और जो इच्छा पूरन न हुई तो दुख और क्लेश प्राप्त

होगा और उस हालत में किसी से विरोध और किसी से सरोध अपनी मूर्खता से पैदा करके मुफ़्त भार अपने सिर पर चढ़ावेगा कि जो इसके अभ्यास में निहायत दरजे का ख़लल डाल कर भक्ति और प्रेम को सुखा देगा।

१३—भोग तीन क़िस्म के हैं—इच्छित, अनिच्छत और पर-इच्छित। इच्छित उसको कहते हैं कि किसी काम या पदार्थ या इन्द्रियों के भोगों की यह शख़्स चाह उठावे और जो वह चाह तेज़ है तो ज़रूर जतन करावेगी और जतन करने में कष्ट और क्लेश भी ज़रूर होगा। और जो वह जतन पूरा न हुआ तो दूना दुख होगा और जो पूरा हुआ तो उसकी चाह के पदार्थ या भोग प्राप्त होने पर उसमें ज़रूर आसक्ति होगी। और विशेष करके भोगने में भी आख़िर को तकलीफ़ पैदा होगी। और जो किसी ने सिर्फ़ इच्छा उठाई और उसका अपने अंतर में विस्तार किया, लेकिन फिर समझ-बूझ कर उसके पूरा करने के वास्ते जतन नहीं किया, तो भी जब कभी वह भोग मौज से प्राप्त होगा, तब मगन होकर और दया समझ कर उसमें ज़्यादा शौक़ के साथ बर्तेगा और पकड़ भी उसमें ज़बर होगी। फिर वही नुक़सान जो कि जतन सिद्ध होने पर वाक़े होगा। इस सूरत में भी आयद होगा। इस सबब से समझना चाहिये कि इच्छा उठाने में, चाहे उसके पूरा करने के वास्ते जतन किया जावे या नहीं,

हर तरह नुक़सान है और राधास्वामी मत के सतसंगी को मुनासिब और लाज़िम है कि किसी काम या पदार्थ के वास्ते फ़िज़ूल और ना-मुनासिब इच्छा न उठावे। अन-इच्छित उसको कहते हैं कि कोई पदार्थ या भोग बग़ैर इस जीव की ख़्वाहिश या चाह के मौज से अनासुर्त प्राप्त होवे। अगर वह ना-मुनासिब और ना-जायज़ नहीं है, तो उसको अहतियात के साथ यानी थोड़ा भोगने या काम में लाने में कोई हर्ज नहीं है। पर-इच्छित उसको कहते हैं कि जो कोई अपना रिश्तेदार या दोस्त या सतसंगी भाई, भाव और प्यार के साथ, कोई पदार्थ या भोग इस शख़्स के वास्ते तैयार करके सनमुख रक्खे या उसके पास भेजे तो जो वह ना-मुनासिब और ना-जायज़ नहीं है तो उसी अहतियात के साथ जैसा कि अन-इच्छित भोग के वास्ते ऊपर लिखा गया है, उसमें बर्ताव करे। और जो वह मामूली भोग नहीं है तो बाद उसके भोगने के थोड़ी देर भजन या ध्यान करना भी मुनासिब होगा, ताकि उसका असर उलटा पैदा न होवे।

१४—फ़िज़ूल इच्छा से मतलब यह है कि जिस बात या काम या चीज़ या पदार्थ की ज़रूरत, वास्ते अपने औसत दरजे के गुज़ारे के, नहीं है, उसके वास्ते इच्छा उठाना। ऐसी ख़्वाहिश परमार्थी को, हिर्स करके या मान-बड़ाई के वास्ते, उठाना, मना है। बल्कि जो इच्छा ज़रूरी

काम या पदार्थ वग़ैरा की उठावे और उस की प्राप्ति के निमित्त जतन करे, तो वह राधास्वामी दयाल की मौज के आसरे और उनकी दया के भरोसे पर करना चाहिए। और जो इत्तिफ़ाक़ से वह जतन सिद्ध न होवे, तो समझना चाहिए कि इसी में कुछ मसलहत है। और जैसे बने तैसे ऐसी मौज के साथ मुआफ़क़त करनी मुनासिब है।

१५—जितने में कि इस जीव का गुज़ारा औसत दर्जे पर अपनी हैसियत के मुवाफ़िक़ ब-ख़ूबी होवे, उस क़दर चाह उठानी और उसके निमित्त मौज के आसरे जतन करने में कोई नुक़सान नहीं होगा। पर उस में इस क़दर अहतियात ज़रूर है कि अपने मतलब के पूरा करने के वास्ते किसी को नुक़सान पहुँचाना या उसकी हक़-तलफ़ी करना नहीं चाहिए और इस क़दर सामान की प्राप्ति के वास्ते राधास्वामी दयाल के चरनों में जब-तब प्रार्थना करने में भी दोष नहीं है जैसा कि इस कड़ी में कहा है :—
"मालिक एता माँगहूँ, जामें कुटुम्ब समाय, मैं भी भूखा ना रहूँ, साध न भूखा जाय"।

१६—और मालूम होवे कि राधास्वामी मत के सतसंगी को यह भी हुक्म है कि जिस क़दर आमदनी उसकी होवे, उसमें से दसवाँ अंश यानी दसवाँ हिस्सा मालिक के नाम पर निकाले और उसको वास्ते ख़र्च ख़ैरात और

परमार्थी कामों के अलेहदा रक्खे और जो इस क़दर आमदनी न होवे कि दसवाँ हिस्सा आसानी से निकाल सके तो सोलहवाँ हिस्सा यानी फ़ी-रुपया एक आना ज़रूर मालिक के नाम का अलहेदा करे और परमार्थी कामों में ख़र्च करता रहे। इसमें उसकी कमाई सुफल होगी और जो धन कि बाद निकालने परमार्थी हिस्से के, वास्ते उसके घर के ख़र्च के बचेगा, वह शुद्ध हो जावेगा और परमार्थी ख़र्च के निभाने में उसको में आसानी रहेगी और जब फ़ुरसत और मौक़ा पाकर वास्ते दर्शन या सतसंग के सफ़र करना पड़े तो सफ़र खर्च भी इसी यानी परमार्थी रुपये में से दे सक्ता है।

१७—जो कोई सतसंगी सच्चे मन से कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की सरन लेवेगा और अपने परमार्थी और स्वार्थी कामों को उनकी मौज और दया के आसरे करेगा, और जो जुगत अभ्यास की उसकी बताई गई है, जैसे भजन और स्वरूप का ध्यान और नाम का सुमिरन और पोथी का पाठ और सतसंग वग़ैरा, नेम से दो बार, तीन बार या चार बार थोड़ा-बहुत विरह और प्रेम-अंग लेकर रोज़मर्रा बिला नाग़ा अपनी फ़ुरसत के मुवाफ़िक़ करेगा और ऊपर के लिखे हुए क़ायदे और अहतियात के साथ अपनी रहनी दुरस्त करेगा और संसारी व्यवहार

और अपने उद्यम के कारोबार में जहाँ तक बने, सचौटी के साथ बर्ताव करेगा और फ़िज़ूल वक़्त संसारियों के संग फ़िज़ूल बात-चीत में ख़र्च नहीं करेगा, तो राधास्वामी दयाल सब तरह से उसकी रक्षा और सहायता अपनी दया से करेंगे और अभ्यास में भी उसको थोड़ा-बहुत रस देते जावेंगे और दिन-दिन उसकी प्रीत और प्रतीत अपने चरणों में और बिरह और उमँग अभ्यास और भक्ति के व्यवहार में बढ़ाते जावेंगे और आहिस्ता आहिस्ता एक दिन उसको माया के घेर से निकाल कर निज धाम में पहुँचावेंगे जैसा कि उनके हुकम से जो कि इन कड़ियों में लिखा है, ज़ाहिर है।

वह तो रूप दिखा कर छोड़ूँ।
तुम जल्दी क्यों करो पुकारा ॥
तुम्हरी चिन्ता मैं मन धारी।
तुम अचिन्त रह धरो पियारा ॥
संशय छोड़ करो दृढ़ प्रीती।
और परतीत सँवारा ॥
यह करनी मैं आप कराऊँ।
और पहुँचाऊँ धुर दरबारा ॥
राधास्वामी कहत सुनाई।
जब जब जैसी मौज बिचारा ॥

१८—कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल ने फ़रमाया है कि जो जीव को सच्ची दीनता उनके चरणों में आ जावे

और वह उनकी सरन दृढ़ करे यानी उनकी पनाह और ओट में कार्रवाई परमार्थ की शुरू करे तो उसका मन किसी क़दर चंचल भी रहे ओर अभ्यास भी जैसा चाहिये पूरा २ न बन आवे, तो भी राधास्वामी दयाल अपनी दया से उसका बेड़ा पार करेंगे यानी अपना बल देकर उससे जो करनी ज़रूर और मुनासिब होगी, देर-अबेर आप करा लेंगे और उसका कारज जैसा मुनासिब होगा, आप बनावेंगे।

१६—दीनता से मतलब सिर्फ़ यही नहीं है कि आदाब बजा लावे, बल्कि इसके अर्थ यह हैं कि सच्ची ग़रज़मन्दी वास्ते अपने जीव के कल्यान के और नरकों और दुक्खों से बचाव के लिए राधास्वामी दयाल के चरनों में लेकर भक्ति करे। और ग़रज़मन्दी का स्वरूप यह है कि जैसे बीमार, डाक्टर या हकीम की तवज्जह और दवा का मुहताज है, और नौकरी का चाहने वाला हाकिम की मेहरबानी और तवज्जह का, और निरधन, वक़्त भारी ज़रूरत के, धन के लिये साहूकार का।

२०—अब जीवों को समझना चाहिये कि किस क़दर भारी दया कुल्ल मालिक ने उनके ऊपर इस वक़्त में फ़रमाई है कि निहायत सहज तौर से उनके उद्धार का रास्ता जारी किया है और बग़ैर अलेहदा करने घरबार

और रोजगार से उनको परम पद बख़्शिश करता है। पर शर्त यह है कि वे सच्ची चाह लेकर जिस क़दर बन सके थोड़ा-बहुत अभ्यास संतों की जुगती का, दुरुस्ती के साथ करें और अपना व्यवहार संसार में, और अपनी रहनी परमार्थ में, मुवाफ़िक़ उन क़ायदों के जिनका ज़िकर ऊपर लिखा गया है, दुरुस्त करें और चरनों में प्रीति और प्रतीत बढ़ाते रहें।

२१—ऐसे जीवों का स्वार्थ और परमार्थ यानी दुनिया और दीन, राधास्वामी दयाल अपनी मेहर और दया से आप सँवारेंगे, यानी दुनिया में भी उनकी सम्हाल और रक्षा फ़रमावेंगे और जो कुछ सामान उसका मुनासिब है, बख़्शेंगे, और परमार्थ में अपने चरनों की प्रीत और प्रतीत का दान देकर उसको बढ़ाते रहेंगे, और ऐसी दया उन जीवों के संग रहेगी कि संसार के भोगों की गिरफ़्तारी और बन्धन नहीं होगा और मन और सुरत उनके दिन-दिन निर्मल होकर चरनों में लौलीन रहेंगे और अन्त को चरनों में बासा देवेंगे और बिना उनकी माँग के अपनी तरफ़ से परमार्थ की करनी जिसमें उनके जीव का कारज पूरा बन जावे, अपनी दया का बल देकर उनसे करा लेवेंगे जैसा कि इन कड़ियों में हुक्म है :—

अन धन और संतान भोग रस ।
जगत भोग और मिला जोग रस ॥
पर किरपा सतगुरु अस रहई ।
मोह न व्यापे जग नहिं फँसई ॥
रहे सुरत निर्मल गुरु साथा ।
शब्द मिले रहे चरनन माथा ॥
अपनी दया से गुरु दियो दाना ।
सेवक तो कछु माँग न जाना ॥
नाम अनाम पदारथ न्यारा ।
सो सतगुरु दीना कर प्यारा ॥

२२—अब ख़्याल करो कि किस क़दर भारी दया जीवों पर कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल ने फ़रमाई है, और किस क़दर आसान जुगती कि जो लड़का, जवान और बूढ़ा और औरत और मर्द सहज जिसका अभ्यास कर सकते हैं, जारी फ़रमाई । सिर्फ़ सच्ची लगन यानी सच्चा शौक़ या प्रेम राधास्वामी दयाल के चरणों में दरकार है । उसी की दिन २ तरक़्क़ी होती रहेगी और उसी से एक दिन पूरा कारज बन जावेगा और जो जीव कि थोड़ा-बहुत शौक़ लेकर उनके सतसंग में आवेगा, उसको ऐसी लगन वे अपनी दया से आप बख़्शेंगे और थोड़ी-बहुत करनी करा कर उसको आप बढ़ाते जावेंगे और एक दिन कुल्ल-मालिक यानी अपने धाम में पहुँचा देंगे और दुनिया की भी सब कैफ़ियत दिखला देंगे ।

२३—इस भारी दया का शुकराना कौन अदा कर सक्ता है, क्योंकि पिछले वक़्तों में ब-सबब जारी होने अष्टाङ्ग योग यानी प्राणायाम के (जो कि गृहस्थी से और ख़ास कर औरतों से मुतलक़ नहीं बन सक्ता और विरक्तों से भी जिसका दुरुस्ती से बन पड़ना मुशकिल है) किसी गृहस्थी जीव का उद्धार नहीं हुआ, और विरक्त भी थक कर रह गये। ओर अब दोनों का सहज में कारज बनना मुमकिन है, जो वे राधास्वामी दयाल की सरन में आ जावें और थोड़े-बहुत शौक़ और प्रेम के साथ जैसा-तैसा उनकी जुगत के मुवाफ़िक़ अभ्यास शुरू कर देवें।

२४—जो कुछ कि ऊपर लिखा गया, वह आम सतसंगियों के वास्ते हैं। लेकिन जो कोई सतसंगी कि तेज़ शौक़ वाला है और सच्चे हृदय से चाहता है कि इसी जनम में उसको जल्वा सच्चे मालिक के दर्शन का नज़र आवे और जल्द उसके जीव का पूरा उद्धार हो जावे, उसको चाहिये कि संसार और उसके भोगों से सच्ची नफ़रत यानी उदासीनता लावे और तन, मन और इन्द्रिय और धन और संतान में आसक्ति कम करे और जगत के पदार्थों की चाह दूर करे और सतगुरू और राधास्वामी दयाल के चरनों में गहरी प्रीत और प्रतीत करे और जो जुगत कि बतलाई जावे, उसको प्रेम और उमँग के साथ कमावे, तो सतगुरु

राधास्वामी दयाल उसको प्रेम की दात देकर और उसको दिन २ बढ़ा कर जल्द अपने चरनों में खींचेंगे और दिन-दिन सहारा देकर एक दिन अपने दर्शनों का परम आनन्द बख़्शेंगे ।

२५—मालूम होवे कि राधास्वामी मत में मुख्यता तीन बातों की है । पहले पूरे सतगुरु, दूसरे शब्द यानी ध्वन्यात्मक नाम और तीहरे सतसंग अंतर और बाहर का, यानी बाहर से सतगुरु और उनकी बानी और प्रेमी जन का संग और अंतर में शब्द का संग । बग़ैर प्राप्ति सतगुरु के, कुछ काम नहीं बन सक्ता, क्योंकि सच्ची लगन और सच्चा प्रेम बग़ैर उनके संग और उनकी मदद के कभी हासिल नहीं हो सक्ता और न शब्द का भेद और किसी से मिल सक्ता है । उनके संग स्थूल बंधन जगत के और कर्म काटे जावेंगे और संशय और भर्म दूर होवेंगे और नाक़िस कर्म और कुसंग से बचाव होगा और अन्तर में शब्द यानी नाम के अभ्यासी से भीने कर्म और बन्धन चित्त के काटे जावेंगे और दिन-दिन घाट बदलता जावेगा, यानी मन और सुरत ऊँचे की तरफ़ चढ़ते जावेंगे और रस और आनन्द पाकर प्रीति और प्रतीत बढ़ती जावेगी और दिन-दिन अभ्यास में तरक़्क़ी होकर एक दिन काम बन जावेगा ।

बचन २

वक़्त के संत सतगुरु और साध की ज़रूरत वास्ते हासिल होने सच्चे उद्धार के, और उन की महिमा और पिछली टेकों का निषेध।

१—संत और सतगुरु उनको कहते हैं जो धुर पद तक यानी सत्त पुरुष राधास्वामी देश तक पहुँचे हैं, और साध गुरु उनको कहते हैं जो संतों के दसवें द्वार तक पहुँचे हैं और धुर पद में पहुँचने का यतन कर रहे हैं, और साध या सतसंगी उनको कहते हैं कि जो कुछ रास्ता ते कर चुके हैं और प्रेम पूर्वक साधना कर रहे हैं और दसवें द्वार और सत्त लोक में पहुँचनहार हैं।

२—जो कोई अपना सच्चा और पूरा उद्धार चाहे वह जब तक कि अभ्यास करके सत्तलोक और राधास्वामी धाम में न पहुँचेगा, तब तक पूरा काज नहीं बनेगा, यानी जनम-मरन और देहियों के दुख-सुख से छुटकारा नहीं होगा।

३—यह अंतरमुख अभ्यास और चढ़ाई मन और सुरत की बग़ैर संतों की जुगत यानी सुरत-शब्द मार्ग के इस समय में ख़ास कर, मुमकिन नहीं है, क्योंकि प्राणों का साधन बहुत कठिन है और हर एक से दुरुस्ती से बनना उसका ना-मुमकिन है और फिर भी उसके वसीले धुर पद में पहुँचना किसी तरह नही हो सकता। और सिवाय

इसके और जो कोई साधन हैं, वे प्राण पुरुष के स्थान ने नीचे रह जाते हैं।

४—इस वास्ते लाज़िम और ज़रूर है कि संतों की जुगत यानी सुरत-शब्द योग का, जिसकी तरकीब राधास्वामी दयाल ने अब बहुत सहज और निर्विघ्न कर दी है, अभ्यास किया जावे और इसका भेद सिर्फ़ संत सतगुरु या साधगुरु या उनके मेली सतसंगी से मालूम हो सक्ता है और राधास्वामी मत में यह अभ्यास आम तौर पर जारी है।

५—अब सब जीवों को, जो कि अपना सच्चा कल्यान चाहें और जनम-मरन और चौरासी के चक्कर से बचना चाहें, चाहिए कि संत सतगुरु या साधगुरू और जब तक यह न मिलें तो उनके मेली सतसंगी से जो प्रेम सहित साधना कर रहा है और रास्ता तै करता जाता है, मिल कर उपदेश सुरत-शब्द मार्ग का और भेद धुर धाम का लेकर, जिस क़दर बन सके, उसकी कमाई शुरू कर दें। रफ़्ता २ उनको (जो उनकी लगन सच्ची और तेज़ है) संत सतगुरु भी मिल जावेंगे और अपनी मेहर और दया से उनका कारज सहज में बना देंगे।

६—जब तक कि संत सतगुरु मिलें, तब तक उन अभ्यासियों की जिन्होंने संतों के सतसंगी से उपदेश लिया

है, सफ़ाई और पिंड में चढ़ाई होती जावेगी। लेकिन पिंड के पार चढ़ना बग़ैर मदद् और दया संत सतगुरु के मुमकिन नहीं है। सो जब उनका अधिकार इस क़दर बढ़ जावेगा, तब संत सतगुरु भी ज़रूर मिल जावेंगे और आगे को उनका रास्ता चलावेंगे। उन जीवों को चाहिये कि संतों के मेली सतसंगी से, उसको प्रेमी भक्त समझ कर प्रीत भाव से बर्ताव करें और उसका और संतों की बानी का जिस क़दर बने, संग करते रहें और उसके संग अभ्यास करके रास्ता तै करते रहें।

७—संत सतगुरु इस दुनिया में बहुत दुर्लभ रतन हैं और जिस किसी को वे मिल जावें और थोड़ी-बहुत अपनी दया से अपनी पहिचान उसको देवें, उसी जीव को बड़ा बड़भागी समझना चाहिये। निज रूप यानी शब्द स्वरूप से वे हर वक़्त हर एक के घट में निकट मौजूद हैं। पर जब तक कि वे बाहर नर स्वरूप से न मिलें, तब तक पूरा पूरा भेद नहीं मिल सकता है और न बग़ैर थोड़े-बहुत अभ्यास के उनके निज स्वरूप की पहिचान हो सक्ती है। इस वास्ते सच्चे परमार्थियों को खोज संत सतगुरु की बहुत ज़रूर है।

८----जब से कि जीव संत मत में उपदेश लेकर शामिल होवे, तब से उसको लाजिम है कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की टेक बाँधे और जिस क़दर कि

पिछली टेकें होवें, उनको छोड़ देवे और जिस जिस का कि इष्ट और भाव मन में पहिले से धरा होवे, उन सब को शाखा जानकर राधास्वामी के चरनों में समा देवे, यानी मूल की धारना इख़्तियार करे और शाखाओं में न अटके, क्योंकि जब तक ऐसा नहीं करेगा, तब तक उसकी निर्मल प्रीत और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरणों में नहीं आवेगी और न अन्तर-अभ्यास में मदद मिलेगी।

६—इसी तरह सुरत-शब्द मार्ग की महिमा (जिसकी चाल जान की धार पर सवार होकर चलती है और जान की धार सब धारों पर भारी है) समझ कर शौक़ और ज़ौक़ के साथ उसका अभ्यास शुरू करे और जितने अभ्यास कि दुनिया में जारी हैं, उनको ओछा और कर्म-धर्म वग़ैरा को भरम समझ कर त्याग देवे और उनमें किसी तरह का भाव और उनसे किसी तरह की आशा न रक्खे, नहीं तो सुरत-शब्द का अभ्यास जैसा कि चाहिये दुरुस्ती से नहीं बनेगा और संशय और भरम मन में जब-तब पैदा होकर उसकी कार्रवाई में विघ्न डालते रहेंगे।

१०—संतों का मत प्रेमा भक्ती का है और यह भक्ति अंतर में सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के चरणों में सच्चे मन से करनी चाहिये यानी उनके चरणों का प्रेम सहित ध्यान और उनके शब्द का उमंग सहित श्रवन करना चाहिये

और जो संत सतगुरु मिल जावें तो बाहर से उनकी भक्ति, प्रेम और उमंग के साथ करनी चाहिये यानी चित्त से उनके बचन सुनना और समझना और दृष्टि जोड़ कर उनके स्वरूप का दर्शन करना और तन-मन धन से जिस क़दर बन सके, उनकी और उनके भक्तों की सेवा करना ।

११—सतगुरु और उनके भक्तों की सेवा ऐन राधास्वामी दयाल की भक्ति समझनी चाहिये, क्योंकि इस भक्ति करने का मतलब यही है कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु (जो असल में उन्हीं का रूप हैं) प्रसन्न होकर प्रेम दान देवें, यानी मन और सुरत को जो तन ओर इन्द्रिय और संसार के भोगों में (जो जड़ पदार्थ हैं) अटके हुए हैं, उनसे आहिस्ता २ न्यारा करके, घट में निज धाम की तरफ़ चढ़ाते हुए एक दिन राधास्वामी के चरणों में पहुँचावें ।

१२—यही यानी संत सतगुरु की भक्ति कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल को मंज़ूर और क़बूल है । और किसी की भक्ति पसंद नहीं और न उससे वह फ़ायदा और फल जो कि ऊपर लिखा गया, हासिल हो सक्ता है ।

१३—और जिस किसी को संत सतगुरु अभी नहीं मिले हैं और वह उनके मिलने की आशा में उनके मेली सतसंगी और सतसंगिनों से भाव और प्यार और थोड़ी-

बहुत उनकी सेवा करे, तो वह भी संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल की भक्ति में दाखिल होगी, क्योंकि उस शख़्स का मतलब इस कार्रवाई से यही होगा कि राधास्वामी दयाल अंतर में दया करें और अपने चरणों में खींचें और संत सतगुरु का भी दर्शन और सतसंग प्राप्त होवे। फिर यह भक्ति ख़ुद राधास्वामी दयाल की ही सेवा और भक्ति में शामिल होगी। इसका भी फल रफ़्ता २ यही मिलेगा कि अंतर शब्द और स्वरूप में भाव और प्यार बढ़ता जावेगा।

१४—मालूम होवे कि राधास्वामी दयाल कुल्ल-मालिक और सर्व समर्थ घट २ में मौजूद यानी हाज़िर और नाज़िर हैं, और जो कोई उनके दर्शन और निज धाम की प्राप्ति के निमित्त अंतर और बाहर सेवा कर रहा है, उसको वे आप देख रहे हैं और उसकी निष्काम भक्ति का फल यानी प्रेम की तरक़्क़ी आप देते हैं, और उसके मन और सुरत का आहिस्ता २ सिमटाव और चढ़ाव करते हुये अपने चरणों में लगाते हैं और थोड़ा-बहुत रस और आनन्द अभ्यास का आप अपनी दया से देते जाते हैं, क्योंकि जिस क़दर कार्रवाई मेहर और दया की होती है, वह सब निज रूप से, जो कि हर एक के घट-घट में मौजूद यानी अंग संग है, की जाती है। इस वास्ते हर

एक को राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीति और प्रतीत दिन २ बढ़ाना और अंतर में सेवा यानी अभ्यास दुरुस्ती से करना, वास्ते प्राप्ति मेहर और दया रोज़ अफ़ज़ूँ के, मुनासिब और ज़रूर है ।

१५—राधास्वामी के प्रेमी भक्तों को किसी दूसरे में परमार्थी भाव, उनके बराबर या उनसे ज़्यादा किसी हालत में नहीं रखना चाहिये । जितने पद कि राधास्वामी धाम से नीचे हैं, उनके धनी का अदब करना दुरुस्त है, पर मन और शीश राधास्वामी के चरणों में अर्पण करना चाहिये । जैसे स्त्री ख़ातिर और ज़रूरत पड़े तो सेवा सब की यानी अपने मां-बाप और कुटुम्ब और अपने पति के कुटुम्ब की करती है, लेकिन अपनी निज प्रीत और सर्व कारज के पूरण करने की आशा अपने पति में रखती है, और वक़्त पर उसी का संग देती है, बल्कि अपने पुत्रों से भी मामूल से ज़्यादा सरोकार नहीं रखती है, इसी तरह राधास्वामी के इष्ट वालों के हिरदे में सिवाय राधास्वामी दयाल के दूसरे का भाव और प्यार (सिवाय मामूली तौर के) नहीं होना चाहिये, नहीं तो भक्ति में भारी नुक़सान पैदा होगा । चाहे स्वार्थ, चाहे परमार्थ, दोनों कामों में भरोसा और दया की आशा राधास्वामी दयाल के चरणों में रखना चाहिये ।

१६—हर हालत और हर काम में राधास्वामी के

शुकर की करना समझ विचार ।
सुक्ख दुख देंगे हिकमत धार ।। ३ ।।

ताड़ और मार करें सोइ प्यार ।
भोग सब इन्द्री रोग निहार ।। ४ ।।

कहूँ क्या दम दम शुकर गुज़ार ।
बिना उन और न करने हार ।। ५ ।।

दुखी चित से न हो दुख लार ।
सुखी होना नहीं सुख जार ।। ६ ।।

बिसारो मत उन्हें हर बार ।
दुक्ख और सुक्ख रहो उन धार ।। ७ ।।

गुरू और शब्द यह दोउ मीत ।
नहीं कोई और इन धर चीत ।। ८ ।।

यही सतपुर्ष यही करतार ।
लगावें तोहि इक दिन पार ।। ९ ।।

बिना उन कोई नहीं संसार ।
देओ मन सूरत उन पर वार ।।१०।।

करें वह नित्त तेरी सार ।
तेरे तन मन के हैं रखवार ।।११।।

शुकर कर राख हिरदे धार ।
मिटावें दुक्ख सबही झाड़ ।।१२।।

करें क्या मन तेरा नाकार ।
नहीं तू छोड़ता विष धार ।।१३।।

भोग में गिरे बारम्बार ।
न माने कहन उनकी सार ।।१४।।

इसी से मिले तुझको दंड ।
नहीं तू मानता मति मंद ।।१५।।

सहो अब पड़े जैसी आय।
करो फ़र्याद गुरू से जाय ॥१६॥
पकड़ फिर उनहीं को तू धाय।
करेंगे वोही तेरी सहाय ॥१७॥
बिना उन और नहीं दरबार।
रहो उन चरण में हुशियार ॥१८॥
गुनह तुम कीये दिन और रात।
गुरू की कुछ न मानी बात ॥१९॥
इसी से भोगते दुख घात।
बचावेंगे वही फिर तात ॥२०॥
रहो राधास्वामी के तुम साथ।
लगे फिर शब्द अगम तुम हाथ ॥२१॥

बचन ३

वर्णन हाल सुरत के उतार और चढ़ाव का और गुरु स्वरूप की महिमा और भजन की तरक़्क़ी का जतन और संसारी व्यवहार और परमार्थी बर्ताव की दुरुस्ती

१—मालूम हो कि सुरत का उतार असल में निज धाम यानी राधास्वामी दयाल के चरणों से हुआ है और पिंड के नाके पर यानी छठे चक्र के मुक़ाम पर कि जो अंदर की तरफ़ दोनों आँखों के मध्य में वाक़ै है, इसकी

निज बैठक है और वहीं से दोनों नेत्रों में धार आई और वहाँ ठहर कर कारवाई देह और दुनिया की जारी हुई और देह और कुटुम्ब और भोगों और पदार्थों में बंधन और आसक्ति हो गई कि जिसके सबब से दुख-सुख सहना पड़ता है, यानी जहाँ मन की प्रीत है या जहाँ इसका महत्व है या जिसको अपना समझा है, वहीं बंधन पैदा हो गया और उसकी हालत बदलने में इसकी भी हालत बदलती है यानी दुख-सुख का चक्कर चलता रहता है।

२—जब तक कि निज घर का भेद पाकर और जुगत चलने की दरियाफ़्त करके चलना यानी उलटना शुरू नहीं किया जावेगा, और दृढ़ आशा पहुँचने निज धाम की बाँधी नहीं जावेगी, तब तक यह गिरफ़्तारी सुरत और मन की जिसका ज़िकर ऊपर हुआ, नहीं छूटेगी, और जनम-मरन भी बारम्बार देह धर कर जारी रहेगा। यह भेद और जुगत पहुँचने निज धाम की संत सतगुरु या साध गुरू से मालूम हो सक्ती है। पर शर्त यह है कि यह शख़्स सच्चे मन से यानी सच्चे शौक़ के साथ अभ्यास शुरू करे, तब उलटना मन और सुरत का और चढ़ाई निज घर की तरफ़ मुमकिन है।

३—मन और इन्द्रियाँ अपने असली सुभाव और पुरानी आदत और स्वभाव के मुवाफ़िक़ इस कारवाई में

विघ्न-कारक होंगे। सो उनके विघ्नों के हटाने और घटाने का जतन यही है कि संसारी तरंगें और इच्छा को, जिस क़द्र मुमकिन होवे, रोके यानी फ़िज़ूल और बग़ैर ज़रूरत के अपनी सुरत की धार को इन्द्रिय द्वारे से बाहर की तरफ़ न बहावे, और इन्द्रियों के भोगों में आसक्ति कम करता जावे, तब अभ्यास किसी क़द्र दुरुस्ती के साथ बन पड़ेगा और कुछ रस भी अंतर में मिलेगा और फिर वही रस, जो अभ्यास नेम से जारी रहा, दिन-दिन बढ़ता जावेगा।

४—जो अभ्यासी को सतगुरु के चरणों में किसी क़द्र परमार्थी भाव और प्यार है और वक़्त ध्यान और भजन के उनके स्वरूप को अगुवा करके अभ्यास शुरू करेगा, तो अंतर में मन और इन्द्रियों का ज़ोर किसी क़द्र घटता नज़र आवेगा और प्रेम और उमँग की थोड़ी-बहुत तरक़्क़ी होती जावेगी।

५—कुल्ल-मालिक जो कि घट २ में अंतरजामी है, सच्चे सेवक को अपने चरणों में प्रीत और प्रतीत दिलाने और उसके बढ़ाने के निमित्त, मौज से जब-तब गुरु स्वरूप धारन करके, अंतर में वक़्त अभ्यास या स्वप्न अवस्था के (जब कि मन और सुरत का सिमटाव अंदर की तरफ़ होता है और देह और इन्द्रियों की तरफ़ झुकाव नहीं रहता) दर्शन देता है। यह दर्शनी स्वरूप हाड़-माँस का

नहीं है, बल्कि चैतन्य यानी रूहानी है और सेवक को पहिचान कराने के मतलब से धारण किया जाता है। नहीं तो वह कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल अरूप तौर से भी अंतर में दया फ़रमा सकते हैं। पर सेवक को उसकी पहिचान नहीं होगी और इस सबब से उनकी महिमा और मेहर और दया की ख़बर नहीं पड़ेगी।

६—जब कि कभी २ सेवक को ऐसे दर्शन अपने घट में मिल गये, तो उसी स्वरूप का जब अभ्यास के समय या और किसी वक़्त ध्यान या ख़्याल करेगा, तब ज़रूर थोड़ा-बहुत प्रेम जागेगा और मन और इन्द्रिय भी उस वक़्त नीचे पड़ जावेंगे यानी अभ्यास में विघ्न नहीं डालेंगे।

७—इसी सबब से सतगुरु स्वरूप और उसके ध्यान की महिमा और फ़ायदा ज़बर है कि मालिक अन्तरजामी सेवक पर दया करने के वास्ते और उसकी प्रीत और प्रतीत बढ़ाने के लिये, आप उस स्वरूप को धारन करके घट में दर्शन देता है और यह स्वरूप सेवक के साथ जहाँ तक कि रूप-रंग-रेखा है, सूक्ष्म से सूक्ष्म होता हुआ संग रहेगा और अंतर में मदद देगा, और फिर यही स्वरूप, अरूप की भी पहिचान कराता जावेगा। इस वास्ते हर एक प्रेमी अभ्यासी को चाहिये कि जब कभी ऐसे दर्शन अंतर में वक़्त अभ्यास या सुपने में मिलें, तो उनको दर्शन मालिक का

समझ कर उस स्वरूप में प्रीत और भाव लावे। यह दर्शन आसानी से या जब जी चाहे तब नहीं मिलते हैं, बल्कि किसी कदर ऊँचे देश में, जब मन और सुरत सिमट कर वक़्त अभ्यास या सोने के वहाँ पहुँचें, तब मौज से प्राप्त होते हैं और इसी को ख़ास निशान राधास्वामी दयाल की दया का समझना चाहिये।

८—यह दस्तूर आम है कि जिस किसी ने जो कोई सूरत या चीज़ देखी है, वह जब उसका ख़्याल करे वह सूरत थोड़ी-बहुत उसकी आँखों में आ जाती है, लेकिन सतगुरु स्वरूप का ख़्याल इस तौर से जब चाहे तब नहीं आता है। सबब इसका यह है कि आम सूरतों का जब कोई आदमी ख़्याल करता है तो उसके मन या आँखों में अक्स या छाया नज़र आ जाती है, लेकिन सतगुरु स्वरुप का जब दर्शन होता है, वह ऊँचे देश में असली या सच्चा होता है और जब-कभी होता है, तब राधास्वामी दयाल की दया और मेहर से होता है, वास्ते बढ़ाने प्रीत और प्रतीत सेवक के।

९—लेकिन इस क़दर समझना चाहिये कि जब तक सेवक को बाहर सतगुरु के स्वरुप में भाव और प्यार न होगा और वह अंतर स्वरुप की महिमा न जानेगा, तब तक मालिक अंतरजामी गुरु स्वरुप में दर्शन बहुत कम देवेंगे।

यानी बाज़े लोग इस किस्म के हैं कि उनके मन में विद्या और बुद्धि के सबब से स्वरूप में भाव नहीं आता और उसको महदूद (हद्द वाला) और अल्पज्ञ और ओछा समझ कर ऐसा ख़्याल करते हैं कि मालिक तो अरूप और अपार है, वह स्वरूप-धारी कैसे हो सक्ता है? सो जब कभी उनको इत्तिफ़ाक़ से ऐसा दर्शन भी (उनके मन की हालत की जाँच की नज़र से) मिल जाता है, तो उनको उसमें मुतलक़ भाव नहीं आता और उसको ख़्वाब-ओ-ख़्याल समझते हैं। ऐसे लोगों को मालिक अंतरजामी गुरु स्वरूप में दर्शन नहीं देते हैं। और जो कि अरूप की उनको जाँच और पहिचान, जब तक कि सुरत उनकी ज़्यादा ऊँचे देश में न पहुँचे, नहीं आ सक्ती, इस वास्ते वे इस क़िस्म की दया से अर्से तक ख़ाली रहते हैं और मन और इन्द्रियों के विघ्न भी उनको ज़्यादा सताते रहते हैं।

१०—इन लोगों को इस बात की समझ अच्छी तरह नहीं आती कि आदि स्वरूप (जहाँ से रूप-रंग-रेखा खड़े हुए) उस कुल्ल-मालिक ने ही धारन किया और फिर वही आकार नीचे की रचना में कमी-बेशी के साथ उतरता आया और वह आदि स्वरूप ऐसा ही अपार है जैसा कि अरूपी स्वरूप, बल्कि नीचे के दरजों में भी स्वरूप ऐसा ही अपार है कि जिस का कोई अन्दाज़ और

हिसाब नहीं कर सक्ता, लेकिन अफ़सोस यह है कि यह लोग अपनी ओछी समझ के मुआफ़िक़, स्वरूप के लफ़्ज़ और नाम को हमेशा हद्दार और ओछा समझते हैं। सबब इसका यह है कि इनकी नज़र स्थूल रचना में बँधी हुई है और सूक्ष्म से सूक्ष्म रचना का इनको अनुमान नहीं होता। इस वास्ते यह शुरू से अरूप की तरफ़ दौड़ते हैं और हाल यह है कि जब तक रूपवान रचना की हद्द के पार न जावेंगे, इनको उस अरूप का, जिनकी कि यह महिमा समझते हैं, कभी दर्शन प्राप्त नहीं हो सकते। और इस नादानी का इनको यह फल मिलता है कि प्रेम और उमँग से जो कि रास्ते के जल्दी काटने वाले और अभ्यास में रस और आनन्द प्राप्त कराने वाले हैं, ख़ाली रहते हैं। और अभ्यास में मन और इन्द्रियों के विघ्नों से झटके खाते रहते हैं। और इस सबब से चाल भी इन की सुस्त रहती है और रुखा-फीकापन हमेशा इन के मन और सुरत पर थोड़ा-बहुत छाया रहता है और जब-तब रस न मिलने की शिकायत करते रहते हैं और कभी इनकी २ प्रीत-प्रतीत भी डिगमिग हो जाती है।

११—एक भारी ख़राबी ऐसे अभ्यासियों में यह है कि वे अक्सर अपना बल लेकर अभ्यास करते हैं और अपने वैराग वग़ैरा का ज़्यादा भरोसा रखते हैं, और स्वरूप

के प्रेमियों को अक्सर ओछा देखते हैं, और अपने से, अभ्यास और वैराग में उनको कम ख़्याल करते हैं। और हाल यह है कि प्रेमियों को थोड़े अभ्यास में रस और आनन्द बहुत मिल जाता है, और गुरु स्वरूप को अगुवा रखने से उनके मन और इन्द्रिय किसी क़िस्म का विघ्न नहीं डालते। और वे पहले वाले लोग हरचन्द ज़्यादा अभ्यास करते नज़र आते हैं और अपना बल लेकर मन और इन्द्रियों से हर रोज़ जूझते हैं, मगर फिर भी उनको प्रेमियों के बराबर रस नहीं मिलता और जब २ मौज से रस मिलता है, तो किसी क़दर उसका अहंकार भी उनके मन में आ जाता है।

१२—लेकिन जो भाग से इन लोगों को सतगुरु का सतसंग प्राप्त होता रहा, तो इनकी समझ भी आहिस्ता आहिस्ता बदलती जावेगी, और कोई दिन के अभ्यास के बाद, जब उनकी सुरत सिमट कर किसी क़दर ऊँचे देश में चढ़ने लगेगी, तब गुरु स्वरुप की महिमा उनके चित्त में समाती जावेगी और फिर वेही प्रेमियों के मुवाफ़िक़ अभ्यास में थोड़ी-बहुत गुरु स्वरूप की मदद लेकर चलने लगेंगे और फिर उनका रास्ता भी आसानी से तै होता जावेगा। इन लोगों का ब-मुक़ाबले प्रेमी अभ्यासियों के, जो विवेक अंग वाले अभ्यासी कहा जावे तो यह कहना दुरुस्त है।

१३—खुलासा यह है कि चाहे कोई प्रेम अंग लेकर

चले या विवेक और वैराग अंग पर ज़ोर देकर रास्ता तै करना शुरू करे, दोनों को पिंड देश से आहिस्ता आहिस्ता न्यारे होकर अपने निज धाम की तरफ़ चलना और चढ़ना ज़रूर है। क्योंकि जब तक कि सुरत, माया के घेर के पार न जावेगी, तब तक काम पूरा नहीं बनेगा यानी जब तक कि सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल के धाम में न पहुँचेगी, तब तक निर्भय और निःचिन्त नहीं हो सकी, और न परम आनन्द प्राप्त हो सकता है। और वहीं पहुँच कर जनम-मरन और काल के क्लेश से सच्चा छुटकारा होगा।

१४—इस वास्ते कुल्ल परमार्थी जीवों को, जो अपना सच्चा उद्धार चाहते हैं और जिन को जीते-जी अपनी भक्ति और अभ्यास का थोड़ा-बहुत फल देखते चलना मंज़ूर है, तो उनको चाहिये कि सतगुरु खोज कर, उनका सतसंग भाव और प्रीत के साथ करें और संशय और भर्म दूर करके सुरत-शब्द मार्ग का उपदेश लेकर, उमंग और प्रेम के साथ उसकी कमाई करें, और सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल की सरन दृढ़ कर के और उनकी मेहर और दया का आसरा और भरोसा रख कर रास्ता तै करना शुरू करें और प्रीत और प्रतीत चरनों में बढ़ाते जावें। तब दिन-दिन उनको अभ्यास में थोड़ा-बहुत रस मिलता जावेगा और आहिस्ता२ तरक़्क़ी करके वे एक दिन राधास्वामी दयाल की दया से

धुर धाम में पहुँच कर परम और अमर आनन्द को प्राप्त होंगे।

१५—प्रेमी अभ्यासियों को इस क़दर जता देना मुनासिब मालूम होता है कि अभ्यास के समय चाहे उनको दर्शन गुरु स्वरूप का प्रत्यक्ष होवे या नहीं, उनको अपने मन और सुरत को, स्वरूप का ख़्याल करके, स्थान पर जमाना चाहिये और जो उनके मन में थोड़ा स्वरूप में भाव और प्रेम है तो यह कार्रवाई उनसे दुरुस्त बन पड़ेगी यानी मन और सुरत उनके, स्वरूप के आसरे, स्थान पर किसी क़दर ठहरने लगेंगे और ऊँचे देश में ठहरने का रस थोड़ा-बहुत ज़रूर मालूम पड़ेगा और ज़्यादा ठहराव या ऊँचे स्थान पर चढ़ाव के साथ वह रस और आनन्द बढ़ता जावेगा।

१६—जो कोई अभ्यासी यह चाहते हैं कि पहिले हम को दर्शन मिलें तब ध्यान करें, यह चाह उनकी ना-जायज़ तो नहीं है, पर कमी शौक़ और विरह और प्रेम की इससे पाई जाती है, क्योंकि ऐसी मौज मालूम नहीं होती है कि हर किसी को स्वरूप के दर्शन अन्तर में, मुवाफ़िक़ उसके इरादे के, जब चाहे जब मिल जावें। इस वास्ते कुल्ल सतसंगियों को मुनासिब है कि अपने २ शौक़ के मुवाफ़िक़ स्वरुप अनुमान करके अभ्यास शुरु करें और

दर्शनों की प्राप्ति मौज पर छोड़ दें, राधास्वामी दयाल जब-जब और जैसे २ जिस २ जीव के वास्ते मुनासिब होगा, वक़्तन्-फ़वक़्तन् दया फ़रमावेंगे, यानी किसी को अक्सर और किसी को कभी २ स्वरूप का दर्शन देते रहेंगे।

१७—मुवाफ़िक़ ख़्वाहिश के हर रोज़ और हर वक़्त जब मन चाहे दर्शन मिलने में बड़ी आसानी अभ्यास की होती है और प्रेम भी जल्द बढ़ता है। पर यह हालत थोड़े दिन रह सक्ती है, क्योंकि रास्ता दूर व दराज़ है और वास्ते उसके काटने के, विरह और शौक़ की तरक़्क़ी ज़रूर चाहिये। और मन में बे-कली और घबराहट का जब तब पैदा होना वास्ते उसकी सफ़ाई और चढ़ाई के ज़रूर है। और यह बात जब तक कि दर्शन हर वक़्त मिलते रहेंगे, हासिल न होगी।

१८—और यह बात भी सतसंगियों को जानना ज़रुर है कि सच्चे परमार्थ के हासिल करने के वास्ते सच्चे गुरु का संग चाहिये। जो संत सतगुरु न मिलें तो जो कोई प्रेमी सतसंगी उनसे मिला हुआ मिल जावे, और वह साधना कर रहा है और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का मंज़ूर-ए-नज़र है यानी उस पर उनकी मेहर और दया है, तो उसके संग से भी कारज बनना मुमकिन है। यानी जब कोई सच्चा प्रेमी उस सतसंगी से, भेद और जुगत दरियाफ़्त

करके अभ्यास शुरू करेगा, तो उसको राधास्वामी दयाल अपने चरणों में लगावेंगे और अन्तर और बाहर परचे देकर उसकी प्रीत और प्रतीत को बढ़ावेंगे। इससे उस सच्चे प्रेमी को यक़ीन हो जावेगा कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल ने उसको मंज़ूर और क़बूल फ़रमाया यानी अपना कर लिया और दिन २ उसकी दुरुस्ती करते जाते हैं। फिर उसको मुनासिब होगा कि उसी प्रेमी सतसंगी का सतसंग करे जाय और जो ज़ाहरी समझ-बूझ और मदद दरकार होवे, उससे लिये जावे। वह आप चल रहा है और उसको भी संग २ चलाता जावेगा और एक दिन दोनों धुर घर में पहुँच जावेंगे।

१६—अक्सर सतसंगी अभ्यासी इस बात की जल्दी करते हैं कि हमारी सुरत एक दम चढ़ा दी जावे या कि कोई मुक़ाम हमको खुल जावे। यह चाह तो अच्छी है, लेकिन इसके पूरा होने के लिये जल्दी और इज़्तराबी और घबराहट नहीं चाहिये, क्योंकि यह काम आहिस्ता २ दुरुस्त बनेगा और जल्दी में नुक़सान होगा।

२०—मालूम होवे कि सुरत की धार से तमाम बदन चैतन्य है। और जिस क़दर वह धार सिमट कर ऊपर की तरफ़ चढ़ती जावेगी, उसी क़दर पिंड ख़ाली होता जावेगा या उसमें कमी होती जावेगी। सो ऐसी कमी

की बरदाश्त यकायक नहीं होगी। लेकिन जो आहिस्ता २ चढ़ाव और उतार होगा तो उसमें किसी किस्म की हर्ज देह की कार्रवाई और उसकी सम्हाल में वाक़े नहीं होगा। और जो मुख्य अंग मन और सुरत का, एक दम या जल्दी खिंच जावेगा, तो देह की सम्हाल जैसी कि चाहिये वैसो नहीं हो सकी और न दुनिया के कारोबार में मन लगेगा, यानी ऐसे अभ्यासी का वर्ताव यक-तरफ़ा हो जावेगा, बल्कि परमार्थ भी आइन्दा दुरुस्ती से नहीं बनेगा और बे-होशी ज़्यादा ग़ालिब होकर आगे का रास्ता बन्द हो जावेगा। फिर वह शख़्स न स्वार्थ के काम का रहा और न परमार्थ का, दोनों कामों में भारी हर्ज और नुक़सान हो गया। इस वास्ते ऐसी चाल संत नहीं चलाते। उनको जीव को आहिस्ता आहिस्ता चला कर धुर मंज़िल में पहुँचाना मंज़ूर है, न कि रास्ते में अटका कर छोड़ देना।

२१—इस वास्ते कुल्ल अभ्यासी सतसंगियों को मुनासिब है कि ऐसी जल्दी कि जिसमें उनका काम बिगड़े, न करें, और जैसे २ उनको राधास्वामी दयाल कभी-कभी रस और आनन्द और कभी २ विरह और बे-कली देकर चलावें, उसी तरह चलते जावें और अपनी तरक़्क़ी के वास्ते जब २ दिल चाहे, अर्ज़-मारूज़ भी करते रहें। पर निरास होकर अभ्यास में सुस्त और ढीले न हो जावें और अपने प्रेम को रूखा-फीका न होने दें।

माँगना क़तई मना नहीं किया गया है। लेकिन इस क़द्र अहतियात चाहिये कि जो माँग पूरी न होवे या सतसंगी की ख़्वाहिश के मुआफ़िक़ काम न बने तो उनसे बे-मुख न हो जावे, और जो कुछ कि मौज से होवे उसी में मसलहत और अपना असली फ़ायदा समझ कर धीरज और सब्र और सन्तोष के साथ बरदाश्त करे।

२५—जब कभी कोई चिन्ता या तकलीफ़ पेश आवे तो उस वक़्त मुनासिब है कि ध्यान या भजन में बैठ कर पहिले अपनी चिन्ता या तकलीफ़ का हाल अर्ज करे, और फिर अपने मन और सुरत को समेट कर जिस क़द्र बन सके, स्वरूप या शब्द या दोनों में लगा देवे। तो उसको थोड़ी-बहुत शान्ति या सब्र या ताक़त बरदाश्त की ज़रूर हासिल होगी।

२६—उत्तम दरजे की भक्ति का क़ायदा यह है कि भक्त यानी प्रेमी सतसंगी की किसी क़िस्म की अपनी चाह या किसी चीज़ में गहरा बन्धन न रहे, और अपने भगवन्त यानी कुल्ल-मालिक को सर्व-समर्थ और अन्तरजामी और अपना सच्चा हितकारी और हर वक़्त का मददगार समझ कर निःचिन्त रहे, और अपने मालिक के चरणों के प्रेम में हर वक़्त मगन रहे और जब-तब चरण रस लेता रहे। लेकिन यह हालत हर एक की एक दम नहीं हो

सक्की। आहिस्ता २ सतसंग और अभ्यास और भक्ती करके दुनिया के ख़्याल और चाहें और बन्धन और चिन्ता कम और हलके होते जावेंगे और उसी क़द्र राधास्वामी दयाल की सरन पक्की होती जावेगी और उनकी दया का भरोसा मज़बूत होता जावेगा। सो जब तक कि हालत पूरण प्रेम की हासिल होवे, तब तक, जब २ अभ्यासी भक्त के मन में जो चाह ज़रूरी सामान की उठे, या कोई तकलीफ़ या चिन्ता सतावे, उस वक़्त जो वह अपना हाल चरणों में अर्ज़ करे या कोई माँग माँगे तो कुछ मुजायक़ा नहीं है। राधास्वामी दयाल अपनी मेहर से कच्चे लेकिन सच्चे भक्त की सम्हाल जिस क़द्र मुनासिब है आप फ़रमावेंगे और जब २ मुनासिब समझेंगे, उसकी अर्ज़ और माँग भी मंज़ूर करेंगे। और जो मंज़ूर करना मुनासिब नहीं होगा, तो (जो मुनासिब होगा) उसकी वजह यानी मसलहत भी उसको जतावेंगे, जिससे उसको ताक़त बरदाश्त की हासिल होवेगी और किसी वक़्त और हालत में अधीर और बे-सब्र नहीं होगा। पर शर्त यह है कि जब से वह राधास्वामी दयाल की सरन में आया, कोई नाक़िस यानी पाप कर्म जान-बूझ कर न करे और अपना व्यवहार और बर्ताव उनके हुकम के मुवाफ़िक़, जहाँ तक बन सके, दुरुस्त करे।

२७—और मालूम होवे कि बहुत सी तकलीफ़ों

और बलाओं को, जो कि अभ्यासी सतसंगी के पिछले कर्मों के असर से आयद होती हैं, राधास्वामी दयाल बाला २ अपनी मेहर और दया से टाल देते हैं या सूली का काँटा कर देते हैं कि जिनकी उसको ख़बर भी नहीं होती, और बहुत से कर्मों को सहज में बाहर या अन्तर अभ्यास में भुगतवा देते हैं कि जिनकी बहुत थोड़ी झड़क इसको मालूम होती है और उन कर्मों के पूरे असर की ख़बर भी नहीं होती। इस सबब से, हरदम, सतसंगी अभ्यासी को उनकी दया का शुकराना वाजिब है। इसी तरह सिर्फ़ सतसंगी अभ्यासी के ही नहीं, बल्कि उसके प्यारों और नज़दीक के रिश्तेदारों के भी कर्म बहुत रियायत के साथ काटे जाते हैं कि जिससे उनको और सतसंगो अभ्यासी को बहुत कम तकलीफ़ व्यापती है और बहुत रफ़ाइयत यानी बचाव और सँभाल उन कर्मों के भुगताने में राधास्वामी दयाल अपनी दया से फ़रमाते हैं। ऐसी दया का हाल हर एक सतसंगी को मालूम भी नहीं होता यानी जताया नहीं जता है, लेकिन जो कोई अपने रोज़मर्रा के हाल और मन और इन्द्रियों की चाल और दया की सम्हाल की निरख-परख करते रहते हैं, उनको थोड़ा-बहुत हाल दया और रक्षा का मालूम होता रहता है और वे तहे-दिल से उनका शुक-राना बजा लाते हैं।

२८—प्रेमी सतसंगी को मुनासिब और लाज़िम है

कि जो वह भजन की तरक़्क़ी और रस चाहे, तो अपना संसारी व्यवहार और परमार्थी बर्ताव, दोनों को मुवाफ़िक़ हुक्म के, जिस क़दर बन सके, दुरुस्त करे और इस बात की होशियारी रक्खे कि जहाँ तक मुमकिन होवे उस के हाथ से अपने मतलब के लिये किसी को दुख और तकलीफ़ न पहुँचे, और आम तौर पर प्रीत और दया-भाव का बर्ताव सब के साथ रहे। जो लोग कि राज-दरबार में नौकरी करते हैं और वहाँ उनको लोगों को दंड और सजा देना पड़ता है या किसी के साथ नरमी और किसी के साथ सख़्ती से बर्ताव करना पड़ता है, तो मुवाफ़िक़ क़ानून के अमल-दरामद करने में कुछ मुजायक़ा नहीं है। लेकिन जो मुनासिब तौर पर थोड़ा दया का अंग उस बर्ताव में भी संग रहे तो बेहतर है।

२६—इसी तरह परमार्थ के बर्ताव में मुख्यता मालिक के चरणों में प्रीत और प्रतीत की है। बग़ैर इसके, न तो सरन दुरुस्त हो सक्ती है और न अभ्यास थोड़े-बहुत प्रेम के साथ बन सक्ता है। इस वास्ते हर एक काम में राधास्वामी दयाल की दया और मौज का आसरा रखना मुनासिब और ज़रूर है। और फ़िज़ूल तरंगों संसारी भोग और बिलास और नामवरी वग़ैरा से जहाँ तक बन सके, अपना बचाव रखना लाज़िम है कि जिससे अपने हिरदे में मलीनता न बढ़े और भजन में विघ्न वाक़ै न होवें।

३०—जो इन दो शब्दों का पाठ रोज़मर्रा थोड़ी होशियारी के साथ एक दफ़े नेम से कर लिया जावे, तो यक़ीन होता है कि राधास्वामी दयाल की दया से ग़फ़लत और भूल कम होवेगी, और बहुत से कामों में अहतियात बन आवेगी, और जो कोई कसर का काम, इत्तिफ़ाक़ से या अन-जाने बन पड़ेगा तो उसकी ख़बर जल्द हो जावेगी और पछताने और प्रार्थना करने से उसका नाक़िस असर जल्द दूर हो जावेगा और आइन्दा को होशियारी बढ़ती जावेगी। और इन शब्दों में जहाँ लफ़्ज़ 'गुरू' का आया है, उससे मतलब सिर्फ़ देह धारी गुरु से नहीं है, बल्कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल से है, यानी गुरु लफ़्ज़ से मतलब कुल्ल मालिक और नर स्वरूप गुरु से है। और वे दोनों शब्द यह हैं :—

शब्द १

चेतो मेरे प्यारे तेरे भले की कहूँ ॥ १ ॥
गुरु तो पूरा ढूंढ़ तेरे भले की कहूँ ॥ २ ॥
शब्द रता गुरु देख तेरे भले की कहूँ ॥ ३ ॥
तिस गुरु सेवा धार तेरे भले की कहूँ ॥ ४ ॥
गुरु चरनामृत पी तेरे भले की कहूँ ॥ ५ ॥
गुरु परशादी खाव तेरे भले की कहूँ ॥ ६ ॥
गुरु आरत कर ले तेरे भले की कहूँ ॥ ७ ॥
तन मन भेंट चढ़ाव तेरे भले की कहूँ ॥ ८ ॥
बचन गुरू का मान तेरे भले की कहूँ ॥ ९ ॥

गुरु को कर परसन्न तेरे भले की कहूँ ॥ १० ॥
नित्त भजन कर नेम तेरे भले की कहूँ ॥ ११ ॥
जीव दया तू पाल तेरे भले की कहूँ ॥ १२ ॥
दुक्ख न दे तू काय तेरे भले की कहूँ ॥ १३ ॥
बचन तान मत मार तेरे भले की कहूँ ॥ १४ ॥
कड़ुवा तू मत बोल तेरे भले की कहूँ ॥ १५ ॥
सब को सुख पहुँचाव तेरे भले की कहूँ ॥ १६ ॥
नाम अमी रस पीव तेरे भले की कहूँ ॥ १७ ॥
सील क्षमा चित राख तेरे भले की कहूँ ॥ १८ ॥
संतोष विवेक विचार तेरे भले की कहूँ ॥ १९ ॥
काम क्रोध को टार तेरे भले की कहूँ ॥ २० ॥
लोभ मोह को टार तेरे भले की कहूँ ॥ २१ ॥
दीन ग़रीबी धार तेरे भले की कहूँ ॥ २२ ॥
संतों से कर प्रीत तेरे भले की कहूँ ॥ २३ ॥
भोजन बहुत न खाव तेरे भले की कहूँ ॥ २४ ॥
सतसंग में तू जाग तेरे भले की कहूँ ॥ २५ ॥
मान बड़ाई छोड़ तेरे भले की कहूँ ॥ २६ ॥
भोग वासना जार तेरे भले की कहूँ ॥ २७ ॥
सम दम हिरदे धार तेरे भले की कहूँ ॥ २८ ॥
वैराग भक्ति ना छोड़ तेरे भले की कहूँ ॥ २९ ॥
गुरू स्वरूप धर ध्यान तेरे भले की कहूँ ॥ ३० ॥
गुरु ही का जप नाम तेरे भले की कहूँ ॥ ३१ ॥
गुरु अस्तुति कर नित्त तेरे भले की कहूँ ॥ ३२ ॥
गुरु से प्रेम बढ़ाव तेरे भले की कहूँ ॥ ३३ ॥
तीरथ मूरत भर्म तेरे भले की कहूँ ॥ ३४ ॥
ज़ात अभिमान बिसार तेरे भले की कहूँ ॥ ३५ ॥

पिछलों की तज टेक तेरे भले की कहूँ ॥ ३६ ॥
वक़्त गुरू को मान तेरे भले की कहूँ ॥ ३७ ॥
तीरथ गुरू के चरण तेरे भले की कहूँ ॥ ३८ ॥
गुरु की सेवा बर्त तेरे भले की कहूँ ॥ ३९ ॥
विद्या गुरु उपदेश तेरे भले की कहूँ ॥ ४० ॥
और विद्या पाखंड तेरे भले की कहूँ ॥ ४१ ॥
लीक पुरानी छोड़ तेरे भले की कहूँ ॥ ४२ ॥
जो गुरु कहें सो मान तेरे भले की कहूँ ॥ ४३ ॥
मारग ज्ञान न धार तेरे भले की कहूँ ॥ ४४ ॥
भक्ती पंथ सम्हार तेरे भले की कहूँ ॥ ४५ ॥
सुरत-शब्द मत ले तेरे भले की कहूँ ॥ ४६ ॥
सुरत चढ़ा नभ माहिं तेरे भले की कहूँ ॥ ४७ ॥
गगन त्रिकुटी जाव तेरे भले की कहूँ ॥ ४८ ॥
दसवें द्वार समाव तेरे भले की कहूँ ॥ ४९ ॥
भँवरगुफा चढ़ आव तेरे भले की कहूँ ॥ ५० ॥
सत्तलोक धस जाव तेरे भले की कहूँ ॥ ५१ ॥
अलख अगम को पाव तेरे भले की कहूँ ॥ ५२ ॥
राधास्वामी नाम धियाव तेरे भले की कहूँ ॥ ५३ ॥
भटक अटक सब तोड़ तेरे भले की कहूँ ॥ ५४ ॥
टेक पक्ष गुरु बाँध तेरे भले की कहूँ ॥ ५५ ॥

शब्द २

गुरू की मौज रहो तुम धार ।
गुरू की रज़ा सम्हालो यार ॥ १ ॥

गुरू जो करें सो हित कर जान ।
गुरू जो कहें सो चित धर मान ॥ २ ॥

शुकर की करना समझ विचार ।
सुक्ख दुख देंगे हिकमत धार ॥ ३ ॥

ताड़ और मार करें सोई प्यार ।
भोग सब इन्द्री रोग निहार ॥ ४ ॥

कहूँ क्या दम दम शुकर गुज़ार ।
बिना उन और न करने हार ॥ ५ ॥

दुखी चित से न हो दुख लार ।
सुखी होना नहीं सुख जार ॥ ६ ॥

बिसारो मत उन्हें हर बार ।
दुक्ख और सुक्ख रहो उन धार ॥ ७ ॥

गुरू और शब्द यह दोउ मीत ।
नहीं कोइ और इन धर चीत ॥ ८ ॥

यही सतपुर्ष यही करतार ।
लगावें तोहि इक दिन पार ॥ ९ ॥

बिना उन कोई नहीं संसार ।
देव मन सूरत उन पर वार ॥ १० ॥

करें वह नित्त तेरी सार ।
तेरे तन मन के हैं रखवार ॥ ११ ॥

शुकर कर राख हिरदे धार ।
मिटावें दुक्ख सब हो झाड़ ॥ १२ ॥

करें क्या मन तेरा नाकार ॥
नहीं तू छोड़ता विष धार ॥ १३ ॥

भोग में गिरे बारम्बार ।
न माने कहन उनकी सार ॥ १४ ॥

इसी से मिले तुझ को दंड।
नहीं तू मानता मति मन्द ॥ १५ ॥

सहो अब पड़े जैसी आय।
करो फ़र्याद गुरू से जाय ॥ १६ ॥

पकड़ फिर उनहीं को तू धाय।
करेंगे वोही तेरी सहाय ॥ १७ ॥

बिना उन और नहीं दरबार।
रहो उन चरण में हुशियार ॥ १८ ॥

गुनह तुम किये दिन और रात।
गुरू की कुछ न मानी बात ॥ १९ ॥

इसी से भोगते दुख घात।
बचावेंगे वोही फिर तात ॥ २० ॥

रहो राधास्वामी के तुम साथ।
लगे फिर शब्द अगम तुभ हाथ ॥ २१ ॥

बचन ४

शब्द की महिमा और हर जगह रचना में उसकी कार्रवाई का वर्णन, और यह कि उसी के वसीले से जीव का सच्चा और पूरा उद्धार संत सतगुरु की दया से मुमकिन है। और किसी तरह से धुर पद में पहुँचना और जनम-मरन से सच्चा छुटकारा मुमकिन नहीं है।

१—इस दुनिया में जो नज़र-ए-ग़ौर से देखा जाता है तो मालूम होता है कि कुल्ल कार्रवाई सुरत चैतन्य की है जो एक पिंड में बैठ कर उस पिंड की सम्हाल और भी दुनिया का कारज और व्यवहार कर रही है।

२—हरचंद जीवों की चाह और प्रतीत अनेक क़िस्म के जड़ पदार्थों में, जैसे खाने-पीने, पहिरने-ओढ़ने और आरायश (सजावट) और नुमायश (दिखावट) के सामान वग़ैरा में है, लेकिन मुख्यता सब की चैतन्य स्वरूपों में है यानी सुरत-चैतन्य से सब कोई प्रीत करते हैं और इनमें से विशेष चैतन्य यानी मनुष्य स्वरूप में अधिक भाव और प्यार किया जाता है, यानी उसी का अदब और हुक्म-बरदारी और उसी से अपनी बहुत सी कार्रवाई में मदद का आशा रखते हैं और उसी को सब से बड़ा (जैसे बादशाह और महाराजा वग़ैरा) समझ कर, उसकी निहायत दरजे की ताबेदारी करते हैं और इसी मनुष्य स्वरूप में (जैसे स्त्री और पुत्र और दोस्त) निहायत दरजे की मुहब्बत करते हैं।

३—जड़ पदार्थों में, और सिवाय मनुष्य शरीर के और जानदारों में, प्रीत कारज-मात्र होती है, यानी जो काम उनसे निकलता है या उनसे लेना है या उनके वसीले से बनता है, उसी मुवाफ़िक़ उन पदार्थों और जानदारों की

ख़ातिरदारी और सम्हाल और रक्षा की जाती है, लेकिन मनुष्य स्वरूप में प्रीत भी जैसा २ मौक़ा होता है, गहरी की जाती है, और मन में उसका भय और भाव भी ज़्यादा रहता है, और जहाँ कोई अपने से बड़ा या बहुतेरों से बड़ा शुमार किया जाता है, उसकी हुकुम-बरदारी और रज़ा-मन्दी का बहुत भारी ख़्याल दिल में रहता है ।

४—अब ख़्याल करो कि जो आम जानदार हैं और मनुष्य स्वरूप, चैतन्य का निज रूप कहा है, जो ग़ौर किया जाय तो मालूम होगा कि इन सब का निज रूप शब्द स्वरूप है यानी शब्द उस चैतन्य सुरत का जो इन सब में मौजूद है, सिर्फ़ ज़हूरा ही नहीं बल्कि निशान और सबूत सुरत चैतन्य की मौजूदगी का है, तो इससे साबित हुआ कि सुरत चैतन्य जो जौहर है और कुल्ल पिंड का जिस में वह आन कर बैठी है, मुतहर्रिक यानी प्रेरक है । उसका ज़ाहिरी रूप शब्द है । और सब कोई शब्द को ही मान रहे हैं और शब्द ही की सेवा और ख़ातिरदारी और हुकुम बरदारी कर रहे हैं और शब्द ही के साथ प्रीत और शब्द ही का भय और भाव कर रहे हैं और शब्द ही के वसीले से आराम और तकलीफ़ पाते हैं और शब्द ही के संयोग और वियोग में सुखी-दुखी होते हैं ।

५—खुलासा यह है कि इस रचना में कुल्ल कार्रवाई

शब्द की है। यानी जितने काम कि हो रहे हैं या जारी किये जाते हैं, सब शब्द के वसीले से होते हैं और शब्द ही उन सब का करता है। यानी जितने इल्म और हुनर और कारीगरी और सब तरह का सामान और असबाब और कलें वग़ैरा जो दुनिया में मौजूद हैं, सब शब्द स्वरूपी सुरत-चैतन्य के बनाये हुये और पैदा किये हूये हैं। और जाहिरी सम्हाल और इन्तिज़ाम इस दुनिया का शब्द स्वरूपी चैतन्य सुरतें कर रही हैं और असल में उसी शब्द स्वरूप को सब मान रहे हैं और आप भी सब जानदार शब्द स्वरूप हैं।

६—अब समझना चाहिये कि जैसे इस लोक की रचना में शब्द की ही मुख्यता है और कुल्ल कार्रवाई उसी के आसरे चल रही है, ऐसे ही ऊँचे लोकों में, बल्कि कुल्ल रचना में भी शब्द स्वरूपी चैतन्य के वसीले से कुल्ल कार्रवाई हो रही है। और जहाँ जिस का मेला होता है या हो रहा है, शब्द स्वरूप के ही वसीले से होता है। और कुल्ल चैतन्य-रचना शब्द स्वरूप है और सर्व शक्ति और ज्ञान और समर्थता, उसी शब्द स्वरूप में धरी हुई है और शब्द ही कुल्ल रचना का जौहर और करतार और रक्षक है।

७—जो कि हर एक लोक और कुल्ल रचना में शब्द स्वरूपी सुरत-चैतन्य की ही कार्रवाई है और यह मुवाफ़िक़

रूपों यानी पिंडों के बे-शुमार हैं, तो जो कि इन सब का भंडार है यानी जहाँ से कि सब आई हैं, वह सर्व-समर्थ और सर्व-ज्ञानी और सर्व-करता और सर्व-रक्षक हुआ। उसको संत कुल्ल-मलिक राधास्वामी दयाल कहते हैं और जो कि सर्व सुख और आनन्द और रस सुरत-चैतन्य की धार के वसीले से हासिल होते हैं, तो वही कुल्ल-मालिक सर्व-सुख और सर्व-आनन्द और सर्व-रसों का भंडार हुआ, और सब सुरतें जहाँ २ जैसे २ पिंड में बैठ कर कार्रवाई कर रही हैं, वे उस कुल्ल-मालिक की जिसको महा सिंध और महा सूरज कहना चाहिये, बूँदें और किरनें हैं। इस वास्ते उनका ज्ञान और शक्ति और समर्थता और आनन्द भी अल्पज्ञ यानी थोड़ा है और वह कुल्ल-मालिक इन सब बातों का अथाह और अपार ख़ज़ाना और भंडार है।

८—अब जो कोई सुरत-चैतन्य इस हक़ीक़त को समझ कर चाहे कि परम आनन्द और पूरन सुख और परम ज्ञान को प्राप्त होवे और रूप यानी पिंड की तकलीफ़ों और उसके वक़्तन-फ़वक़्तन भाव और अभाव यानी जनम, मरन के दुख-सुख से बच जावे, तो उसको चाहिये कि चैतन्य धार को, जो कि शब्द की डोरी है, पकड़ कर, अपने भंडार यानी कुल्ल-मालिक के चरणों की तरफ़ चलना शुरू करे, तो आहिस्ता २ एक दिन धुर पद में पहुँच कर अपना

काम पूरा बना लेगी। और इस शब्द की डोरी पकड़ कर चलने की जुगत, संत सतगुरु से, जो धुर धाम के भेदी हैं और आप रास्ता तै करके यानी शब्द की धार पर सवार होकर वहाँ पहुँचते हैं या साध गुरू से जिन्होंने संत सतगुरु से मिल कर और भेद और जुगत चलने की उनसे लेकर कुछ रास्ता तै किया है और आगे चल रहे हैं और पहुँचनहार है, हासिल होगी ॥

६—उस कुल्ल-मालिक को अरूप और अपार और अनन्त कहते हैं और उससे जो शब्द की धार आदि में प्रगट हुई, उसी ने नीचे उतर कर किसी स्थान पर रंग, रूप और रेखा धारन की और फिर वहाँ से नीचे रूपवान रचना होती चली आई और ज़्यादा नीचे उतर कर रूपों में विचित्रता यानी अनेक क़िस्में इस क़दर हो गईं कि जिनका ब-ख़ूबी शुमार नहीं हो सका। अब जो कोई रूप-धारी है और इस तरफ़ से निज धाम की तरफ़ चलना और वहाँ पहुँचना चाहे, तो दरजे-ब-दरजे रूपों के आसरे आसानी से शब्द की धार पर सवार होकर रास्ता तै कर सकता है। और इस रूप से मतलब उस स्वरूप से है कि जो हर एक दरजे या मंडल में उस मंडल और नीचे की रचना का धनी और मालिक है। इस तरह एक मंडल से दूसरे मंडल में चढ़ाई यानी पहुँचना मुमकिन है और जब आख़िरी

स्वरूप के मंडल में पहुँच जावेगा, तब वही स्वरूप, अरूप पद को लखावेगा और उसमें पहुँचावेगा।

१०—जो कि अरूप पद अथाह और अपार है और वह ऊँचे से ऊँचे या गहरे से गहरे देश में विराजमान है, और उसके नीचे या बाहर की तरफ़ किसी स्थान से रूपवान रचना शुरू होकर दूर तक बढ़ती और फैलती गई है और वह अरूप चैतन्य, स्वरूपों में गुप्त होकर, सब जगह मौजूद है और शब्द स्वरूप से सब जगह प्रकट हो रहा है, इस वास्ते जो कोई नीचे या दूर की रचना से इरादा पहुँचने अरूप पद का करे, तो जब तक वह शब्द को पकड़ कर जितने परदे या स्वरूप जो बीच में हायल हैं, उनसे मिलकर रास्ता तै करता हुआ न चलेगा, तब तक उस कुल्ल-मालिक से जो कि अरूप और अपार और अनन्त है, नहीं मिल सक्ता, और न उस पद में और किसी तरह से पहुँच सक्ता है।

११—जिन लोगों ने कि कुल्ल-मालिक के अरूप और स्वरूप की महिमा सुन कर और स्वरूप का हद्-दार और एक-देशी होना समझ कर उसका निरादर किया, और अरूप में ही एक दम पहुँचने का इरादा करके किसी क़िस्म का जतन शुरु किया, तो उन्होंने धोखा खाया और जिस देश में कि वे रूप धर कर पैदा हुए, उसी मंडल के स्वरूप

के पीछे जो अरूप है, उस में समाये और वह अरूप माया के ग़िलाफ़ से ढका हुआ है, यानी उसी में से सब रचना का मसाला जो उस मंडल में हो रही है, निकलता है। इस वास्ते जो सुरतें कि इस अरूप में समाईं, वे देर या अबेर फिर देह धर कर प्रगट यानी पैदा होती हैं। इसी तरह जहाँ तक कि रूपवान रचना है, वहाँ के स्वरूप और अरूप में थोड़ी-बहुत माया, चाहे लतीफ़ है या कसीफ़, खोल या ग़िलाफ़ होकर, मिली है और निर्मल अरूप सिर्फ़ निर्माया देश में प्रकट है और बाक़ी सब जगह जैसा कि ऊपर कहा गया, थोड़ी या बहुत लतीफ़ या कसीफ़ माया से ढका हुआ है।

१२—खुलासा यह कि जब तक कोई एक मंडल के स्वरूप से दूसरे मंडल के स्वरूप तक, और इसी तरह से सब मंडलों को जहाँ जहाँ स्वरूप मौजूद है, तै करके यानी कुल्ल माया के घेर के पार न पहुँचेगा, तब तक सच्चे अरूप का दर्शन नहीं पावेगा। इस वास्ते जिन्होंने अरूप को सर्व-व्यापक मान कर जिस मंडल में कि वह पैदा हुए, वहीं के रूप का अभाव करके अरूप में समाये, तो वे उस परदे में रहे जहाँ से कि रचना उस मंडल को जारी है और। इस सबब से जनम-मरन से उनका छुटकारा नहीं हुआ और इस वास्ते उनका सच्चा उद्धार भी नहीं हुआ। जितने ज्ञानी और सूफ़ी और वेदान्ती और फ़ैलसूफ़ हुए या अब

मौजूद हैं, उन सब का यही हाल समझना चाहिये । और उनका यही मत है कि जहाँ वे हैं, वहाँ के नाम-रूप को मायक और मिथ्या समझ कर और उसकी तरफ़ से चित्त को हटा कर, वहीं के अरूप में जोड़ते हैं और उसी को सिद्ध करते हैं और उसी को आत्मा यानी अपना स्वरूप कहते हैं और परमात्मा यानी कुल्ल-मालिक से उसकी एकता करते हैं ।

१३—यह बात अब ज़्यादा खोल कर कही जाती है कि असली अरूप पद से जो आदि धार आई, वही सब रचना की करता है, और उसी से अरूपी और स्वरूपी पद और सूक्षम और स्थूल रूपवान रचना दरजे-बदरजे उतार होकर पैदा हुई । और हरचंद वह असली अरूपी चैतन्य सब जगह मौजूद है, पर सिवाय निज धाम के और सब जगह दरजे-बदरजे ग़िलाफ़ों से ढका हुआ है । सो जब तक कि कोई नीचे के दरजे के अभ्यास करके, निज मुक़ाम तक नहीं पहुँचेगा, तब तक उसको निज स्वरूप यानी असली अरूपी चैतन्य स्वरूप का दर्शन किसी जगह नहीं हो सक्ता । इस सबब से जिन्होंने कि प्रथम ही नाम और रूप का निरादर करके अरूप की तरफ़ लगना चाहा, उन्होंने बहुत धोखा खाया कि जहाँ वे थे वहीं के ग़िलाफ़ी अरूप में समाये और जनम-मरन के चक्कर से उनका बचाव नहीं हुआ, यानी उनका सच्चा उद्धार नहीं हुआ,

क्योंकि जिस सिलसिले से ऊपर से नीचे तक की रचना होती चली आई, उसी सिलसिले से उलटना यानी चढ़ाई मुमकिन है, और तरह से काम दुरुस्त और पूरा नहीं बन सक्ता।

१४—देखो इस लोक की ही रचना में सब में उत्तम स्वरूप मनुष्य का है। और नीचे की रचना में इसी के स्वरूप का ख़ाका यानी आकार कमी-बेशी यानी कुछ २ फ़र्क़ के साथ पशु और पखेरू और कीड़े-मकोड़े वग़ैरा में चला गया है। अब दरियाफ़्त करना चाहिये कि यह मनुष्य के आकार का उतार किस स्थान से हुआ है यानी आदि स्वरूप कहाँ है और कितने दरजे बीच में हैं। सो जब तक ये दरजे तै करके कोई आदि स्वरूप के स्थान तक न पहुँचेगा, तब तक असली अरूपी पद में उनका पहुँचना मुमकिन नहीं है।

१५—ख़ुलासा यह कि जो कोई रूपवान रचना के मंडल में है, वह जब तक कि कुल्ल रूपवान रचना के मंडल जो उस के ऊपर यानी सूक्षम से सूक्षम हैं, तै न करेगा, तब तक उस पद में जहाँ से कि प्रथम रुप प्रगट हुआ, नहीं पहुँच सक्ता। इस वास्ते हर एक शख़्स को चाहिये कि जो नाम और रूप के मुक़ाम से हट कर अनाम और अरूप से मिलना चाहे तो भेद रास्ते और मंज़िलों का और जुगत चलने की, भेदी से दरियाफ़्त करके, चलना और चढ़ना शुरू करे, तो

एक दिन वह निज घर में पहुँच जावेगा। और जो कहते हैं कि असली अरूप चैतन्य हर जगह मौजूद है और जो परदे कि बीच में उसके और इस शख़्स के स्थान यानी बैठक के हायल हैं, वे उनसे बे ख़बर हैं और न जुगत उनके फोड़ने यानी तै करने की जानते हैं और चलने-चढ़ने को भरम मानते हैं, वे भारी भूल और मूर्खता में पड़े हुये हैं। उनका छुटकारा यानी सच्चा उद्धार कभी नहीं होवेगा।

१६—मालूम होवे कि ऊँचे से नीचे देश तक जो कुछ कि लतीफ़ और कसीफ़ यानी सूक्षम और स्थूल रचना हुई, वह जगह २ असली मौजूद है। इसमें कुछ शक नहीं कि जो रचना माया के घेर में है, वह हमेशा बदलती रहती है और नाशमान है। लेकिन जब तक कि उस रचना का सिलसिला क़ायम है, जो जीव कि उस रचना में पैदा हुये हैं, वे वहाँ के भोगों और पदार्थों में और तन-मन और इन्द्रियों के संग हमेशा बँधे रहेंगे और जनम-मरन के चक्कर में दुख भोगते रहेंगे, जब तक कि वे उस माया की रचना के घेर से बाहर न जावेंगे।

१७—जो कोई कहे कि हमने सब भेद रचना का समझ लिया और माया और उसके भोग और पदार्थ, और भी उस रचना को जो उसके घेर में हुई है, मिथ्या जान कर अपना निज रूप असली अरूपी चैतन्य समझ लिया

तो ऐसे जानने और समझने से माया के घेर से पार होना मुमकिन नहीं है। यह समझ-बूझ लेकर उसको मुनासिब है कि जैसे निर्मल सुरत-चैतन्य की धार माया के घेर में उतर कर और ग़िलाफ़ों के अन्दर बैठ कर, मन और इन्द्रियों के वसीले से इस लोक में कार्रवाई कर रही है, उसको उसी तरह अभ्यास करके, हर एक परदे को फोड़ कर, उलटावे और माया के मंडल के पार पहुँचावे, क्योंकि बिना भेद और अभ्यास के, यह परदे फूट नहीं सक्ते और न सुरत अपने निज घर की तरफ़ उलट सक्ती।

१८—और जिन लोगों ने स्वरूप की महिमा समझ कर उसकी उपासना की ज़रूरत, वास्ते पहुँचने असली अरुप पद, क़रार दी, लेकिन बजाय दरियाफ़्त करने भेद असली स्वरूप या स्वरूपों के, जो रास्ते में हर एक मंडल में वाक़ै हैं, किसी एक या दो स्थान के स्वरुप की या उस पद के औतारों के स्वरूप की नक़ल, पत्थर या धात की बना कर, उसी की पूजा में अटक रहे और असली स्वरूप का भेद और उसके स्थान और उसमें पहुँचने की जुगत का खोज करके जतन न किया, वे भी जहाँ के तहाँ रहे और एक क़दम भी रास्ता तै न किया। इस सबब से उन का भी उद्धार नहीं हुआ।

१९—इसी तरह कुल्ल जीव भूल और भरम और

ग़लती में पड़ गये, और रास्ता सच्चे उद्धार का बन्द हो गया। और बाज़े जीव तन और मन या और २ स्थूल अंगों की सफ़ाई के जतन में जो कि सिर्फ़ संजम थे, और निज घर का रास्ता तै करने की जुगत उनमें नहीं थी, लग गये। और हरचंद कि उन्होंने तकलीफ़ और काष्टा बहुत उठाई, पर जीव के सच्चे उद्धार की करनी उनसे कुछ न बनी, बल्कि और उलटे अहंकारी और रोज़गारी हो गये।

२०—ऐसी हालत जगत की देख कर, कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल, जीवों पर अति दया करके, संत सतगुरु रूप धार कर प्रगट हुये और कुल्ल भेद रास्ते का और हर एक स्थान के स्वरूप का और तरीक़ा चलने का, निहायत सहज करके जो कि लड़का, जवान, बूढ़ा और औरत और मर्द आसानी से कमा सक्ते हैं, आम तौर पर समझाया और सच्चे उद्धार का रास्ता जारी किया। अब जो कोई उसके मुवाफ़िक़ कार्रवाई करे, वह हर एक मंडल के स्वरूपी और अरूपी मालिक का दर्शन करता हुआ, धुर अरूप पद में पहुँच कर, पूरण और अमर आनन्द को प्राप्त हो सक्ता है और जनम-मरन की फाँसी सहज में काट कर, अपना सच्चा उद्धार हासिल कर सक्ता है।

२१—इस कार्रवाई के अंजाम देने के लिये, सिर्फ़ संत सतगुरु या साध गुरू का मिलना और उनसे उपदेश

लेकर, राधास्वामी दयाल की दया और मेहर के बल से प्रेम अङ्ग लेकर अभ्यास करना दरकार है। फिर आहिस्ता आहिस्ता अपने मन और सुरत की चढ़ाई ऊँचे देशों में और अपना सच्चा निरवाह होता हुआ, अभ्यासी जीव आप देख सकता है, और आहिस्ता २ कार्रवाई करके आसानी के साथ एक दिन धुर पद में पहुँच सक्ता है।

२२—इस जगह इस क़दर बयान करना ज़रूर है कि संतों ने कुल्ल रचना के तीन दरजे मुक़र्रर किये। अव्वल दरजा निर्मल चैतन्य यानी दयाल देश जहाँ माया बिल्कुल नहीं है और जहाँ कुल्ल रचना रुहानी यानी सुरत चैतन्य की है। दूसरा, निर्मल चैतन्य और शुद्ध माया देश, जहाँ माया प्रगट हुई और जहाँ ब्रह्माँडी रचना यानी ब्रह्म सृष्टि है। तीसरा दरजा, जहाँ निर्मल चैतन्य और मलीन माया है और जहाँ देवता और मनुष्य और चार खान की स्थूल रचना है। जो रूपवान रचना दूसरे या तीसरे दरजे में है, उसका अबेर-सबेर अभाव यानी नाश होगा, और इस वास्ते वह दरजा क़ाबिल ठहरने अभ्यासी जीव के, जो सच्चा उद्धार चाहता है, नहीं है, क्योंकि वहाँ ठहरने में चाहे वह ठहराव स्वरूप के आसरे होय या अरूप में मिल कर होवे, हमेशा क़ायम नहीं रह सक्ता, यानी कुछ अर्से बाद फिर उत्थान होकर जनम लेना पड़ेगा और देह

धारन करनी पड़ेगी और उसके साथ दुख-सुख जो लाज़मी हैं, सहने पड़ेंगे। इस वास्ते राधास्वामी दयाल ने फ़रमाया है, और कुल्ल संतों का भी यही मत है, कि जब तक सुरत यानी जीव निर्मल चैतन्य देश, सत्त पुरुष राधास्वामी पद में न पहुँचेगी, तब तक पूरा उद्धार नहीं होगा यानी जनम-मरम नहीं छूटेगा।

२३—इस वास्ते प्रेमी सतसंगी को मुनासिब है कि मुवाफ़िक़ हुक्म कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के, भक्ति अंग लेकर, हर एक स्थान के स्वरूप की (जो दूसरे दरजे में वाक़े हैं) उपासना यानी ध्यान करता हुआ, शब्द की धार यानी डोरी को पकड़ कर चलना शुरू करे, तब दयाल देश में पहुँचना मुमकिन है। और अगर पहिले ही से अरूप और अशब्दी स्वरूप मालिक से मिलने का इरादा करके और उसको हर जगह मौजूद यानी सर्व व्यापक मान कर कुछ अभ्यास करेगा या सिर्फ़ समझौती लेकर अपने तईं पहुँचा हुआ ख़्याल करेगा (जैसे कि विद्यावान और वाचक ज्ञानी करते हैं) तो वह जहाँ का तहाँ यानी माया के पेट में, जहाँ कि हर दम रचना होती है और बिगड़ती है, पड़ा रहेगा और जमन-मरन के बन्धन में गिरफ़्तार रहेगा यानी उसका सच्चा उद्धार हरगिज़ नहीं होवेगा।

२४—अव्वल दरजे यानी निर्मल चैतन्य देश में भी

चंद स्थान यानी मंडल हैं । और सिवाय सबसे ऊँचे के पद के जो अनन्त और अपार और अगाध है, बाक़ी के मंडलों में रचना है । लेकिन वह रचना हंसों की ऐन रूहानी है यानी वहाँ माया की मिलौनी और मलीनता जिस्मानी नहीं है । इस वास्ते वह रचना अमर और अजर और ऐन आनन्द स्वरूप है, और काल-क्लेश और किसी क़िस्म का कष्ट और दुख वहाँ नहीं है। वहाँ निहायत सूक्ष्म से सूक्ष्म रूप है, पर वह असल में दूसरे दरजे के अरूप से भी ज़्यादा सूक्ष्म है ।और रूप का लफ़्ज़ उसकी निस्बत कहना सिर्फ़ समझाने के वास्ते यानी कहने मात्र है । सो जब प्रेमी सतसंगी दूसरे दरजे को तै करके आगे बढ़ेगा, तो उसका रूप भी वैसा ही सूक्ष्म से सूक्ष्म रूहानी स्वरूप हो जावेगा, और उसी रूहानी स्वरूप से अव्वल दरजे के स्वरूपों से, जो असल में नीचे अरूप से ज़्यादा अरुप हैं, मिलेगा । इस तरह पर राधास्वामी मत में प्रेम भक्ति दयाल देश यानी अव्वल दरजे तक जारी रहेगी । और उसको "भेद भक्ति" कहते हैं यानी स्वामी-सेवक का भाव बराबर जारी रहेगा । और जब धुर पद यानी असली अरूप से मिलेगा, तब उसको "अभेद भक्ति" कहते हैं । और वहाँ पहुँचने पर प्रेमी अभ्यासी को ऐसी ताक़त हासिल हो जावेगी कि जब चाहे जब अरूप पद में मिल कर अभेद हो जावे, और जब चाहे जब उससे न्यारा

होकर उसके दर्शन का आनन्द और बिलास करे। ऐसी भारी गति राधास्वामी मत के प्रेमी अभ्यासी को हासिल हो सक्ती है। यह ताक़त, और किसी मत के अभ्यासी को, नीचे के दरजों में जहाँ कि वे अरूप में लै हो गये, कभी हासिल नहीं हुई और न जब तक कि राधास्वामी दयाल की जुक्ति लेकर अभ्यास करें, हासिल हो सक्ती है।

२५—इस क़दर भारी महिमा राधास्वामी यानी संत मत की और उसके उपदेश सुरत-शब्द मार्ग की है कि जिसको अब तक यानी पिछले वक़्तों में किसी ने न जाना, और न अब इस वक़्त में कोई बग़ैर दया और सतसंग संत सतगुरु या साधगुरु या उनके मेली प्रेमी सतसंगी के, जान और समझ सक्ता है। ऐसा आसान मार्ग आज तक किसी ने प्रगट नहीं किया। और हक़ीक़त में किस की ऐसी ताक़त हो सक्ती है कि सिवाय कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के इस उपदेश को जारी करता ? और अब भी बावजूदे कि निहायत दरजे की आसानी इस अभ्यास में रखी गई है और ऊँचे से ऊँचे और गहरे से गहरे पद का भेद और रास्ते की मंज़िलों का हाल, जो किसी को मालूम नहीं हुआ, खोल कर प्रघट किया गया है,लेकिन बिना दया राधास्वामी दयाल के किसी की ताक़त नहीं कि उस अभ्यास को कर सके या उस रास्ते पर चल सके। वही जीव बड़-

भागी हैं कि जिन को राधास्वामी मत का उपदेश और रास्ते का भेद मिल गया है और राधास्वामी दयाल की दया का बल लेकर, उस की कमाई में लगे हुए हैं और दिन २ अपनी हालत बदलती हुई और माया के घेर से अपना निरवार होता हुआ देखते जाते हैं और प्रीत और प्रतीत चरणों में बढ़ाते हुए, आहिस्ता २ रास्ता तै करते जाते हैं। वे ही एक दिन धुर पद में पहुँच कर परम आनंद को प्राप्त होकर अमर और अजर हो जावेंगे और अपने सच्चे मालिक और सच्चे माता-पिता राधास्वामी दयाल के दर्शन का आनन्द और विलास देख कर अपने निज भागों को सरहावेंगे।

२६—जो कोई अपनी नर देह,जो कि निहायत दुर्लभ और अनेक जनम नीच-ऊँच जोनों में धारन करके प्राप्त हुई है, सुफल करना चाहे, यानी इसी देह में अपना सच्चा उद्धार होता हुआ देखना चाहे और धुर पद में, जिस का भेद किसी मत में नहीं है, पहुँच कर जनम-मरन से सच्चा छुटकारा चाहे, उसको चाहिए कि राधास्वामी मत में शामिल होकर सुरत-शब्द मार्ग का अभ्यास विरह और प्रेम अंग लेकर शुरू करे। तब चौरासी के चक्कर से उसका सच्चा बचाव हो जावेगा और एक दिन अपने निज घर में पहुँच कर कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का दर्शन पाकर परम आनंद को प्राप्त होगा।

बचन महात्माओं के

(१)

अगर्चे मन में अनेक तरंगें और गुनावनें उठती रहती हैं और उनका रोकना और समेटना एक-बारगी बहुत मुश्किल है, मगर बराबर रोज़-मर्रा अभ्यास करने से कोई दिन में मन किसी क़द्र सिमट आवेगा और तरंगें और गुनावनें बे-फ़ायदा नहीं उठेंगी। इस वास्ते अभ्यास बिला नाग़ा नेम से, हर रोज़ करना चाहिये। अगर फ़ुर्सत नहीं मिले तो ग़ैर-ज़रूरी काम मुलतवी करदे, मगर अपना नित्त का अभ्यास न छोड़े यानी थोड़ी देर भजन और ध्यान रोज़-मर्रा ज़रूर करता रहे।

(२)

जो सेवक कि किसी से ईर्षा और विरोध नहीं रखता और सब से मित्र भाव और नम्रता के संग बर्तता है, और किसी शख़्स या चीज़ में उसके मन की पकड़ नहीं है और मन का अहँकार और मान जिसने बिलकुल छोड़ दिया है या छोड़ता जाता है और आराम और मेहनत जिसके नज़दीक बराबर हैं और क्षमा यानी बरदाश्त और सब्र करना जिसकी आदत में दाख़िल है और हमेशा मालिक के चरणों में मिलने की जिसके दिल में अभिलाषा रहती है और मन को जिसने ज़ेर किया है यानी थोड़ा-बहुत क़ाबू

में लाया है और सच्चे मालिक के चरणों में जिसकी प्रतीत दृढ़ और मज़बूत है और मन और बुद्धि दोनों को मालिक के चरणों पर नौछावर कर दिया है, ऐसा सेवक मालिक का निज प्यारा है।

(३)

जब तक धुर की दया न होगी पूरे सतगुरु नहीं मिलेंगे। पूरे सतगुरु एक फल-दार दरख़्त के मुवाफ़िक़ हैं कि फल भी देते हैं और साया भी करते हैं। जिस ज़मीन में ऐसा दरख़्त न हो, वह ज़मीन ऊसर है। वहाँ नहीं रहना चाहिये।

(४)

पूरे सतगुरु जो तवज्जह न करें, तो भी उनका संग नहीं छोड़ना चाहिये। जो सतगुरु दूसरे शख़्स से बात करें तो इसको यही समझना चाहिये कि मुझ से बोल रहे हैं। और उस बचन को अपने हिरदे में लिख ले क्योंकि ऐसे सतगुरु का सतसंग महा दुर्लभ है। अगर यह बराबर उनका सतसंग करता रहेगा तो एक दिन अजर और अमर देश में बासा पावेगा।

(५)

परमार्थ का हासिल होना बग़ैर सतगुरु के मुमकिन नहीं है। पर सेवक भी अधिकारी होना चाहिये कि उन के

बचन को चित्त देकर सुने और निर्मल बुद्धि से समझे और उसके मुवाफ़िक़ थोड़ी-बहुत करनी करे।

(६)

मालिक का तख़्त अंतर में है। जो कोई मालिक का अपने अंतर में खोज करेगा, उसे मालिक का दर्शन प्राप्त होगा और जो कोई बाहर ढूंढ़ता फिरेगा, उसे मालिक हरगिज़-हरगिज़ नहीं मिलेगा। इसकी मिसाल ऐसी है कि बग़ल में लड़का और शहर में ढँढोरा।

(७)

मन की ख़ासियत है कि जो काम शौक़ से करता है, उस का रूप हो जाता है। इस वास्ते चाहिये कि सिवाय मालिक के, किसी चीज़ में सच्ची प्रीत न करे।

(८)

सवाल व जवाब

(१) सवाल—सतगुरु से क्या माँगना चाहिये ?
जवाब—भक्ति और प्रेम मालिक के चरणों का।

(१) सवाल—सतगुरु के संग क्या फ़र्ज़ है ?
जवाब—उनके हुक्म में चलना।

(३) उम्र क्योंकर गुज़राननी चाहिये ?
जवाब—मालिक की याद में, और जहाँ तक मुमकिन होवे, सब को राज़ी रखिये, क्योंकि मालिक का बचन

है कि जो कोई मेरे जीवों को राज़ी रखता है, मैं उस से राज़ी रहता हूँ।

(४) सवाल—आदमी को कौन काम करना बेहतर है ?

जवाब—परमार्थ का कमाना।

(५) सवाल—परमार्थ से क्या फल मिलता है ?

जवाब—पशु से आदमी और आदमी से देवता बन जाता है। इससे ज़्यादा और बहुत बड़े दर्जे हैं, फिर वे हासिल होते हैं। ग़रज़ कि रफ़्ता२ मालिक के सन्मुख पहुँच कर उसका निज प्यारा हो जाता है।

(६) सवाल—सच्चे मालिक की क्योंकर पहिचान हो सक्ती है ?

जवाब—संतों की शरन लेने और उनकी जुगत के अभ्यास से।

(७) सवाल—दुनिया किस को कहते हैं।

जवाब—जो अंत में काम न आवे और मालिक की तरफ़ से बे-मुख रक्खे।

(८) सवाल- मालिक की प्रसन्नता क्योंकर हासिल हो सकती है ?

जवाब—सतगुरु की प्रसन्नता से।

(९) सवाल—सतगुरु की प्रसन्नता कैसे हासिल हो सकती है ?

जवाब—उनके चरणों में गहरी प्रीति और प्रतीत करने से, और जहाँ तक मुमकिन होवे, उनकी आज्ञा में बर्तने से, और उनकी सेवा में तन, मन, धन का सोच-विचार न करे ।

(१०) सवाल—सब कामों से बेहतर कौन काम है ?

जवाब—सतसंग करना और भजन करना और उससे फ़ायदा उठाना ।

(११) सवाल—सब कामों में बुरा काम कौनसा है ?

जवाब—मालिक को भूलना और धन और भोगों की चाह उठाना ।

(१२) सवाल—सेवक किसको कहते हैं ?

जवाब—जो अपने तईं सबसे नीच और छोटा जाने ।

कड़ी

दीन हीन जानो अपने को ।
निपट नीच मानो अपने को ॥

और मालिक के चरणों के प्रेम में लौलीन रहे ।

(१३) सवाल—यह सिफ़त क्योंकर हासिल हो सक्ती है ?

जवाब—संत सतगुरु और साध के सतसंग और दया से, पर जो कोई सच्चा होकर लगे।

(१४) सवाल—जीव मालिक की याद में क्यों कर लग सकता है ?

जवाब—मौत की याद रखने और चौरासी के डर से।

(१५) सवाल—मंज़िल पर क्योंकर पहुँचना चाहिये ?

जवाब—धीरज के साथ अभ्यास करना, तब कोई अर्से में रास्ता तै होगा।

(१६) सवाल—गुनाह का इलाज क्या है ?

जवाब—क़सूर करने पर झुरना या पछताना और आइन्दा को होशियार रहना।

(१७) सवाल—ऐसा कौन शख़्स है जो जहाँ जावे उसे सब प्यार करें ?

जवाब—जो हर एक से दीनता करता है।

(१८) सवाल—हिम्मतवाला कौन है ?

जवाब—जो संसारी सुक्खों को छोड़ कर परमार्थ की कमाई करता है।

(१९) सवाल—सच्चा हितकारी कौन है ?

जवाब—सतगुरु, जो बुराई से तुझको बचाते हैं और भलाई सिखाते हैं और सख़्ती और तकलीफ़ में तेरी सहायता और मदद करते हैं।

(२०) सवाल—जो कोई सतसंगी बेजा हरकत करे तो उससे क्योंकर बचना चाहिये ?

जवाब—उससे कम मिलने और बातचीत न करने से।

(२१) सवाल—क्या जतन करूँ कि हकीम का मोहताज कम होऊँ ?

जवाब—कम खाओ और कम सोवो और भजन करते रहो।

(२२) सवाल—क्या करूँ कि सब मुझको दोस्त रक्खें ?

जवाब—झूठ मत बोलो और वादा-ख़िलाफ़ी मत करो और किसी को हाथ और ज़बान से मत सताओ और चित्त में सब से प्यार और दीनता रक्खो।

(२३) सवाल—सेवा की कै क़िस्में हैं ?

जवाब—सेवा की तीन क़िस्में हैं। अव्वल, तन की सेवा, दूसरे, धन की सेवा और तीसरे, मन की सेवा।

(२४) सवाल—सेवा का फल क्या है ?

जवाब—निश्चलता मन की, और निर्मलता अंतःकरण की, और प्राप्ति मेहर और दया सतगुरु की।

(२५) सवाल—जवाँमर्द कौन है ?

जवाब—जो संसार के बिगड़ने से आज़ुर्दा-ख़ातिर और तंग-दिल न होवे।

(९)

एकान्त में बड़ा फ़ायदा है, बशर्ते कि सिवाय मालिक के, दूसरे का ख़्याल दिल में न आवे। और जो बाहर से एकान्त हुआ और दिल में दुनियावी ख़यालात भरे रहे, तो वह शख़्स मन और शैतान के संग रहेगा।

(१०)

पाँच शख़्सों का संग नहीं करना चाहिये (१) एक, जो झूठ बोलता है और अहङ्कारी है, (२) दूसरा, नादान कि जो तुम्हारे फ़ायदे के वक़्त तुम्हारा नुक़सान करा देवे, (३) तीसरा, सूम कि मुनासिब वक़्त पर तुम को नेक काम में ख़र्च न करने दे, (४) चौथा, नाक़िस तबीयत यानी ओछा और कमीना आदमी कि जो वक़्त ज़रूरत तुम्हारे काम न आवे और (५) पाँचवाँ, धोखेबाज़ कि अपना लालच देख कर तुम को नुक़सान पहुँचावे।

(११)

जो कोई औरों को बचन सुनाने का शौक़ ज़्यादा रक्खे और अन्तर अभ्यास कम करता होवे, तो उसकी समझ ओछी है और उसका मन अंधा और नादान है और वह अपना वक़्त मुफ़्त खोता है।

(१२)

जो कोई दुनिया को प्यार करता है, उसको भजन का रस कभी नहीं मिलेगा। और जो कोई कामी है, उससे काल

निःचिंत रहता है, क्योंकि उससे निर्मल परमार्थ की कार्रवाई कम बनेगी।

(१३)

ज़बान का सम्हाल कर रखना बहुत मुश्किल है ब-निस्बत सम्हाल धन के। यानी ना-मुनासिब और बेजा बचन ज़बान से नहीं निकालने चाहियें और न किसी की निंदा करनी चाहिये—

दोहा

बोली तो अनमोल हैं, जो कोई जाने बोल।
हिये तराज़ू तोल कर, तब मुख बाहर खोल॥

(१४)

एक औरत भक्त इस तौर पर प्रार्थना किया करती थी कि हे मालिक तू जो कुछ सामान दुनिया का मुझ को दिया चाहे, वह उनको दे जो तुझको भूले हुये हैं। और तू जो स्वर्ग और बैकुण्ठ के सुख मुझ को दिया चाहे वह उनको दे जो उन सुखों को तुझ से चाहते हैं। मुझ को तो तूही चाहिये है।

(१५)

किसी ने शाह इबराहीम से कहा कि मुझ को कुछ उपदेश कीजिये। जवाब दिया कि जब तक ये छः बातें न बनेंगी, तब तक भक्ति पूरी न होगी। (१) पहिली, दुनिया के सुख और आराम की चाह छोड़ो और परमार्थ में मेहनत करो। (२) दूसरी, दुनिया का मान और

आदर छोड़ो और निंदा और निरादर सहो। (३) तीसरी, सोना कम करो और जागते रहो। (४) चौथी, धन और माल की चाह छोड़ो और संतोष इख़्तियार करो। (५) पाँचवीं, दुनिया की आशा और तृष्णा दूर करो और उससे अचाह हो। (६) छठी, जहाँ तक बने, क़सूर न करो और मालिक के चरणों में प्रार्थना करते रहो कि कोई क़सूर न बन पड़े और ऐसी करतूत बन आवे कि जिसमें उसकी प्रसन्नता होवे।

(१६)

दूसरे ने उससे नसीहत चाही

जवाब दिया कि अगर ये पाँच बातें माने तो फिर तुझे इख़्तियार है कि जो चाहे सो कर। (१) अव्वल, अपने मन से कह कि हे मन मेरे, मालिक का भजन-बंदगी कर, नहीं तो उसका दिया हुआ रिज़्क़ यानी अन्न मत खा। (२) दूसरी, हे मन मेरे, जिन कामों को मालिक ने मना किया है, उन को मत कर, नहीं तो उसके मुल्क के बाहर निकल जा। (३) तीसरी, हे मन मेरे, जो तू पाप कर्म करना चाहता है तो ऐसी जगह जा कि जहाँ मालिक तुझको न देखे, नहीं तो पाप मत कर। (४) चौथी, हे मन मेरे, जो तू मालिक की दात में राज़ी न होवे तो और मालिक ढूँढ़ जो तुझको बहुत देवे। (५) पाँचवीं, हे मन मेरे, पहिले

इससे कि मौत आवे, मालिक की भक्ति करले, और यह काम इसी वक़्त से शुरू कर ताकि धर्मराय के पास न जाना पड़े और नरकों के दुख से बचाव होवे ।

(१७)

जो कोई अपने तईं सबसे उत्तम जानता है, वह नीच है और जो कोई अपने को सबसे ओछा जानेगा, उस की सब बड़ाई करेंगे ।

(१८)

जो दिल में मालिक से मिलने का शौक़ पैदा करो तो उस मालिक का ख़ौफ़ भी रक्खो और सब से बढ़का काम मन के बर-ख़िलाफ़ अमल करना है ।

कड़ी

सत गुरु कहें करो तुम सोई ।
मन के कहे चलो मत कोई ।।

(१९)

जो कोई मालिक को पहिचानना चाहे तो चाहिये कि पहिले जिस क़दर बने, मन को दुनिया के ख़यालों से ख़ाली करे, और उसकी याद में मशग़ूल रहे और उसकी सेवा में ठहरा रहे और अपनी भूल-चूक पर रोवे और पछतावे ।

(२०)

जब अन्तर की आँख खुलेगी, तो बाहर यानी लिफ़ाफ़े से नज़र हट जावेगी। और तब सिवाय मालिक के और कुछ नहीं दीखेगा ।

(२१)

जीवों के मन तीन तरह के होते हैं---मन मुर्दा, मन ग़ाफ़िल और बीमार, और मन सही और दुरुस्त।

मन मुर्दा, संसारियों का है जो कि मालिक का भजन नहीं करते हैं। मन ग़ाफ़िल और बीमार, गुनहगारों का है जो पाप कर्म करते हैं और मन सही और दुरुस्त, उनका है जो हमेशा होशियार और चैतन्य रहते हैं यानी अपने मालिक से डरते हैं और उसका भजन करते हैं।

(२२)

मालिक की बंदगी और भजन से एक छिन भी ग़ाफ़िल नहीं होना चाहिये, क्योंकि यह मन बड़ा मक्कार और दग़ाबाज़ है। हर वक़्त इस जीव की घात में रहता है। ज़रा भी क़ाबू पाने पर इस का बे-शुमार नुक़सान कर देता है।

(२३)

जो कोई तुझ से बदी करे तो उस पर तू ग़ुस्सा मत कर और न उससे बदला लेने का इरादा कर, क्योंकि परमार्थी का क्षमा करने में फ़ायदा है और बुराई करने वाले के साथ ग़ुस्सा करना या बुराई के बदले में बुराई करने में नुक़सान है।

दोहा

भलयन से भला करन, यह जग का व्योहार।
बुरयन से भला करन, ते बिरले संसार॥

(२४)

एक अभ्यासी जब मरने लगा तो उसने मालिक से अर्ज़ किया कि अचरज मालूम होता है कि दोस्त की जान दोस्त लेवे । मालिक ने फ़रमाया कि ताज्जुब मालूम होता है कि दोस्त, दोस्त के दीदार और दर्शन से भागे । यह सुन कर वह ख़ुशी से मरने को तैयार हो गया ।

(२५)

हज़ारों जीवों में से बहुत थोड़े ही परमार्थ में क़दम रखते हैं, और सैंकड़ों परमार्थियों में से कोई बिरले ही अपने सच्चे मालिक को पहिचानेंगे ।

(२६)

सवाल व जवाब

(१) सवाल--हमारे सच्चे मालिक और निज पिता कौन हैं ?

जवाब--तुम्हारे सच्चे मालिक और निज पिता सत्तपुरुष राधास्वामी हैं ।

(२) सवाल--हमें क्योंकर यक़ीन हो कि हमारे सच्चे मालिक और निज पिता सत्तपुरुष राधास्वामी हैं ।

जवाब--वे आप इस संसार में जीवों पर अति दया करके, संत सतगुरु रूप धारन करके प्रघट हुये और अपना भेद उन्होंने आप गाया । उनकी बानी और बचन के पढ़ने और सुनने से प्रतीत आ सक्ती है, जैसा कि परमेश्वर और ख़ुदा

का यक़ीन लोग वेद पुरान क़ुरान और अंजील के पढ़ने से करते आये हैं।

(३) सवाल--हमें क्योंकर यक़ीन हो कि सत्तपुरुष राधास्वामी का दर्जा, परमेश्वर और ख़ुदा से ऊँचा और बड़ा है ?

जवाब--उनकी बानी को वेद, पुरान, क़ुरान, अंजील वग़ैरा कुल्ल आसमानी किताबों से मिलान करने से।

(४) सवाल—मालिक का खोज हम कहाँ करें, क्योंकि कहते हैं कि मालिक सब जगह मौजूद है ?

जवाब—मालिक का खोज तुम अपने घट में करो, क्योंकि जो मालिक सब जगह है तो तुम में भी है। फिर तुम में तुम से ज़्यादा नज़दीक है, ब-निसबत दूसरी जगह के।

(५) सवाल—मालिक हम में किस तरह है ?

जवाब—मालिक तुम में इस तरह है जैसे फूल में खुशबू, और दूध में घी, और काठ में अग्नि।

(६) सवाल—मालिक का दर्शन हम को किस तरह से हो सकता है ?

जवाब—मालिक का दर्शन तुम को सतगुरु से जुगत लेकर, अपना घट मथन करने से हो सक्ता है, जैसे कि घी का दर्शन दूध को तरकीब के साथ बिलोने से होता है, और इत्र ख़ालिस फूल में है और कई बार खींचने से निकलता है।

(७) सवाल—मालिक के दर्शन की हम को क्या ज़रूरत है ?

जवाब—मालिक तुम्हारा मिस्ल सूरज के है और तुम को रोशनी यानी ज़िंदगी उसी से मिलती है। ज्यों २ तुम उसके निकट जाओगे, तुम्हारी रोशनी बढ़ेगी, और जिस क़दर उससे दूर हटोगे, अँधेरे में गिरोगे। वह रोशनी महा चैतन्य और महा आनन्द स्वरूप है और सब सुखों का भंडार है और तारीकी यानी अँधेरा दुख रूप और चौरासी का घर है।

(८) सवाल—मालिक हममें कहाँ है !

जवाब—मालिक का तख़्त तुम्हारे मस्तक में है।

(९) सवाल—हमारे मालिक का क्या स्वरूप है।

जवाब—तुम्हारे मालिक का शब्द यानी चैतन्य और प्रकाश और प्रेम स्वरूप है।

(१०) सवाल–हमारा क्या स्वरूप है !

जवाब–तुम्हारा भी शब्द यानी चैतन्य और प्रकाश और प्रेम स्वरूप है।

(११) सवाल—फिर हम में और हमारे मालिक में क्या भेद है ?

जवाब—तुम में और तुम्हारे मालिक में ऐसा भेद है कि जैसे किरन और सूरज में, और जैसे बूंद और सिंध में।

बचन ५

वर्णन हाल सच्चे खोजी और परमार्थी और भी माया और उसकी रचना और घेर का, और ज़रूरत सतगुरु और उनके सतसंग की, और महिमा कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की जिनके चरणों में सब को प्रीत और प्रतीत लानी चाहिये, और बिना जिनकी मेहर और दया के किसी का कुछ काम नहीं बन सक्ता, और हाल उपदेश-करताओं का और नसीहत उनको और कुल्ल उपदेशियों यानी राधास्वामी मत के सतसंगियों को।

पहिला भाग

सच्चे खोजी और प्रेमी का हाल

१—सच्चे परमार्थ की कमाई दुरुस्ती से तब बन पड़ेगी जब सच्चा दर्द यानी प्रेम सच्चे मालिक से मिलने का दिल में पैदा होगा, और यह दर्द या प्रेम दो सूरतों में पैदा हो सक्ता है।

२—पहिली सूरत यह है कि दुनिया के हाल पर नज़र करके उसकी और उसके सब सामान की

नाश-मानता देख कर, दिल उसकी तरफ़ से उदास हो जावे और खोज करे कि अमर स्थान और अमर सुख कहाँ है, और कैसे मिले, और जब तहक़ीक़ात करके मालूम होवे कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का धाम जो ऊँचे से ऊँचा और गहरे से गहरा है, अमर और अजर है और वहीं पूरन आन्नद मिल सकता है और वही निर्माया यानी निर्मल चैतन्य देश है और उसके नीचे जितने देश हैं, उन सबमें शुद्ध यानी लतीफ़ और सूक्ष्म और मलीन यानी कसीफ़ और स्थूल माया, व्यापक है और निर्मल चैतन्य का ग़िलाफ़ हो रही है। इन देशों में पूरन आनन्द नहीं है, दरजे-ब-दरजे ऊँचे की तरफ़ आनन्द बढ़ता गया है और दुख और कलेश कम होता गया है। और मलीन माया के देश में सुख बहुत कम और दुख विशेष है और कुल्ल माया के देश में अबेर-सबेर जनम-मरम का भी चक्कर चल रहा है, यानी कुछ अर्से बाद ग़िलाफ़ (जिसको देह कहते हैं) बदलते रहते हैं, यह बात समझ कर कुल्ल मालिक के मिलने का और उसके धाम में पहुँचने का शौक़ दिल में पैदा हो जावे।

३--दूसरी सूरत यह है कि कोई इस शख़्स को महिमा कुल्ल-मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी और उनके धाम की, जो कि अविनाशी और सर्व आनन्द और प्रेम का भंडार है,

सुनावे और इस दुनिया की नाशमानता और इसके सामान का तुच्छ और दुखदाई होने का हाल समझावे और जुगत इस माया देश को छोड़ कर अपने निज घर में जाने की बयान करे, और इस हाल को सुन कर मन इस दुनिया से उदास और बरदाश्ता होकर घर की तरफ़ चलने और अपने सच्चे माता-पिता राधास्वामी दयाल से मिलने का जतन करने का इरादा करे।

४—ऐसे खोजी को तलाश संत सतगुरु या साधगुरू की, जो कि कुल्ल-मालिक और निज घर और उसके रास्ते के कुल भेद से वाक़िफ़ हैं और जुगत चलने की समझा कर उसकी कारवाई करा सकते हैं, ज़रूर करनी पड़ेगी, क्योंकि और किसी जगह या किसी मत में या विद्यावान और बुद्धिवानों के बचन से उसको तसल्ली हरगिज़ नहीं आवेगी।

५—ऐसे शौक़ीन और खोजी की हालत ऐसी होगी कि जैसे कोई बालक अपने माँ-बाप से बिछुड़ कर किसी ग़ैर देश और ग़ैर आदमियों में जा पड़ता है और वहाँ उसको किसी तरह से चैन नहीं आता, चाहे कैसी ख़ातिर-दारी उसकी की जावे और माँ-बाप के वियोग का दर्द सताता रहता है और उनसे मिलने के वास्ते तड़प और बेकली मन में रहती है।

६—जब ऐसा खोजी तलाश करके संत सतगुरु या

साधगुरू के सनमुख आवेगा, उस को उन के बचन सुनते ही और दर्शन करते ही निहायत प्रेम उनके चरणों में पैदा होगा, और उनके वचन जो सच्चे माँ-बाप यानी कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और उनके धाम की महिमा से भरे हुए होंगे, और रास्ते का भेद और चलने की जुगत का उनमें बराबर ज़िक्र होगा, उसको निहायत प्यारे लगेंगे, क्योंकि उसके दिल में फ़ौरन यक़ीन हो जावेगा कि वे ज़रूर एक दिन उसको निज धाम में पहुँचा कर सच्चे मालिक से मिलावेंगे ।

७—ऐसे खोजी के मन में संसार और उसके सामान और कुटुम्ब-परिवार की तरफ़ से किसी क़दर वैराग खोज की हालत में पैदा हो जावेगा । और जब संत सतगुरु या साधगुरू के बचन चित्त देकर सुनेगा, तब वह वैराग तेज़ और क़ायम हो जावेगा और अभिलाषा दुनिया की तरफ़ से हटती और कुल्ल-मालिक के चरणों में पहुँचने की दिन २ बढ़ती जावेगी ।

८—ऐसा खोजी संत सतगुरु के बचनों को सुन कर और उनके मुवाफ़िक़ अपनी और दुनिया की हालत की जाँच करके फ़ौरन उनके चरणों में प्रतीत लावेगा और जब उनकी जुगत का कोई दिन अभ्यास कर के अपनी हालत अंतर में बदलती हुई देखेगा, तब दिन-दिन प्रीत उनके चरणों में

बढ़ाता जावेगा और तन-मन-धन से उमंग के साथ सेवा करेगा और शौक़ के साथ सतसंग उनका, जो कि उसके अंतर अभ्यास में मदद देने वाला है, जारी रक्खेगा।

९—जगत के जीव, और भी विद्यावान और बुद्धिवान, असल में अजान हैं। उनको सच्चे मालिक और उसके धाम की और उससे मिलने की जुगत की बिलकुल ख़बर नहीं है। रास्ते में आत्मा परमात्मा या ब्रह्म में अटक रहे हैं और उसका भी भेद पूरा पूरा नहीं जानते, और मिलने की जुगत ऐसी कि जिसका अभ्यास सब कोई कर सके, इन के पास नहीं है। पर यह सब संत मत का हाल सुन कर अपनी मूर्खता से उसकी निंदा करते हैं और संतों पर तान मारते हैं और आप तीर्थ, ब्रत और मूर्ति वग़ैरा में भरम रहे हैं। सच्चा खोजी ऐसे लोगों की निंदा और तान पर ज़रा भी तवज्जह नहीं करेगा, क्योंकि जब उसने थोड़े दिन सतसंग करके संत मत को ब-ख़ूबी समझ लिया है तो उसको सब मतों का हाल और उनका ओछापन ज़ाहिर हो जावेगा, और उन लोगों के भरमाने और भुलाने से नहीं भरमेगा बल्कि उनको नादान और अभागी समझ कर उनसे परमार्थी मेल नहीं रक्खेगा।

१०—दुनिया के भोग-विलास और नामवरी वग़ैरा की चाह उसके दिल में बहुत कम हो जावेगी या बिल्कुल

नहीं रहेगी क्योंकि उसको कोई दिन सतसंग और अंतरी अभ्यास करके साफ़ मालूम हो जावेगा कि सब चीज़ें रास्ते में अटकाने वाली और निज घर से हटाने वाली हैं। वह किसी के भरमाने और उन चीज़ों का लोभ दिलाने से नहीं भरमेगा और अपनी भक्ति से नहीं डिगेगा।

११—ऐसे खोजी भक्त के मन में दिन २ चाव कुल्ल-मालिक के दर्शन और उसके धाम में पहुँचने का बढ़ता जावेगा और जिस क़दर कि नित्त अभ्यास करके उसको अंतर में रस मिलता जावेगा, उसी क़दर उसकी प्रीत-प्रतीत चरणों में मज़बूत होती जावेगी और कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की दया उस पर दिन २ बढ़ती जावेगी और अंतर में उसको परचे मिलते जावेंगे और इस तरह कमाई करके वह एक दिन माया के घेर के पार हो कर और धुर धाम में पहुँच कर परम आनन्द को प्राप्त होगा।

दूसरा भाग

माया और उसके ग़िलाफ़ों का हाल

१२—मालूम हो कि इस देश में चैतन्य की धार यानी सुरत, माया के ग़िलाफ़ों में गुप्त होकर कार्रवाई मन और इन्द्रियों के वसीले से कर रही है और इन ग़िलाफ़ों के संग अपनपौ बाँध कर और बाहर के जड़

पदार्थों में मन लगा कर अनेक तरह के दुख-सुख सह रही है। सो जब तक कि इन ग़िलाफ़ों से किसी क़द्र छुटकारा नहीं होगा, तब तक दुख-सुख और जनम-मरन के चक्कर से बचाव नहीं हो सक्ता। और इन ग़िलाफ़ों से छूटने की जुगत सिर्फ़ संत यानी राधास्वामी मत में आसान तरीक़े से खोल कर कही है। उसकी कमाई से यह जीव अपना आहिस्ता २ छुटकारा होता हुआ आप देख सकता है और उसी क़द्र अपना दुख-सुख से बचाव भी परख सक्ता है। और किसी तरकीब से यह फ़ायदा पूरा २ और आसनी के साथ बग़ैर घर-बार और रोज़गार के छोड़ने के, हासिल नहीं हो सकता। और राधास्वामी मत में किसी का घरबार और रोज़गार छुड़ाया नहीं जाता और जो जुगत कि बताई जाती है, ऐसी भारी है कि उसके अभ्यास करने से सहज में सब काम बन सकता है। लेकिन थोड़ा सच्चा शौक़ और प्रेम दरकार है। फिर अभ्यास करके वही प्रेम दिन २ बढ़ता जावेगा और एक दिन पूरा काम बना कर छोड़ेगा।

१३—यह बात सच्चे परमार्थियों को अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये कि इस दुनिया में दो पदार्थ हैं—एक चैतन्य और दूसरा जड़। चैतन्य वही सुरत की धार है कि जो इस देश में कुल्ल रचना की सम्हाल कर रही है और

जड़ पदार्थ की प्रेरक है। बग़ैर उसके, जड़ पदार्थ कुछ काम नहीं दे सकता। यही चैतन्य धार सत्त और ज्ञान और आनंद स्वरूप है, और जड़, बर-ख़िलाफ़ इसके, असत्त और तम और दुख रूप है, यानी इसका रूप-रंग सुरत-चैतन्य की सत्ता से क़ायम है। और जब उसकी सत्ता खिंच जावे, तब उसके रंग का अभाव हो जाता है।

१४—यह समझौती लेकर कुल्ल सच्चे परमार्थियों को मुनासिब और लाज़िम है कि जड़ पदार्थों से आहिस्ता आहिस्ता अपना नाता तोड़ते जावें या रिश्ता ढीला करते जावें, और विशेष चैतन्य से अपना मेल बढ़ाते जावें, तो दिन २ आनन्द और सच्चा ज्ञान बढ़ता जावेगा और दुख और भूल और भरम यानी तम घटता जावेगा। और यह कार्रवाई दुरुस्ती और आसानी के साथ सिर्फ़ सुरत-शब्द मार्ग की कमाई से हो सकती है।

१५—क्योंकि और मतों में चलने और चढ़ने की आसान जुगत जारी नहीं है और वे सब या तो बाहर जड़ निशानों जैसे तीरथ-मूरत वग़ैरा में अटक रहे हैं या चैतन्य की विद्या-बुद्धि से समझौती लेकर और अपने तईं वही रूह समझ कर (यानी समान और विशेष चैतन्य का भेद न करके) जहाँ के तहाँ बैठ रहे हैं, इस सबब से

उनकी निवृति माया के घेर और देहियों के दुख-सुख और जनम-मरण से मुमकिन नहीं है ।

१६—जिस क़दर ग़िलाफ़ यानी परदे सुरत-चैतन्य की धार पर, निर्मल चैतन्य देश से उतार के समय चढ़े हैं, उनका भेद मुफ़स्सिल राधास्वामी मत में बयान किया गया है । और मतों में यह भेद साफ़ तौर पर बिलकुल ज़ाहिर नहीं किया है । और सबब इस का यही है कि उन में सुरत के चलने और चढ़ने और निज धाम में पहुँचाने का बिलकुल ज़िक्र नहीं है । चैतन्य को सर्व व्यापक मान कर वे जहाँ के तहाँ उसकी समझौती (बजाय अभ्यास करने के) विद्या बुद्धि की मदद से हासिल करके तृप्त हो गये, यानी बुन्द चैतन्य को पिंड में ही सिंध रूप मान कर निश्चिन्त हो गये ।

१७—ग़िलाफ़ तीन क़िस्म के हैं । पहले दर्जे की रचना में रूहानी ग़िलाफ़, जहाँ कि चैतन्य ही चैतन्य है और माया नहीं है । दूसरे दर्जे में शुद्ध माया के मसाले के ग़िलाफ़, जहाँ ब्रह्म सृष्टि है । और तीसरे दरजे में मलीन माया के मसाले के ग़िलाफ़, जहाँ कि देवता और मनुष्य और चार खान की रचना है । और फिर हर दरजे में ग़िलाफ़ों की तीन २ क़िस्में हैं--स्थूल, सूक्षम और कारण, यानी एक दरजे का स्थूल ग़िलाफ़ नीचे के दरजे के कारण

ग़िलाफ़ से भी ज़्यादा सूक्ष्म है। और बाक़ी का हाल इसी तरह समझ लेना चाहिये।

१८—जब तक कि सुरत, ग़िलाफ़ों में बर्त रही है, तब तक उसकी भक्ति मालिक के चरणों में "भेद-भक्ति" कहलाती है, यानी सेवक और स्वामी और प्रेमी और प्रीतम यानी आशिक़ और माशूक़ का भाव क़ायम रहता है। और जब धुर-पद यानी बे-ग़िलाफ़ मुक़ाम में सुरत पहुँचे, तब "अभेद-भक्ति" जिसको सच्चा और पूरा ज्ञान कहना चाहिये, कहलाती है और इस जगह पर प्रेमी को संत मत में ऐसी ताक़त हासिल हो जाती है कि वह जब चाहे अपने प्रीतम से मिल जावे और जब चाहे तब न्यारा होकर उसके दर्शन का आनन्द लेवे। यह स्थान असली अरूप और अरंग और अनाम पद का है। बाक़ी नीचे के दरजों में जहाँ-कहीं जिस-किसी ने अनाम और अरूप पद थापा है, वह असली अरूप और अनाम और अरंग नहीं है। इस सबब से और मत वालों ने धोखा खाया, क्योंकि हर दरजे में हर एक स्थान पर रूप और अरूप और लोक और अलोक मौजूद हैं और दोनों मिल कर रचना की सम्हाल कर रहे हैं।

१९—चैतन्य ,बे-ग़िलाफ़, अपने में आप मगन रहता है। और जहाँ कि वह ग़िलाफ़ में है, वहाँ वह औज़ारों यानी इन्द्रियों के वसीले से बाहर की कार्रवाही करता है, और

भी अपने से विशेष चैतन्य का रस और आनन्द लेता है। लेकिन ग़िलाफ़ का संग करके यानी मेल के सबब से जो दुख-सुख लाज़मी हैं, उनका भी भोग करता है। और जब वह ग़िलाफ़ पुराना और बेकार हो जाता है, तब उसको छोड़ एक दूसरा ग़िलाफ़ धारण करता है। इस सबब से जनम-मरण और दुख-सुख का चक्कर हमेशा जारी रहता है।

२०—यह कैफ़ियत सिर्फ़ माया देश में है यानी रचना के दूसरे और तीसरे दरजे में वाक़े होती है। अव्वल दरजे में जहाँ कि रूहानी ग़िलाफ़ हैं, कभी तग़ैयुर और तबद्दुल[1] नहीं होता। और जो कि चैतन्य आनन्द स्वरूप है, इस वास्ते उसके ग़िलाफ़ भी आनन्द रूप हैं। इस वास्ते संत फ़रमाते हैं कि जैसे बने, तैसे माया के घेर के पार दयाल देश यानी अव्वल दरजे में जाना चाहिये। तब अमर और पूरण आनन्द प्राप्त होगा।

तीसरा भाग

अपने वक़्त के सतगुरु की ज़रूरत और उनके सतसंग का फ़ायदा

२१—संत अथवा राधास्वामी मत में वक़्त के सतगुरु की निहायत ज़रूरत है, क्योंकि बग़ैर उनके मिलने के, भेद कुल्ल-मालिक और रास्ते का, और जुगत चलने की

१—अदल-बदल

और हाल उन संजमों का जिनकी निगह्-दाश्त प्रेमी अभ्यासी को ज़रूरत है, मालूम नहीं हो सकता। यह भेद और हाल वही जानता है कि जो अपने घट में रास्ता तै करके धुर मुक़ाम तक या किसी रास्ते के स्थान तक पहुँचा है, या थोड़ा-बहुत वह शख़्स जानेगा जिसने पूरे गुरू से मिल कर कोई दिन उनका सतसंग किया है, और उनसे उपदेश लेकर अभ्यास कर रहा है। सिवाय इन तीन के (१) संत सतगुरु और (२) साधगुरू और (३) पूरे गुरू के सच्चे सतसंगी के, और कोई यह भेद नहीं जान सकता। इस वास्ते जिस-किसी के दिल में सच्चे मालिक की खोज और उसके मिलने का शौक़ पैदा हुआ है, उसे जब तक इन तीनों में से कोई नहीं मिलेगा तब तक उसको शान्ति नहीं आवेगी और न उसका रास्ता चलना शुरू होगा।

२२—जब खोजी प्रेमी ऐसे गुरू का सतसंग करेगा, तब उसको सच्चा हाल इस रचना का मालूम पड़ेगा और यह कि किस से उसको सच्ची प्रीत करनी चाहिये, और कहाँ २ उसका मन बे-फ़ायदा बंध रहा है, और कैसे उसका छुटकारा सहज में हो सकता है, और यह कि जो सुख और रस यहाँ के भोगों में हैं, वह तुच्छ और नाशमान हैं और परम सुख और परम आनन्द का भंडार अपने घट में

मौजूद है, पर जुगती की कमाई से आहिस्ता २ मिल सकता है और यह कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल का तख़्त भी घट में मौजूद है, और किस तरह थोड़ा-बहुत उनका जलवा अंतर में नज़र आ सक्ता है, और कैसे उनकी मेहर और दया, वास्ते तै करने रास्ते और प्राप्ति आनन्द और उसकी दिन २ तरक़्क़ी के, हासिल हो सकती है ।

२३—सच्चे मालिक के चरणों में सच्ची प्रीति और प्रतीत सिर्फ़ सतगुरु ही के संग से पैदा हो सकती है । और दिन २ उसकी तरक़्क़ी उनकी मेहर और दया और जुगती की कमाई से मुमकिन है । और संसार और उसके भोगों से सच्चे वैराग का दिल में पैदा होना और उसकी तरक़्क़ी भी सतगुरु ही के संग से होवेगी । और तरह से जो किसी के चित्त में किसी वक़्त थोड़ा-बहुत वैराग पैदा भी हुआ, तो वह क़ायम नहीं रहेगा और न उसकी तरक़्क़ी होगी ।

२४—सच्चे मालिक की मौजूदगी और उसके हर वक़्त हाज़िर नाज़िर होने का यक़ीन भी संत सतगुरु ही के संग के हासिल होगा । और उनकी दया और जुगती की कमाई से वही यक़ीन बढ़ता जावेगा और एक दिन पूरे दरजे तक पहुँचा देगा । ऐसा सच्चा और पूरा यक़ीन,

और किसी के संग से या पोथियाँ पढ़ कर हासिल नहीं हो सक्ता।

२५—संतों की जुगती की कमाई भी सतगुरु ही के संग से दुरुस्ती के साथ बन पड़ेगी। और जब तक कि काम पूरा न बने, वह अभ्यास जारी रहेगा। और किसी तरह सुरत-शब्द का अभ्यास बन पड़ना दुरुस्ती से और तरक़्क़ी के साथ जारी रहना और रोज़-ब-रोज़ उसका फ़ायदा नज़र आना मुमकिन नहीं है, क्योंकि काल और कर्म और माया और उसके भोग बड़े ज़बर्दस्त हैं, कभी न कभी अभ्यास में विघ्न डाल कर, या भर्म उठा कर, उसको छुड़वा देंगे या अभ्यासी को ललचा कर भोगों में या मान-बड़ाई में फँसा कर उसका रास्ता चलने का रोक देंगे। जिस-किसी के सिर पर पूरे गुरु का पंजा रहे, उससे यह काम आख़ीर तक दुरुस्त बनता चला जावेगा, नहीं तो थोड़े दिन अभ्यास करके और फिर किसी न किसी चक्कर में पड़ कर और रास्ते में थक कर रह जावेगा।

२६—शब्द की महिमा और सुरत-शब्द मार्ग की क़दर भी जैसी कि चाहिये, सतगुरु ही के संग से आवेगी। और वैसे तो हर एक मत में शब्द की थोड़ी-बहुत महिमा करी है, पर भेद रास्ते का, और जुगत उसके अभ्यास की, चढ़ाई के साथ, किसी मत में नहीं पाई जाती।

२७—जो भाग से सतसंग सतगुरु का कुछ अर्से तक प्राप्त हो जावे तो बहुत ग़नीमत है, नहीं तो जितने दिन बन सके, एक दफ़े ज़रूर उनके सतसंग में हाज़िर रह कर फ़ायदा उठावे, यानी बचन उनके चेत कर सुने और समझे और विस्तार करके उनका मनन और विचार करे।

चौथा भाग

वर्णन भेद जीवों की समझ और अधिकार का

२८—जीवों की तीन क़िस्में हैं, उत्तम, मध्यम और निकृष्ट, और इसी तरह बुद्धि और समझ भी तीन क़िस्म की हैं, एक तेलिया, दूसरी मोतिया, तीसरी नमदा (मोटा ऊनी बिछौना)।

(१)—पहिली, यानी तेलिया का ख़वास यह है कि जैसे तेल की एक दो बूंदें पानी में डालें तो वह फैल कर तमाम पानी को घेर लेती हैं, इसी तरह उत्तम अधिकारी बचन सुन कर उनका आप ही आप विस्तार करके समझता है और अपने फ़ायदे की बात को छाँट कर ग्रहण करता है।

(२)—दूसरी, मोतिया बुद्धि कि जैसे मोती में जिस क़दर सूराख़ किया जावे, वह उसी क़दर क़ायम रहता है, यानी मध्यम अधिकारी जिस क़दर बचन सुनता है, उसको वैसा ही अपने मतलब के मुआफ़िक़

छाँट कर याद कर लेता है, लेकिन विस्तार नहीं कर सक्ता।

(३)—तीसरी, नमदा बुद्धि जैसे नमदे में सूये से सूराख़ किया गया, तो सूराख़ होता हुआ तो नज़र आया पर फ़ौरन ही छिप गया, ऐसे ही निकृष्ठ अधिकारी बचन सुनते और समझते तो मालूम होते हैं, पर वे उनको फ़ौरन ही भूल जाते हैं।

२६—उत्तम अधिकारी को थोड़े दिन के सतसंग से बहुत फ़ायदा हासिल हो सकता है, क्योंकि वह दो मूल बातों को समझ कर उनका विस्तार और अपनी सम्हाल थोड़ी-बहुत हर सूरत और हर हालत में आपही अपनी निर्मल बुद्धि से कर सक्ता है और वे दो मूल बातें ये हैं :—

(१)—सुरत की बैठक जाग्रत के समय नेत्रों में है और यहाँ से धार जिस क़दर अंतर में ऊँचे की तरफ़ को, शब्द और स्वरूप के आसरे, खिंचेगी यानी पुतली उलटाई जावेगी, उसी क़दर देह और संसार से बन्धन ढीला होता जावेगा, यानी इधर से बे-ख़बरी और उधर की तरफ़ होशियारी के साथ रस और आनन्द मिलता जावेगा। इस काम को ज़रूरी और मुफ़ीद समझ कर जिस

क़द्र बन पड़ेगा, उत्तम अधिकारी हमेशा जारी रक्खेगा, बल्कि आहिस्ता आहिस्ता उसमें तरक़्क़ी करेगा ।

(२)—मन और इन्द्रियों की धारें बाहरमुख जारी हो रही हैं और इच्छा यानी ख़्वाहिश के साथ ये धारें पैदा होती हैं और पुतली के उलटाने यानी मन और सुरत की धार को अन्दर में ऊपर की तरफ़ चढ़ाने में, वे तरंगों की धारें विघ्नकारक हैं । इस वास्ते सिर्फ़ ज़रूरी और मुनासिब तरंगें उठानी चाहियें, और इन्द्रियों की धारों को ज़रूरी कामों के वक़्त जारी रखना, और फ़िज़ूल और ग़ैर-ज़रूरी और ना-मुनासिब ख़्यालों और कामों की तरंगों को अन्तर और बाहर रोकना, ख़ास कर अभ्यास के वक़्त, और आम तौर पर हर वक़्त, ज़रूर चाहिये ।

३०—इस बात को समझ कर उत्तम अधिकारी अपनी सम्हाल, हर वक़्त, मुनासिब तौर पर रख सक्ता है । जो मुआफ़िक़ पुराने स्वभाव ओर आदत के, भूल और चूक हो जावे तो कुछ मुज़ायक़ा नहीं, फिर होशियार होकर सम्हाल करना चाहिये । इसी तरह कोई अर्से की कोशिश के बाद मन और इन्द्रियाँ दुरुस्ती के साथ वर्तने लगेंगी ।

३१—मध्यम अधिकारी को सतसंग कुछ ज़्यादा अर्से

तक करना चाहिये। तब वह बचनों को सुन कर और समझ कर और थोड़ा-बहुत अन्तरी अभ्यास करके, और भी उत्तम और मध्यम अधिकारियों को जो सतसंग अर्से से कर रहे हैं या सतसंग में आते-जाते रहते हैं, देख कर, क़ाबिल इसके हो जावेगा कि दूर रह कर और राधास्वामी दयाल की दया का बल लेकर अपनी सम्हाल थोड़ी-बहुत कर सके, और जिस बात में कोई दिक़्क़त या विघ्न या मुशकिल पेश आवे तो चिट्ठी भेज कर सतगुरु से हिदायत मुनासिब वक़्तन्-फ़वक़्तन् हासिल करता रहे।

३२—निकृष्ट अधिकारी को बहुत अर्से तक सतसंग करने और उत्तम और मध्यम अधिकारियों की हालत देखने से कुछ फ़ायदा होगा, जो वह थोड़ी होशियारी और शौक़ के साथ इस काम को करेगा, और दूरी में उत्तम या मध्यम अधिकारी के सतसंग और मदद से उसका भी थोड़ा-बहुत निरवाह हो जावेगा और रफ़्ता २ मध्यम अधिकारी के दरजे पर आ जावेगा।

३३—जो लोग सच्चा शौक़ परमार्थ का नहीं रखते पर सच्चे शौक़ीनों के साथ किसी लपेट से संतों के सतसंग में आगये हैं, तो उनको भी कुछ थोड़ा फ़ायदा होगा। लेकिन जब तक वे चेत कर होशियारी के साथ सतसंग और अन्तर अभ्यास नहीं करेंगे, तब तक उनकी हालत नहीं

बदलेगी। इन लोगों को उत्तम या मध्यम अधिकारियों का संग काफ़ी होगा, क्योंकि सतगुरु के सतसंग की ताक़त और लियाक़त उनमें कम होगी।

३४—खुलासा यह है कि जब तक जीव का ज़बर झुकाव संसार की तरफ़ रहेगा, और मन में वासना भोग और बिलास और उसकी तरक़्क़ी की रहेगी, तब तक वह संतों के सतसंग और उनकी जुगती के अभ्यास से गहरा फ़ायदा नहीं उठा सका कि जिससे उसकी हालत जल्द बदले और परमार्थ का रस बराबर अन्तर में पावे।

३५—जो कोई सच्चा दर्दी परमार्थी है, वह राधास्वामी मत की पोथियों को ग़ौर से पढ़ कर बहुत फ़ायदा उठा सका है, और चिट्ठी के वसीले से उपदेश हासिल करके, अभ्यास में, राधास्वामी दयाल की दया से भजन और ध्यान का भी रस ले सका है, और अपना हाल वक़्तन फ़वक़्तन सतगुरु या उत्तम अधिकारी को लिख कर और हिदायत मुनासिब लेकर अभ्यास में तरक़्क़ी भी कर सक्ता है। पर कितनी ही बातें राधास्वामी मत और उसके अभ्यास की बाबत ऐसी हैं कि वे सिर्फ़ ज़बानी समझाई जा सक्ती हैं और लिखने में किसी न किसी क़िस्म की ग़लती या धोखा हो जाने का ख़ौफ़ है। इस वास्ते ऐसे परमार्थी को भी ज़रूर और लाज़िम है कि अगर ज़्यादा

न हो सके तो एक मर्तबा ज़रूर सतसंग में हाज़िर होकर और चंद रोज़ वहाँ ठहर कर जो कुछ कि शुभे और शक या किसी बात में समझ का फेर होवे, उसको दूर करावे, और जो बातें कि ज़बानी समझाई जा सक्ती हैं, उनको ब-ख़ूबी समझ लेवे, ताकि उसके अभ्यास की तरक़्क़ी में दूरी की वजह से ख़लल न पड़े और कुल्ल-मालिक राधा-स्वामी दयाल और सतगुरु और सुरत-शब्द मार्ग की प्रीति और प्रतीत मज़बूत हो जावे।

३६—और जो ऐसे परमार्थी का किसी सूरत से सतसंग में आना न बन सके, तो जो वह सतगुरु का हुक्म लेकर किसी उत्तम अधिकारी परमार्थी से (जिसने कुछ अर्से सतगुरु का सतसंग किया है) मिलेगा और कोई दिन उसका सतसंग करेगा, तो उसको थोड़ा-बहुत उसी क़द्र फ़ायदा हासिल हो सक्ता है, जितना कि सतगुरु के संग से।

३७—और जो उत्तम अधिकारी का भी सतसंग प्राप्त न होवे तो जब तक कि मौक़ा सतगुरु या उत्तम अधिकारी सतसंगी से मिलने का न बने, तब तक जो मध्यम अधिकारी सतसंगी मिल जावे (कि जिसने सतगुरु का सतसंग किया है) तो उसी के संग, अपनी परमार्थी कार्रवाई सतगुरु से चिट्ठी के ज़रिये से उपदेश लेकर

जारी करे। इस तरह से उसको किसी क़द्र फ़ायदा हासिल होगा, और मुन्तज़िर रहे कि जब मौक़ा मिले तब उत्तम अधिकारी सतसंगी से या सतगुरु से जाकर ज़रूर मिले और कोई दिन उनका सतसंग कर के पूरा फ़ायदा हासिल करे।

पाँचवाँ भाग

कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की महिमा, और फ़ायदा उनके चरणों में भाव के साथ प्रीत और प्रतीत करने का, और बयान उन हुक्मों का कि जो उन्होंने ज़बान-ए-मुबारक से फ़रमाये।

२८—राधास्वामी नाम कुल्ल-मालिक का है कि जिस का धाम ऊँचे से ऊँचा है और जहाँ माया का नाम और निशान भी नहीं है। और वह धाम तीन लोक के परे है और जिसके चरणों से "आदि शब्द" की धार निकली जिससे कुल रचना, पहिले दयाल देश और फिर तीन लोक की हुई। और यह पद यानी राधास्वामी धाम और कुल्ल रचना का नमूना घट २ में मौजूद है, यानी हर एक सुरत का सूत कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों से अपने २ घट में शब्द यानी चैतन्य की धार के वसीले

से (जिस पर सुरत उतर कर पिंड में बैठी है) लग सक्ता है। और वह सुरत उनकी दया को अंतर में अभ्यास के समय, और भी दूसरे वक़्तों में, परख सक्ती है।

३९—ऊपर के बयान का मतलब यह है कि हर एक सुरत, शब्द की धार के वसीले से उतर कर पिंड में बैठी है, और संत सतगुरु अथवा साधगुरु या उत्तम अधिकारी सतसंगी से, भेद रास्ते और मंज़िलों का ले कर, और हर एक स्थान के शब्द का और जुगती चलने की दरियाफ़्त करके राधास्वामी दयाल की दया का भरोसा रख कर अपने घट में उसी धार को पकड़ कर चरणों की तरफ़ चल सकती है। और जो कि कुल्ल जीव यानी सुरतें, कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की अंश हैं (जैसे सूरज और सूरज की किरन) और उनको हर एक पर निहायत दरजे की दया और प्यार मंज़ूर है, सो जब कोई विरह और प्रेम अंग लेकर सचौटी के साथ चरणों की तरफ़ भेद लेकर चलता है, वे उस पर अंतर में दया और मेहर फ़रमाते हैं और मदद देते हैं।

४०—इस समय में ख़ास कर जीवों पर ज़्यादा दया करना मंज़ूर है, क्योंकि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल आप, नर चोले में संत सतगुरु रूप धारण करके प्रगट हुए और भेद अपने निज धाम और उसके रास्ते और मंज़िलों

का, और सहज तरीक़ा चलने का, कि जो आज तक किसी को मालूम नहीं हुआ, निहायत कृपा कर के आप प्रकट किया और जीवों को समझा-बुझा कर और अपनी दया के बल से उनकी सुरत को चढ़ा कर अपने देश में पहुँ-चाया और पहुँचाते हैं।

४१—और निहायत मेहर और दया करके उनहोंने हुक्म दिया कि जो कोई उनके चरणों में प्रेम और भक्ति धार कर उस तरीक़े का अभ्यास यानी विरह अंग लेकर ध्यान और भजन करेगा, तो वे अपने निज रूप से उसको अन्तर में बराबर मदद देकर और उसकी सुरत को आहिस्ता-आहिस्ता चढ़ा कर एक दिन धुर धाम में पहुँचा देंगे।

४२—और उनहोंने यह भी हुक्म दिया कि इस वक़्त में जिस क़दर कि पुराने तरीक़े अभ्यास के हैं, वे सब ख़ारिज हैं। पहिले तो वह सिर्फ़ संजम के तौर पर जारी किये गये थे। दूसरे, जो किसी में थोड़ी चढ़ाई का भी फ़ायदा है सो वह इस क़दर कठिन और ख़तरनाक है कि किसी जीव से दुरुस्ती के साथ उसका बन पड़ना मुशकिल बल्कि ना-मुमकिन है। और जो जीव कि उन्हीं तरीक़ों में अटके रहेंगे, वे बे-फ़ायदा अपना वक़्त और तन-मन उस कार्य में ख़र्च करेंगे और सच्ची मुक्ति और पूरा उद्धार उस कार्रवाई से हरगिज़ हासिल नहीं होगा। इस वास्ते, कुल्ल

जीवों को उनहोंने यही हुक्म फ़रमाया कि जो जुगत स्वरूप के ध्यान और नाम के अंतरी सुमिरन और शब्द के श्रवन की जारी फ़रमाई है, उसी के मुवाफ़िक विरह और प्रेम अंग लेकर अभ्यास करो, तब सच्चा और पूरा उद्धार होगा। और किसी तरह जनम-मरन और चौरासी के चक्कर से छुटकारा नहीं होगा।

४३—और वक़्त छोड़ने इस चोले के उनहोंने यह भी फ़रमाया कि कोई यह न समझे कि हम जाते हैं। नहीं, हम हर एक अभ्यासी सतसंगी के अंग-संग रह कर उसकी दुरुस्ती और तरक़्क़ी बराबर करेंगे, बल्कि पहिले से ज़्यादा फ़रमावेंगे। इस वास्ते हर एक प्रेमी भक्त और सुरत-शब्द के अभ्यासी को लाज़िम है कि राधास्वामी दयाल के चरणों में गहरी प्रीति करे और उनके चरणों की शरन लेकर अपना अभ्यास दुरुस्ती के साथ जिस क़दर बन सके, बराबर यानी बिला नाग़ा करता रहे और उनकी दया और मेहर अपने अंतर में परखता चले।

४४—और यह भी राधास्वामी दयाल ने फ़रमाया कि जिस किसी को सुरत-शब्द मार्ग का उपदेश दिया जाता है, उस वक़्त उसको सत्तपुरुष राधास्वामी का दामन पकड़ा दिया जाता है। सो जो कोई सचौटी के साथ थोड़ा-बहुत प्रेम अंग लेकर उस अभ्यास को बराबर करता रहेगा और

जहाँ तक मुमकिन है, मन के विकारों में नहीं बर्तेगा, तो उस पर सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल अपनी दया फ़रमाते रहेंगे, यानी उसके मन और सुरत को आहिस्ता २ घट में ऊँचे की तरफ़ चढ़ाते जावेंगे और माया और काल के विघ्नों से उसकी रक्षा करते रहेंगे।

४५——सब जीव थोड़े-बहुत काल के क़रज़दार हैं यानी उन पर पिछले-अगले कर्म चढ़े हुए हैं। सो जो कोई सचौटी के साथ राधास्वामी दयाल की शरन में आया और सर्व-अंग करके उनका सेवक हो गया यानी और किसी में उसका परमार्थी भाव और इष्ट नहीं रहा, और सतसंग करके राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीत और प्रतीत शुरू करी है, तो ऐसे जीव को वे अपनी दया से अपनाते हैं और फिर उसकी सब तरह से सम्हाल और रक्षा दया के साथ फ़रमाते हैं, और उसके कर्म जिस क़दर जल्दी होता है, काटते हैं और दिन २ प्रीत-प्रतीत बढ़ा कर और अभ्यास में तरक़्क़ी देकर एक दिन अपने निज धाम में बासा देंगे।

छठवाँ भाग

वर्णन हाल राधास्वामी दयाल की दया का, वास्ते उद्धार जीवों के, और जारी करने उपदेश के, आम तौर पर।

४६—जिस किसी को कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल अपनी दया से साध या उत्तम प्रेमी सतसंगी की गति बख़्शें और उसके द्वारे और जीवों की परमार्थी दुरुस्ती करवावें तो वे उनके परम सेवक होंगे। और बाहर से जिस क़दर कार्रवाई समझाने और बुझाने और अभ्यास में मदद देने और भक्ति और प्रेम बढ़ाने की ज़रूरत है, वह, उन साध या प्रेमी सतसंगी के हाथों से करवाते हैं और अंतर में जिस क़दर कि मन और सुरत की चढ़ाई के वास्ते और काल और कर्म और माया वग़ैरा के विघ्नों के दूर करने के लिए मदद दरकार है, वह मेहर और दया से राधास्वामी दयाल अपने निज रूप से आप करते हैं, क्योंकि वक़्त उपदेश के, हर एक सुरत का सूत यानी रिश्ता उसके घट में राधास्वामी दयाल के चरणों से लग जाता है, और उसी रिश्ते के द्वारे परमार्थी अभ्यासी की सुरत की प्रार्थना वग़ैरा की ख़बर चरणों में पहुँच सकती है। और जब मौज होती है, तब दया की धार उसी रास्ते से उतर कर और अभ्यासी को रस देकर उसके प्रेम को बढ़ाती है।

४७—और जिस किसी को राधास्वामी दयाल अपनी मेहर से संत-गति बख़्शें यानी अपने धाम में बासा देवें, तो उसका निज रूप वही हुआ जो उनका है यानी शब्द-स्वरूप करके एकता हो गई और उसकी मौज वही

होगी जो उनकी मौज है। और जो उसके द्वारे जीवों का कारज करना मंज़ूर है, तो वह अंतर और बाहर उनकी मौज के अनुसार जो कार्रवाई जीवों के उद्धार के वास्ते मुनासिब और ज़रूर है, जारी करेगा।

४८—ख़ुलासा यह है कि कुल्ल कार्रवाई जीवों के उद्धार की, कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की मौज के मुवाफ़िक़ जारी होती है। और वे आप निगरानी उस कार्रवाई की फ़रमा रहे हैं और अपनी ख़ास दया जिस २ जीव पर जब २ और जैसी २ मुनासिब होती है करते हैं, और दिन २ उसकी प्रीति और प्रतीत चरणों में अभ्यास के साथ बढ़ाते जाते हैं।

४९—इस वास्ते कुल्ल जीवों को जो कि राधास्वामी मत में शामिल हैं, चाहिए कि उनके चरणों का इष्ट मज़-बूत बाँधें और उनके धाम में पहुँचने का इरादा ऐसा पक्का करें कि रास्ते में किसी स्थान पर थक कर या ललचा कर ठहरने की ख़्वाहिश न होवे, और जो जुगत चलने और चढ़ने की यानी ध्यान और भजन की उन्होंने जारी फ़रमाई है, उसका अभ्यास बराबर नेम और प्रेम के साथ हर रोज़ करते रहें, और जब २ मौक़ा मिले सतसंग भी करते रहें, और संशय और भरम दूर करके प्रीत और प्रतीत चरणों में बढ़ाते रहें तो राधास्वामी दयाल की मेहर और दया से आहिस्ता २ उनका कारज बन जावेगा।

सातवाँ भाग

वर्णन ज़ाहिरी आदाब और क़ायदा भक्ति का, राधास्वामी दयाल के चरणों में।

५०—कुल्ल जीवों को जो कि राधास्वामी मत में शामिल हैं मुनासिब और लाज़िम है कि जहाँ तक बन सके, एक दफ़े आगरे में आकर राधास्वामी बाग़ में राधास्वामी दयाल की समाध और उनके निशानों का जैसे पलँग और कुरसी और भजन करने की चौकी का, भाव सहित दर्शन करें और वहाँ मत्था टेक कर अपना भाग बढ़ावें, और समाध पर हार-फूल चढ़ावें, क्योंकि इन सब चीज़ों में जो कि उनकी सेवा में रही हैं, उनके चरणों की निर्मल और अमृत की धारा मौजूद है। राधास्वामी बाग़ के कुए का जो जल है, वह राधास्वामी दयाल का मुखामृत और चरणामृत है, उसको ज़रूर पान करें।

५१—राधास्वामी दयाल ने खुद अपनी ज़बान-ए-मुबारक से फ़रमाया है कि जो कोई राधास्वामी बाग़ में आवेगा, उसको भजन करने के बराबर फ़ायदा होगा, और जो वहाँ बैठ कर भजन और ध्यान करेगा, उसको विशेष फ़ायदा हासिल होगा, यानी राधास्वामी दयाल की ख़ास दया और मेहर का अधिकारी होगा।

आठवाँ भाग

वर्णन हाल उपदेश-करताओं का, और हिदायत मुनासिब उनके वास्ते

५२—जो कोई राधास्वामी दयाल के सेवकों में से जीवों को राधास्वामी मत का उपदेश देता है, उसके साथ उसके उपदेशी जो साध-भाव का बर्ताव करें तो मुज़ायक़ा नहीं, पर गुरु और सतगुरु और संत भाव कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में लाना चाहिये।

५३—और जो कोई बिल्फ़र्ज़ किसी उपदेशक सतसंगी के साथ अपनी हठ से गुरु भाव का बर्ताव करे तो ख़ैर, लेकिन कुल्ल-मालिक और परम पुरुष पूरण धनी का भाव राधास्वामी दयाल के चरणों में ज़रूर लाना चाहिये। इसमें उसका कारज बहुत दुरुस्ती के साथ और निर्विघ्न बनेगा, क्योंकि राधास्वामी दयाल की मेहर और दया उसकी सम्हाल और रक्षा करेगी।

५४—जो कोई सतसंगी अभी आप ही अभ्यासी हैं और इजाज़त और हुक्म के साथ दूसरों को उनसे उपदेश दिलवाया जाता है, तो उनको मुनासिब है कि किसी अपने उपदेशी को अपने साथ साध भाव का बर्ताव न करने दें। सिर्फ़ इस क़द्र काफ़ी होगा कि वे उसको अपना बड़ा भाई समझें, और जो कोई उपदेशक सतसंगी ब-नज़र अपने

बचाव के, इस क़दर बर्ताव भी मंज़ूर न करे, तो वह अपने उपदेशियों के साथ बराबरी यानी मित्र भाव का बर्तावा जारी रक्खे। और जो कोई उपदेशक सतसंगी किसी क़िस्म की बड़ाई का बर्ताव न मंज़ूर करे, तो उसके उपदेशियों को चाहिये कि उसके साथ मित्र भाव बर्तें, और साध भाव या बड़े भाई का भाव न बर्तें और संत सतगुरु और कुल्ल-मालिक का भाव राधास्वामी दयाल के चरणों में लावें।

५५—राधास्वामी दयाल के किसी सेवक को, जो जीवों को उपदेश राधास्वामी मत का देता है, किसी सूरत में अपने उपदेशियों पर दावा गुरुवाई का नहीं बाँधना चाहिये। यह स्वभाव और दस्तूर संसारी यानी लोभी और मानी उपदेश-करताओं का है। जो यही हालत राधास्वामी दयाल के सेवक की हुई तो वह भी संसारी गुरुओं में दाख़िल हुआ। फिर उसके उपदेश से जीवों को असली फ़ायदा बहुत कम होगा यानी उनके मन की गढ़त बिल्कुल नहीं होवेगी, और इस सबब से अभ्यास में तरक़्क़ी भी नहीं होगी, और कर्म, भर्म और संशय भी दूर नहीं होंगे, क्योंकि लोभी और मानी गुरू अपने सेवकों से आप डरता रहता है कि कहीं वे उसको छोड़ न देवें जिससे कि उसकी आमदनी में ख़लल पड़े।

५६—राधास्वामी मत में गुरु, सतगुरु और संत, नाम कुल्ल-मालिक का है और उपदेश-करता का दरजा साध या बड़े भाई या मित्र के मुवाफ़िक़ होना चाहिये। और इस में भी उपदेश-करता को लिहाज़ रखना चाहिये कि अपनी हालत को परखता चले और मान-बड़ाई और धन की चाह लेकर उपदेशियों से साध-भाव का बर्ताव मंज़ूर न करे, नहीं तो धोखा खावेगा और उसके उपदेश से जीवों को कुछ फ़ायदा हासिल न होगा।

५७—कोई अपने आप से गुरु नहीं बन सकता है। जब उपदेशियों को उसकी निसबत ऐसा भाव आवे और वे उसके मुवाफ़िक़ उससे बर्ताव चाहें, तो भी उसको मुनासिब है कि जहाँ तक बने, अपना बचाव करे। और जो वे निहायत दरजे की हठ करें, तो उनके प्रेम और भक्ति के बढ़ाने के वास्ते उनकी उमंग से कम दरजे की सेवा मंज़ूर करे और होशियारी और अहतियात रक्खे कि उसका मन फूलने न पावे यानी गुरुवाई का अहंकार न लावे, और किसी बात में बे-एहितयाती और बे-परवाही और निडरता के साथ बर्ताव न करे, नहीं तो अपना अकाज करेगा और जीवों को भी उससे थोड़ा-बहुत परमार्थी और दुनियावी नुकसान पहुँचेगा।

५८—जो उपदेश-करता आप सच्चा परमार्थी है, वह

आप भी निर्बंधँ होने का जतन करता रहेगा और अपने उपदेशियों के बंधनों को भी सहज २ ढीला करता और काटता जावेगा। न कि उपदेशियों के संग अपने वास्ते नया बंधन पैदा करेगा और उन पर दावा गुरुवाई का बाँध कर ज़ोर चलावेगा या किसी तरह की उनकी तह्क़ीक़ात और तलाश में (जो उनके मन में अभी पूरी प्रतीत राधास्वामी मत को नहीं आई है या किसी तरह के शक और शुभे बाक़ी हैं या किसी और इष्टों में उनका मन अभी बँधा हुआ है) हर्ज और ख़लल डालेगा, इस ख़ौफ़ से कि कहीं वे उसको छोड़ न जावें और उसकी मान-बड़ाई और आमदनी में घाटा न होवे।

५६—यह हालत संसारी और नसली गुरुओं की है। और जो काई ऐसा बर्ताव करेगा, उससे जीवों का कारज कुछ नहीं बन सकेगा और न उनकी टेक पिछले इष्टों और कर्म-धर्म की काटी जावेगी, और न राधास्वामी मत की पूरी प्रतीत आवेगी, और न राधास्वामी दयाल के चरणों का पक्का और सच्चा इष्ट बँधेगा।

६०—जो हाल कि ऊपर लिखा गया, अभ्यासी सतसंगियों का है, जिन्होंने मान-बड़ाई और धन और भोगों के लालच से, बग़ैर हुक्म और इजाज़त के उपदेश करना शुरू कर दिया है, या थोड़ी सी इजाज़त, ख़ास शर्तों

के साथ हासिल करके और फिर उन शर्तों को भूल कर मनमुखता के साथ कार्रवाई उपदेश की, आम तौर पर जारी कर दी है। इन लोगों को अपने परमार्थी फ़ायदे का ख़्याल पेश-ए-नज़र रख कर ऊपर की हिदायत के मुवाफ़िक़ अमल-दरामद करना चाहिये। और जो कोई उनको उनकी नाक़िस कार्रवाई से आगाह करके, सलाह मुनासिब देवे, तो उसका बचन प्यार-भाव से सुनकर और अपने मन में ग़ौर और विचार करके, मानना चाहिये, न कि उससे नाराज़ होकर और उसको ईर्षावान समझ कर अपने उपदेशियों का ग़ोल जुदा बाँध कर और सतसंग से अलेहदा होकर अपनी गुरुवाई न्यारी चलाना।

६१—जो कितने ही साधू या गृहस्थ सतसंगी इस तरह की कार्रवाई करेंगे तो बहुत से जुदे २ ग़ोल हो जावेंगे और एक दूसरे का आपस में इत्तिफ़ाक़ न होगा। और जो वे साधु या गृहस्थ सतसंगी अपने आप को गुरू और सतगुरु थाप कर अपनी पूजा और मानता जुदी जारी करेंगे और राधास्वामी दयाल की संगत और गुरुद्वारे से, जो आगरे में है, अपना ताल्लुक़ न रक्खेंगे या मेल-मिलाप छोड़ देंगे। तो कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल का इष्ट और उनके चरणों की भक्ति आहिस्ता २ कम या गुम हो जावेगी। इसमें बड़ा भारी हर्ज राधास्वामी

मत के प्रकाश में वाक़ै होगा और यह भारी नुक़सान उनके सबब से पैदा होगा, जो ऐसी कारवाई मन-हठ और अहंकार और ख़ुद-मतलबी की बजह से शुरू करेंगे और समझौती पाने पर भी उस को अपने तौर से जारी रक्खेंगे ।

६२—मुनासिब तो यह है, बल्कि हर एक राधास्वामी मत के सतसंगी पर फ़र्ज़ है कि जो २ राधास्वामी दयाल का इष्ट रखते हैं और राधास्वामी धाम में पहुँचना चाहते हैं, वे सब आपस में भाई-चारे के तौर पर बर्ताव करें, और एक दूसरे से भाव और प्यार के साथ पेश आवें, न कि अपने २ उपदेशक की टेक बाँध कर कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल का इष्ट भी ढीला कर दें और एक दूसरे की ईर्षा करके आपस में विरोध पैदा करें । यह बड़ी लज्जा की बात है, और इस मत पर जो कि आम भाई-चारे का रिश्ता मज़बूत करने वाला है, भारी इलज़ाम लाती है, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की मौज के बरखिलाफ़ है ।

नवाँ भाग

हिदायत उपदेशियों को

क़िस्म पहिली

साधू और सतसंगियों के उपदेशियों को

६३—जिस किसी के मन में सच्चे मालिक के मिलने

और अपने पूरे उद्धार कराने की चाह है, उसको चाहिये कि जहाँ तक मुमकिन होवे, संत सतगुरु या साधगुरु से उपदेश लेवे। और जो वे न मिलें तो उनके सच्चे प्रेमी सतसंगी से, गृहस्थ होवे या विरक्त, उपदेश लेकर अभ्यास शुरू करे और राधास्वामी दयाल का इष्ट बाँधकर उनके चरणों में प्रीति और प्रतीत बढ़ावे। वे अपनी मेहर से उसका संजोग संत सतगुरु या साध गुरु से जब मुनासिब होगा, मिला देंगे।

६४—जो उसके मन में उमंग सेवा की पैदा होवे, तो तन और धन की सेवा राधास्वामी मत के साधू और सतसंगियों की, भाव के साथ करे, लेकिन मन राधास्वामी दयाल के चरणों में लगावे।

६५—उपदेश-करता को, वक़्त लेने उपदेश के, अपना गुरू न बनावे। लेकिन उसको साधन करने वाला समझ कर प्यार और भाव के साथ उसका सतसंग करे और जब २ उमंग होवे और वह मंज़ूर करे तो तन-धन की भी सेवा करे, और राधास्वामी दयाल के चरणों का इष्ट बाँध कर अपना अभ्यास जारी रक्खे और संत सतगुरु से मिलने की चाह मन में रक्खे, और जब मौज से वे मिल जावें तब उनसे गहरी प्रीति करे।

६६—जब संत सतगुरु से मेला होगा, तब इसको

घट में परचे मिलेंगे और बाहर से भी सतसंग में इसको रस विशेष आवेगा, और संशय और भरम सहज में दूर होते जावेंगे, और प्रीति और प्रतीत कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में, और भी सुरत-शब्द मार्ग की, बढ़ती जावेगी। इसी तरह आहिस्ता २ थोड़ी २ पहिचान संत सतगुरु की होती जावेगी।

६७—जो कोई उपदेश-करता उपदेशी पर दावा गुरुवाई का बाँधे या और किसी क़िस्म का ज़ोर या हुक्म चलावे या उसको खोज और तलाश से बाज़ रक्खे और उसके संग से सच्चे परमार्थी की हालत थोड़ी-बहुत न बदले यानी प्रीति और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरणों में बढ़ती न जावे, और संसार की तरफ से किसी क़दर वैराग या उदासीनता चित्त में न आवे, तो उस उपदेशक को सच्चा गुरू नहीं समझना चाहिए। उसके संग से उपदेशी का सच्चा और पूरा उद्धार नहीं होगा। ऐसी सूरत में उपदेशी को ऐसे उपदेशक में सिर्फ साध-भाव मानना चाहिये और पूरे गुरू का खोज, वास्ते अपने पूरे उद्धार के, जारी रखना मुनासिब है। और जब तक पूरे गुरू से मेला नहीं होगा, तब तक कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल, जिस क़दर मुनासिब होगा, ऐसे उपदेशी की सम्हाल फ़रमावेंगे और रफ़्ता २ सतगुरु से भी मेला करावेंगे।

६८—जब संत सतगुरु मिल जावें, तो उपदेशी सतसंगी को मुनासिब है कि पहले उपदेश-करता से भी मेल ब-दस्तूर जारी रक्खे। लेकिन जो वे उसको संत सतगुरु की भक्ति से हटावें या उसमें विघ्न डालें तो संत सतगुरु से अर्ज़ हाल करके, और उनकी आज्ञा लेकर, उस उपदेश-करता से आइन्दा को मेल-मिलाप ढीला कर दे या जो मुनासिब होवे, बिल्कुल मौक़ूफ़ कर देवे।

६९—जो वे उपदेश-करता सच्चा शौक़ परमार्थ का रखते होंगे तो वे आप भी सतगुरु से मिलेंगे और अपने उपदेशी को भी मिलावेंगे। और इसमें सबकी प्रीत परस्पर बढ़ेगी और राधास्वामी दयाल के चरणों में भक्ति ज़्यादा मज़बूत होगी। और जो वे उपदेशक मानी और लोभी हैं और अपने परमार्थी नफ़े-नुक़सान का कुछ ख़्याल नहीं करते, तो वे आप भी सतगुरु से नहीं मिलेंगे और जो वह उसका कहना नहीं मानेगा, तो उससे विरोध और लड़ाई करने को तैयार होंगे। ऐसे उपदेशक से सच्चे परमार्थी को मेल रखना मुश्किल होगा और उनसे एक न एक दिन नाता मुहब्बत का तोड़ना पड़ेगा और इस हालत में उस पर किसी क़िस्म का दोष नहीं आ सकता।

नवाँ भाग

क़िस्म दूसरी

नसीहत संतों के उपदेशियों को

७०—जिन लोगों ने कि संत सतगुरु या साध गुरू से उपदेश लिया है, उनको चाहिये कि संत सतगुरु या साध गुरू से गहरी प्रीति करें और होशियारी से उनका सतसंग करें और जिस क़द्र कि अंतर और बाहर के सतसंग और परचों वग़ैरा से पहिचान उनकी होती जावे, उसी क़द्र उनके चरणों में प्रीति और प्रतीत बढ़ाते जावे, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में पूरी प्रीति और प्रतीत लावें, तब कारज उनका दुरुस्त बनेगा क्योंकि निज स्वरूप संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल का एक ही है।

७१—ज़ाहिर है कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में सतसंग करके और राधास्वामी मत और उसके भेद का निर्णय सुन कर पूरी प्रतीत आ सकती है और फिर प्रीति भी उनके चरणों में यानी अंतर शब्द स्वरूप में (जो उनका निज रूप है) की जा सकती है। और इस तरह अंतर अभ्यास और बाहर का सतसंग दिन २ शौक़ के साथ जारी रह सकता है।

७२--लेकिन संत सतगुरु और साध गुरू के चरणों में

एकाएक ऐसी प्रीति और प्रतीत (जब तक कि थोड़ी-बहुत उनकी पहिचान न आवे) नहीं हो सकती। और यह पहि-चान, उनकी दया पर मौक़ूफ़ है, चाहे वे अंतर और बाहर परचे देकर जल्द उपदेशी को हालत को (जो वह सच्चा और उत्तम अधिकारी है) बदल देवें यानी उसको थोड़ा-बहुत प्रेम बख़्श देवें या जो वह मध्यम और निकृष्ट अधिकारी है, तो बाहर सतसंग और अंतर अभ्यास कराके आहिस्ता २ उसकी हालत बदलें। पर इन दोनों सूरतों में उपदेशी को लाज़िम और ज़रूर है कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में पूरी प्रतीत और उनकी दया का भरोसा लावे, तो उसको हर हालत में अंतर और बाहर सहारा मिलता रहेगा, और जब २ संत सतगुरु या साध गुरू की तरफ़ से उसका मन रूखा और फीका हो जावेगा, उस वक़्त राधास्वामी दयाल उसकी मदद फ़रमावेंगे, जो वह उनकी बानी का पाठ और अंतर अभ्यास यानी ध्यान और भजन करता रहेगा।

७३—सतगुरु स्वरूप में पूरा २ भाव और पूरी प्रतीत एक-बारगी आनी मुश्किल है, और फिर उसका बराबर एक रस क़ायम रहना निहायत कठिन है। इस वास्ते, जो कोई दानाई के साथ चाल चलेगा यानी कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में पूरी प्रीति और प्रतीत

करेगा, तो वह किसी वक़्त सतगुरु से क़तई बे-मुख नहीं होगा, क्योंकि देह रूप से सतगुरु और राधास्वामी दयाल जुदा मालूम होते हैं, लेकिन निज रूप यानी शब्द स्वरूप उनका एक ही है। तो जब कोई सतगुरु से रूखा-फीका हो गया और राधास्वामी दयाल के चरणों में उसका भाव ब-दस्तूर रहा, तो वह असल में सतगुरु से भी बे-मुख नहीं हुआ। सिर्फ़ उनके देह स्वरूप की तरफ़ उसका भाव घट गया, और ज़ाहिरी बर्ताव में रूखा-फीका हो गया, पर उनके शब्द स्वरूप को, जो राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीति और प्रतीत रही आई, ब-दस्तूर पकड़े रहा और उससे बे-मुखता नहीं हुई। इस सूरत में अंतर-अभ्यास और बानी का पाठ करने से जल्द या थोड़ी देर के बाद उसकी प्रीति सतगुरु के देह स्वरूप में, राधास्वामी दयाल की दया से, ब-दस्तूर हो जावेगी।

७४—इस वास्ते कुल्ल उपदेशी यानी सतसंगियों पर फ़र्ज़ है कि अपने फ़ायदे के वास्ते कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में गहरी और पूरी प्रतीत और प्रीति करें और सतगुरु स्वरूप में भी, जहाँ तक बन सके, पूरा प्यार और भाव लावें, और उनके देह स्वरूप को ऐसा समझें कि राधास्वामी दयाल अपने निज पुत्र यानी निज धारा के वसीले से आप उस स्वरूप में प्रवेश करके उनका

कारज जिस क़द्र कि बाहर से सँवारना मंज़ूर है बनाते हैं, और अंतर में अपने निज रूप यानी शब्द स्वरूप से सम्हाल करते हैं।

७५—और राधास्वामी दयाल के देह स्वरूप में जिसको कि उन्होंने धारण करके राधास्वामी मत का प्रकाश किया और सहज जुगत मन और सुरत के चढ़ाने की सुरत-शब्द मार्ग से (जिससे जीव का सच्चा उद्धार मुमकिन है) प्रगट करी, पूरा भाव और प्यार लाना चाहिए। और बारम्बार उनका शुकराना अदा करना चाहिए कि अति दया करके, वास्ते जारी रखने उपदेश और उद्धार 'जीवों के, संत सतगुरु और साध गुरू और प्रेमी सतसंगी बनाते और पैदा करते जाते हैं। अगर संत सतगुरु के स्वरूप को पिता माना जावे तो राधास्वामी दयाल के स्वरूप को महा-पिता मानना चाहिए, क्योंकि वे संत सतगुरु और साध गुरू के बनाने वाले और पैदा करने वाले हैं और उन्हीं की मौज और दया की ताक़त से यह दोनों अपनी कार्रवाई जारी करते हैं, और उन्हीं का भरोसा रख कर जीवों को उपदेश, निज धाम में पहुँचने का, करते हैं और आप भी उसी धाम के बासी हैं।

७६—संत सतगुरु को कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल का पुत्र मानना चाहिए। सो जब किसी को उन की

थोड़ी-बहुत पहिचान आवे, तो उसको मुनासिब है कि संत सतगुरु के चरणों में पिता का भाव लावे और कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में (जो संत सतगुरु के पिता हैं) परम पिता या महा-पिता का भाव लावे। इस तरह उसकी प्रीति दोनों स्वरूपों में (यानी देह स्वरूप और शब्द स्वरूप में) दुरुस्ती के साथ क़ायम रहेगी और बढ़ती जावेगी।

७७—इस क़दर भेद जो ऊपर किया गया, उस हालत में मानना होगा कि जब किसी को थोड़ी-बहुत परख और पहिचान संत सतगुरु की आई है। नहीं तो, आम तौर पर कुल्ल सतसंगियों को, चाहे उन्होंने उपदेश संत सतगुरु से लिया है या किसी सतसंगी से, मुनासिब और लाज़िम है कि राधास्वामी दयाल को कुल्ल-मालिक यानी परम पुरुष पूरन धनी मान कर, उन्हीं के चरणों में प्रेम-प्रीति करें, और उनके शब्द-स्वरूप में भाव और प्यार लाकर, उमंग के साथ अन्तर-अभ्यास में लगें। तब आहिस्ता-२ उनकी दया की परख आती जावेगी। और फिर जो उपदेशक संत सतगुरु हैं, तो उनकी गति और महिमा की भी ख़बर पड़ती जावेगी और उनमें भी भाव और प्यार उस दरजे का, जो कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के निज और प्यारे पुत्र में लाना चाहिए, आता जावेगा।

नवाँ भाग

क़िस्म तीसरी

हिदायत कुल्ल उपदेशी यानी राधास्वामी मत के सतसंगियों को

७८—कुल्ल जीवों को, जब कि वे राधास्वामी मत में शामिल होवें और उपदेश सुरत-शब्द मार्ग का लेकर अंतर-अभ्यास में लगें, लाज़िम है कि राधास्वामी दयाल को कुल्ल-मालिक और कुल्ल करता और सर्व-समर्थ और प्रेम और ज्ञान का भंडार समझें, और उनके देह स्वरूप को, जो उन्होंने धारण करके, राधास्वामी मत को प्रगट किया और सहज जुगत सुरत-शब्द मार्ग की, वास्ते चढ़ाने मन और सुरत के, बताई, कुल्ल-मालिक राधास्वामी का औतार स्वरूप समझें, और दोनों में गहरी प्रतीत और प्रीति लावें, और उनकी मेहर और दया का आसरा और भरोसा लेकर अभ्यास शुरू करें।

७९—और जो कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल अपने निज स्वरूप से कुल्ल के करता और धरता हैं और कुल्ल रचना उनके आधीन है, इस वास्ते सच्चे मन से उनके चरणों की ओट और शरन लेना हर एक सतसंगी पर फ़र्ज़ है। यानी सब कामों में उनकी मौज और दया का आसरा और भरोसा रखना चाहिए और उन्हीं को अपना

सच्चा हितकारी और उद्धार-करता समझ कर, उनका इष्ट और उनके चरणों में यानी उन के निज धाम में पहुँचने का इरादा पक्का और मज़बूत करना चाहिये । तब उससे अभ्यास दुरुस्ती से बनेगा और कुछ अंतर में रस भी आवेगा और दिन २ तरक़्क़ी होती जावेगी और शौक़ भी बढ़ता जावेगा ।

८०—गुरु स्वरूप में जो कि देह धारी है, गहरा भाव और प्यार, जैसे कि कुल्ल-मालिक के चरणों में पैदा हो सकता है, आना बहुत मुश्किल है, जब तक कि सतसंग और अभ्यास करके उनकी थोड़ी-बहुत परख और पहिचान न आवे । इस वास्ते बिना पहिचान के, जो कोई उनकी महिमा करेगा, वह सुनी हुई या पढ़ी हुई होगी । और जब तक कि अंतर हिरदे से भाव और प्यार न उपजेगा, तब तक भक्ति के अंगों में, जैसा कि चाहिये, अंतर और बाहर दुरुस्ती और सचौटी के साथ नहीं बर्ता जावेगा ।

८१—लेकिन जब किसी को अंतर में रस और आनन्द मिलेगा और शुकराने में सेवा की उमंग उठेगी, उस वक़्त जो वह राधास्वामी दयाल के साथ बर्ताव करना चाहे, उसको मुनासिब है कि संत सतगुरु या साध और सतसंगी के साथ थोड़ा-बहुत वही बतावा करे, क्योंकि राधास्वामी दयाल ने फ़रमाया है कि संत सतगुरु उनका

निज रूप है, और साध और सतसंगी उनके देह स्वरूप हैं। जो कोई उनकी सेवा करेगा वह राधास्वामी दयाल की सेवा में शुमार की जावेगी और उसका फल यानी भक्ति और प्रेम, वे अपनी मेहर से आप देवेंगे।

दसवाँ भाग

क़िस्म पहिली

जवाब बाज़े सवालों और संदेहों का, जो कि प्रेमी अभ्यासियों के मन में, निस्बत बर्ताव भक्ति के, सतगुरु स्वरूप और कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में, अक्सर पैदा होते हैं।

८१—जो कोई कहे कि राधास्वामी दयाल की बानी में जहाँ-तहाँ महिमा संत सतगुरु स्वरूप की कही है और यह कि जब तक कि गुरु स्वरूप में पूरा प्यार नहीं आवेगा तब तक शब्द यानी निज स्वरूप की प्राप्ति नहीं होगी, यह बचन सच्च है। लेकिन समझना चाहिये कि ऐसा भाव और प्यार गुरु स्वरूप में, जब तक कि सतसंग और अभ्यास करके कुछ अंतर में रस नहीं मिलेगा और थोड़ी-बहुत पहिचान नहीं आवेगी, नहीं आवेगा। और जब तक कि ऐसी हालत न होवे तब तक ब-दस्तूर मुख्यता प्रेम

और प्रीति की कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में करना चाहिये ।

८३—संत मत में प्रेम की भारी माहिमा है और सबब उसका यह है कि जहाँ जिसका सच्चा और पूरा प्रेम है, वहीं उसका तन-मन-धन सहित झुकाव होता है। और या तो वह आप, चल के, प्रीतम से मिलता है या प्रीतम उसको आप बुला लेता है या आप ही चल कर उससे मिलता है ।

८४—परमार्थ में जब किसी का सच्चा प्रेम, महिमा सुन कर, और जगत और उसके पदार्थों की नाशमानता देख कर, कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में आया, तब राधास्वामी दयाल दया करके अपने पुत्र यानी निज धारा के वसीले से, आप उस प्रेमी को चरणों में लगाते हैं, और रास्ते का भेद देकर उसको निज धाम में बुलाने और पहुँचाने के निमित्त जुगती के साथ अभ्यास कराते हैं। यह पुत्र यानी निज धारा का स्वरूप उन्हीं का देह स्वरूप है और इसका और उनका निज स्वरूप एक ही है। लेकिन जो कि देह स्वरूप की पहिचान कठिन है, इस सबब से प्रथम निज रूप की महिमा प्रेमी के हृदय में बसा कर, उसी में उसकी प्रीति और प्रतीत लगाते हैं और उसी स्वरूप से मिलने का जतन, यानी सुरत-शब्द मार्ग का अभ्यास कराते हैं ।

८५—निज स्वरूप की महिमा और बड़ाई हर हालत में ज़्यादा से ज़्यादा है, और प्रेमी का, बग़ैर उस स्वरूप की प्राप्ति के, कारज पूरा नहीं बन सकता है। इस वास्ते जो कार्रवाई मुवाफ़िक़ ऊपर की दफ़े के उससे शुरू कराई गई, वह हर हालत में दुरुस्त है।

८६—लेकिन जो कि प्रेमी, संसारी रूपों में पहिले से लगा हुआ है और अटक रहा है और कुल्ल-मालिक के निज रूप को न तो देखा है और न उसके सतसंग का बचन सुन कर अच्छी तरह अनुमान कर सकता है, इस वास्ते जैसा चाहिये उसमें प्यार नहीं आ सकता।

८७—पर उसी निज स्वरूप का जो देह स्वरूप यानी संत सतगुरु रूप है, वह उन्हीं रूपों के मुवाफ़िक़ है जिन में कि प्रेमी अपने स्वभाव के मुवाफ़िक़ संसार में प्रीति लगाता आया है। इस सबब से जो थोड़ी-बहुत भी पहिचान संत सतगुरु की आ जावे, तो यह प्रेमी उनके स्वरूप में विशेष प्यार आसानी से ला सकता है, और अनेक तरह की सेवा तन, मन, धनसे करके उस प्यार को बढ़ा सक्ता है। और फिर उसी स्वरूप का अंतर में स्थान २ पर ध्यान करके और जब तक मेहर और दया से दर्शन पाकर अपने मन और सुरत को उनके चरणों के स्पर्श करने के निमित्त सहज में चढ़ा सक्ता है और आहिस्ता २ एक दिन धुर धाम में पहुँच सकता है।

८८—जिस वक़्त कि ध्यान की मदद से मन और सुरत सिमट कर किसी स्थान पर पहुँचेंगे या जम जायेंगे, तब शब्द भी साफ़ सुनाई देवेगा और उसकी धुन को पकड़ के सुरत जल्द चढ़ेगी।

८९—नीचे के स्थानों यानी षट चक्र में सिमटाव और चढ़ाई, बग़ैर मदद और ध्यान गुरु स्वरूप के, किसी क़दर मुमकिन है यानी वहाँ ध्यान मक़ामी स्वरूप का किसी क़दर काम दे सकता है। लेकिन ऊँचे मक़ामों की चढ़ाई सिर्फ़ शब्द के आसरे, बग़ैर मदद गुरु स्वरूप के मुश्किल है।

९०—जो कोई कहे कि गुरु स्वरूप नाशमान है, उसका ध्यान करना फ़िज़ूल है और वह पूरा फ़ायदा नहीं देगा, तो उसका यह जवाब है कि जो आकार गुरु स्वरूप का प्रेमी ध्यानी के अंतर में प्रगट होगा और होता है, वह स्वरूप चैतन्य अंतरजामी आप धारण करता है, और जो कि चैतन्य अविनाशी है और प्रेमी ध्यानी के सदा संग है, इस वास्ते वह स्वरूप भी अविनाशी है और सदा ध्यानीके संग रहेगा। जहाँ तक कि रूप और आकार की रचना है और जहाँ से कि अरूपी कारख़ाना शुरू हुआ है, वहाँ तक वही स्वरूप प्रेमी को पहुँचा देगा और अरूप से मिला देगा। और जिस क़दर कि चढ़ाई रास्ते में होती जावेगी, उसी

क़दर वह आकारी स्वरूप झीना और सूक्ष्म और ज़्यादा से ज़्यादा नूरानी होता जावेगा और एक दिन अरूप से मिला कर छोड़ेगा। और वहाँ पर सतगुरु का आकारी स्वरूप और उनका निज रूप (जो अरूप है) और प्रेमी सेवक का रूप भी जो ऊँचे देश में चढ़ाई के साथ सूक्ष्म और नूरानी होता चला गया है, सब एक यानी अरूप हो जावेंगे, और फिर निराकार यानी अरूपी स्वरूप से यह प्रेमी सेवक अपने कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के दर्शनों के आनन्द और बिलास को प्राप्त होगा।

९१—इस तौर से सतगुरु स्वरूप में प्रेम और प्रीति लगाने से बहुत जल्द प्रेमी का बंधन बाहर के रूपों से ढीला और कम हो जाता है, और अंतर में चढ़ाई निज रूप से चल कर मिलने के निमित्त आसान हो जाती है।

९२—लेकिन हर सूरत और हालत में कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और उनके निज स्वरूप की (जो कि अथाह और अपार और अनंत और प्रेम और ज्ञान का भंडार है) महिमा और बड़ाई, और मुख्यता भक्ति भाव की, अंतर और बाहर बर्ताव में ब-दस्तूर जारी रहेगी, क्योंकि वही सतगुरु का निज स्वरूप है और सेवक के पहुँचने का निज धाम है, यानी वहीं जाकर उसकी भक्ति पूरण होगी और वहीं उसको पूरण और अमर आनन्द प्राप्त होगा।

दसवाँ भाग

क़िस्म दूसरी

जवाब बाज़ तरकों का, जो कोई २ सतसंगी और दुनिया के लोग निस्बत बर्ताव समाध और तसबीर राधास्वामी महाराज के करते हैं।

६३—कोई २ सतसंगी और मूरत पूजा वाले ऐसा तर्क करते हैं कि राधास्वामी बाग़ में जो समाध और तसवीर पर हार-फूल चढ़ाये जाते हैं और परशाद भेंट भी रक्खा जाता है, यह कर्रवाई मूरत पूजा वालों के मुवाफ़िक़ है। सो यह कथन और समझ उनकी बिल्कुल ग़लत है। यहाँ यह कार्रवाई निशान सिर्फ़ अदब और प्यार का है, क्योंकि जो नये सतसंगी, राधास्वामी मत के, आते हैं, वे बहुत शौक़ के साथ देखना चाहते हैं कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल का कैसा स्वरूप था और वे तसवीर का दर्शन करके बहुत ख़ुश होते हैं। और जो राधास्वामी दयाल के चरणों में भाव और प्यार के सबब से, उमंग सेवा की उनके मन में पैदा होती है, तब वे हार और फूल और शीरीनी और नक़द वग़ैरा वहाँ पेश-कश करते हैं यानी सनमुख रखते हैं। हार और फूल उलट कर चढ़ाने वालों को दे दिया जाता है, और शीरीनी साधुओं और सतसंगियों को

वहीं तक़सीम कर दी जाती है, और नक़द रुपया साधुओं और बाग़ के ख़र्च में आता है।

६४—आम तौर पर मन का ख़वास है कि जिस किसी को परमार्थ में या दुनिया में बड़ाई और महिमा सुने, तो उसके दर्शनों की उमंग और चाह उठाता है। और जो वे उस वक़्त मौजूद न होवें तो उनकी तसवीर या निशान के देखने को चाहता है और उसको देख कर बहुत मगन होता है।

६५—अब ख़्याल करो कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के दर्शनों की या उनकी तसवीर या निशान के देखने की, किस क़दर अभिलाषा सतसंगी के दिल में (कि जिसने उनके निज स्वरूप का इष्ट धारण किया है और उनके निज धाम में पहुँचना चाहता है) पैदा होनी चाहिये? और जब वह इस इरादे से शहर आगरे में पहुँच कर राधास्वामी बाग़ में (जहाँ कि महाराज कुछ अरसे तक रहे) जाता है, और उनकी यादगार समाध और तसवीर और पलँग और भजन करने की चौकी और खड़ाऊँ वग़ैरा का दर्शन करता है, उस वक़्त उसका चित्त निहायत मगन होता है और उसके मन में भाव और प्यार ज़्यादा पैदा होता है। और जैसे कि कोई अपने प्यारे से मिलने को जावे, उस वक़्त कोई चीज़ उम्दा या तोहफ़ा उसके लायक ले जाता

है, वैसे ही यह प्रेमी अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़, भेंट और शीरीनी और हार-फूल वग़ैरा पेश करता है। और जो उमंग ज़्यादा है तो जिस क़दर बन सके, उस मकान की और भी सुविधाओं की जो वहाँ रात दिन रहते हैं, तन की सेवा करके अपना परमार्थी भाग बढ़ता है।

९६—क्योंकि जब राधास्वामी दयाल सर्व समर्थ और कुल्ल-मालिक हैं, और वक़्त छोड़ने चोले के उन्होंने अपनी ज़बान-ए-मुबारक से फ़रमाया कि हम बराबर निगरानी सतसंगियों की रक्खेंगे, तो जो कोई उनके चरणों में भाव और प्यार लाता है या उनकी महिमा सुन कर उमंग के साथ कोई सेवा करता है, तो वे ज़रूर उस पर थोड़ी-बहुत दया फ़रमावेंगे यानी उसको भक्ति और प्रेम दान देंगे।

९७—इस क़िस्म का बर्ताव मूरत-पूजा में किसी तरह दाख़िल नहीं हो सकता। हर मुल्क में और हर शहर में हर एक अपने २ प्यारे रिश्तेदार या दोस्त की यादगार या निशान या तसवीर को बारम्बार देखना चाहता है, और उसकी समाध या क़बर पर वक़्तन-फ़वक्तन हार-फूल और उम्दा चीज़ें खाने-पीने की पेश करता है यानी चढ़ाता है। फिर जो परमार्थी लोगों ने अपने मत के आचार्य की तसवीर या निशान या समाध के साथ ऐसी कार्रवाई करी तो क्या अचरज है? और वह किस तरह मूरत-पूजा में

दाख़िल हो सकता है ? ख़ास कर जब कि वहीं बाग़ में सतसंग मौजूद है और मूरत-पूजा वग़ैरा का बराबर खंडन होता है, और भी बानी में जा-ब-जा शब्द और सतगुरु वक़्त की भक्ति का हुक्म है ।

६८—लोग अपनी अन-समझता और अ-विचारता से तर्क और तान और ठठोली की बातें करते हैं । और जो वे ज़रा भी गौर करें और दुनिया के और मन के हाल पर नज़र करें तो उनको साफ़ मालूम होवेगा कि वह कार्रवाई जो महाराज राधास्वामी की समाध और तसवीर और निशानों वग़ैरा की निस्बत जारी है, वह ज़हूरा और निशान सिर्फ़ प्रेम और भाव और अदब का है । और असली कार्रवाई परमार्थ की यानी सतसंग और शब्द का अभ्यास, और जो सतगुरु या साध मिल जावें तो उनकी पूजा और सेवा और राधास्वामी दयाल की बानी का समझ २ कर पाठ और उनके बचनों का मनन ब-दस्तूर जारी है, फिर ऐसी जगह मूरत-पूजा का कहाँ दख़ल हो सकता है ?

६९—मालूम होवे कि एक मकान, ख़ास कर राधास्वामी मत के आचार्य और प्रगट करने वाले, सहज जोग यानी सुरत-शब्द अभ्यास के नाम से तैयार होना निहायत ज़रूर और मुनासिब मालूम हुआ, ताकि कुल्ल सतसंगी

हर एक देश के (जो कि राधास्वामी मत में शामिल होवें) एक जगह ख़ास पर, यानी सद्र मुक़ाम पर जहाँ कि राधास्वामी दयाल प्रगट हुए, किसी वक़्त-मुआयना पर जमा होकर आपस में मिलते रहें, और एक दूसरे की हालत प्रेम और भक्ति और अभ्यास की देख कर परस्पर फ़ायदा उठावें, और राधास्वामी मत के ताल्लुक़ जो किसी को कुछ दरियाफ़्त करना या कहना होवे, वे एक जगह बैठ कर उसका तज़करा करें और अपनी २ आज़मायश और तजर्बे का हाल थोड़ा-बहुत मुनासिब तौर से ज़ाहिर करके एक दूसरे की प्रीति और प्रतीत बढ़ावें और आपस में मुहब्बत और इत्तफ़ाक़ परमार्थी भाईचारे का पैदा होवे, और सब कोई अपने अपने मुवाफ़िक़ इस भारी और सहज और अन-उपमा-जोग मत और अभ्यास के प्रकाश करने, यानी अधिकारी जीवों के समझाने-बुझाने में मदद देवें, और ऐसा मकान सिवाय राधास्वामी बाग़ के, जहाँ राधास्वामी दयाल कुछ अर्से तक आप रहे और वहीं उनकी समाध बतौर यादगार बनाई गई है और उनकी तसवीर और निशानात वग़ैरा मौजूद हैं, दूसरा नहीं हो सकता।

१००—इस वास्ते मुनासिब है कि कुल्ल सतसंगी वक़्त मेले के (जो बिलफ़ैल साल भर में एक मर्तबा होता है) या दो साल में एक मर्तबा या साल भर में चंद बार

जब २ जिसको मौक़ा मिले, आगरे में आकर ज़रूर दर्शन समाध व तसवीर व निशान वग़ैरा का करें, और सतसंग में जो हर रोज़ जारी है, शामिल होकर अपने संशय और भरम दूर करावें और प्रीति और प्रतीत बढ़ावें और अभ्यास में मदद् लेवें, क्योंकि बग़ैर सतसंग के अहंकार और मूर्खता और विपरीत दूर नहीं हो सकती और न अंतर अभ्यास में, जैसी कि चाहिये, तरक़्क़ी मुमकिन है और न आपस में हर मुल्क और शहर के सतसंगियों में भाव और प्यार पैदा हो सकता है।

दसवाँ भाग

क़िस्म तीसरी

बाज़े सतसंगियों की अनजानता की बोल-चाल और समझौती का वर्णन और उनको नसीहत।

१०१—ऐसे सतसंगी कि जो संत सतगुरु से मिलें और उनके चरणों में थोड़ी-बहुत पहिचान करके उनका भाव और प्यार आवे, बहुत कम होंगे। और जो उन में से कोई ऐसा कहें या ख़्याल करें कि हम को सतगुरु वक़्त मिल गये और अब कोई ज़रूरत किसी के मानने की नहीं रही, यह कहन उनकी अन-समझता की है, क्योंकि जब वे पहिले सतसंग में आये और उपदेश लिया, उस वक़्त तो उनको

सतगुरु में वैसा भाव (कि जो सतसंग और अभ्यास करके कोई दिन में पैदा हुआ) नहीं था, और उस वक़्त वे कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के निज स्वरूप में, जो कि अपार और अनंत है, भाव और प्यार लाकर राधास्वामी मत में शामिल हुये ।

१०२—फिर रफ़्ता रफ़्ता सतसंग और अभ्यास करके और घट में परचे पाकर उनकी समझ बढ़ी, यानी सतगुरु को राधास्वामी दयाल का निज पुत्र और मंज़ूर-ए-नज़र यानी प्यारा मानने लगे । और किसी २ ने ऐसी समझ धारण की कि सतगुरु राधास्वामी दयाल के देह स्वरूप हैं और राधास्वामी पद उनका निज रूप और निज धाम है । इन दोनों सूरतों में निज स्वरूप राधास्वामी दयाल की महिमा और बड़ाई ब-दस्तूर रही, यानी वह पिता और भंडार स्वरूप हुआ और देह रूप निज धार और पुत्र स्वरूप हुआ । फिर जब कि इन दोनों स्वरूपों की महिमा और बड़ाई सतसंगी के हिरदे में समझ-बूझ के साथ बस गई और जो वह समझदार और विचारवान है तो राधास्वामी दयाल के उस देह स्वरूप की, जो उन्होंने प्रथम धारण करके राधास्वामी मत और उसकी नवीन और सहज जुगत को प्रगट किया, वैसी ही महिमा और बड़ाई समझ कर प्रीति भाव उनके चरणों में लावेगा, जैसा कि अपने वक़्त के

सतगुरु के देह स्वरूप में। लेकिन जो कि वह स्वरूप उसके सामने प्रगट नहीं है यानी गुप्त हो गया, इस वास्ते जो उसकी यादगार और बानी-बचन या निशान या तसवीर मौजूद है, तो उसको उसी नज़र, भाव और अदब और प्यार से देखेगा और उसके साथ वैसा ही बर्ताव करेगा, जैसे कि वक़्त के सतगुरु की तसवीर और उनके बैठने और पहिरने और बर्तने की चीज़ों से बर्तता है क्योंकि निज रूप, दोनों देह स्वरूपों का एक ही है और वह अमर और अजर और सदा एक-रस मौजूद है। देह स्वरूप जुदा २ होंगे पर जो शब्द कि उनमें व्यापक है, वह हमेशा एक ही है। फिर जो किसी देह स्वरूप का कोई निरादर करेगा या उसको ओछा समझेगा तो गोया उसने निज रूप का निरादर किया और उसको ओछा समझा। फिर ऐसी समझ से दूसरा देह स्वरूप जिसमें वही निज रूप यानी शब्द मौजूद है, कैसे उससे राज़ी होगा ?

१०३—ऐसी समझ और ऐसा बर्ताव ज़ाहिर करता है कि उस सतसंगी की पहिचान और समझ संत सतगुरु और उनके निज रूप की, जैसा कि चाहिये, बिलकुल नहीं आई। नहीं तो वह एक देह स्वरूप का आदर और दूसरे देह स्वरूप का निरादर न करता यानी दोनों स्वरूप में किसी तरह का भेद और फ़र्क़ न समझता। बल्कि जो कि

संत सतगुरु बनाये हुये उस आदि स्वरूप या भेजे हुए निज रूप के हैं, तो वह आदि देह स्वरूप और निज स्वरूप, दोनों पिता के स्वरूप हुये, और मौजूदा स्वरूप संत सतगुरु का पुत्र रूप हुआ। तो हर सूरत और हालत में पिता रूप की महिमा और आदर ज़्यादा चाहिये, न कि कम। और जो कोई यकताई समझे तो भी दोनों में भाव और प्यार बराबर होना चाहिये और जो कोई कमी करे तो उसकी समझ ओछी और ग़लत है।

१०४—यह बात सही है कि ऐसा बर्ताव जैसा कि ऊपर लिखा गया, वक़्त मौजूदगी दोनों स्वरूपों के हो सक्ता है और जब कि कोई स्वरूप गुप्त हो गया, तब उस के साथ बर्ताव भी बन्द हो गया। लेकिन उस स्वरूप के तसवीर या बानी-बचन या कोई यादगार में वैसा ही बर्ताव प्यार और अदब के साथ किया जावेगा, जैसा कि मौजूदा सतगुरु के तसवीर और बानी-बचन और कार-आमद चीज़ों में किया जाता है।

१०५—निज रूप की महिमा और बड़ाई भारी है और हमेशा एक सी रहेगी, और कुल्ल जीव पहिले उसी में प्रीति और प्रतीत लाकर राधास्वामी मत में शामिल होवेंगे और पीछे आहिस्ता २ थोड़ी-बहुत पहिचान सतगुरु स्वरूप की करते जावेंगे और उसी मुवाफ़िक़ उसमें भाव और प्यार

लाते जावेंगे । और जब तक कि पूरी पहिचान नहीं आवेगी, तब तक पूरी प्रीति और प्रतीत ब-दस्तूर निज स्वरूप की की जावेगी । और जोकि कुल्ल सतसंगियों का निशाना और पहुँचने और विश्राम करने का धाम वही निज स्वरूप यानी राधास्वामी पद है, इस वास्ते उसकी प्रीति और प्रतीत कभी घट नहीं सकी । और सतगुरु रूप की प्रीति और प्रतीत में, मुवाफ़िक़ हर एक सतसंगी की समझ-बूझ और पहिचान और परचों के, हमेशा फ़र्क़ रहेगा यानी कुल्ल सतसंगियों की प्रीति-प्रतीत में बहुत से दरजे होंगे । फिर जो कोई अपनी प्रीति-प्रतीत को सिर्फ़ सतगुरु के स्वरूप पर ख़त्म करे, तो यह मुनासिब नहीं है । निज स्वरूप और देह स्वरूप का भेद हमेशा रहेगा और शब्द स्वरूप की महिमा देह स्वरूप से ज़्यादा समझनी चाहिये । और जब कोई पूरी समझ लेकर इन दोनों की एकताई करे तो भी उसकी बोल-चाल ऐसी होनी चाहिये कि जिस में किसी स्वरूप का निरादर या ओछापन न पाया जावे । और मुख्यता हर हाल में शब्द स्वरूप की रहेगी । पर जब तक कि देह स्वरूप मौजूद है, ज़ाहिर में उस की मुख्यता और अन्तर में शब्द स्वरूप, और भी देह स्वरूप, की मुख्यता (जहाँ तक कि देह स्वरूप की पहुँच है) करे, तो दुरुस्त है जैसा कि इस शब्द में राधास्वामी दयाल ने फ़रमाया है :—

शब्द

गुरू मोहिं अपना रूप दिखाओ ॥ टेक ॥

यह तो रूप धरा तुम सरगुन, जीव उबार कराओ ॥ १ ॥
रूप तुम्हारा अगम अपारा, सोई अब दरसाओ ॥ २ ॥
देखूँ रूप मगन होय बैठूं, अभय दान दिलवाओ ॥ ३ ॥
यह भी रूह पियारा मोको, इस ही से उसको समझाओ ॥ ४ ॥
बिन इस रूप काज नहिं होई, क्योंकर वाहि लखाओ ॥ ५ ॥
ताते महिमा भारी इसकी, पर वह भी लखवाओ ॥ ६ ॥
वह तो रूप सदा तुम धारो, याते जीव जगाओ ॥ ७ ॥
यह भी भेद सुना मैं तुमसे, सुरत शब्द मारग नित गाओ ॥ ८ ॥
शब्द रूप जो रूप तुम्हारा, वामें भी अब सुरत पठाओ ॥ ९ ॥
डरता रहूँ मौत और दुख से, निरभय कर अब मोहिं छुड़ाओ ॥१० ॥
दीन दयाल जीव हितकारी, राधास्वामी काज बनाओ ॥ ११ ॥

१०६—जो कि पूरे प्रेमी सतसंगी जिनको वक़्त के संत सतगुरु स्वरूप में पूरा भाव आया है, बहुत कम होंगे। और बाक़ी दरजे-ब-दरजे अपनी २ प्रतीत के मुवाफ़िक़ सतगुरु में भाव और प्यार लावेंगे। और बाज़े नवीन सतसंगी उनको सिर्फ़ उपदेश-करता और साधना करने वाले ख़्याल करके उसी मुवाफ़िक़ उनको बड़ा मानेंगे और पूरा भाव निज स्वरूप यानी राधास्वामी दयाल के चरणों में लावेंगे। इस वास्ते अव्वल दरजे के सतसंगियों को मुनासिब और लाज़िम हैं कि अपनी बोल-चाल और ज़ाहिरी बर्तावा, निस्बत राधास्वामी दयाल के आदि स्वरूप, और

उसके निशान और यादगार वग़ैरा और वक़्त के सतगुरु के स्वरूप और सामान वग़ैरा में इस तौर पर दुरुस्त रक्खें जैसा कि ऊपर बयान हुआ है। और एक-अंगीपन की बातें हर एक के रू-ब-रू न करें और ऐसा एक-अंगीपन इख़्तियार न करें जिसमें किसी स्वरूप का निरादर या ओछापन पाया जावे।

१०७—अपने वक़्त के सतगुरु स्वरूप में उनको इख़्तियार है चाहे जिस क़दर भाव और प्यार लावें और उमंग के वक़्त चाहे जैसी सेवा करें। मगर इस क़दर होशियारी रक्खें कि किसी हालत और किसी सूरत में आदि देह स्वरूप या निज स्वरूप राधास्वामी दयाल के आदर भाव और महिमा में फ़र्क़ न आवे, और न किसी तरह पर उनका निरादर ज़ाहिरी बर्ताव में पाया जावे। इसमें उन सतसंगियों को निज स्वरूप और आदि देह स्वरूप और मौजूदा सतगुरु स्वरूप की दया और मेहर बराबर प्राप्त होगी। नहीं तो, बे-परवाही और बे-अदबी की बोल-चाल और बर्ताव में वे किसी न किसी स्वरूप की दया से महरूम रहेंगे और उनकी भक्ति में थोड़ा-बहुत ख़लल पड़ेगा और समझ-बूझ भी उनकी किसी क़दर ओछी और ना-दुरुस्त रहेगी।

१०८—ख़ुलासा यह है कि सच्चे प्रेमी सतसंगी और

कुल्ल सतसंगियों को, चाहे वे जिस दरजे के होवें, आपस में मेल-मिलाप रखना चाहिये। और सब को एक ही इष्ट कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के निज स्वरूप का धारण करना मुनासिब है। और सब को वक़्त के संत सतगुरू में अपनी २ समझ और प्रतीत के मुवाफ़िक़ भाव और प्यार और अदब के साथ बर्तावा करना चाहिये। और जो गृहस्थ या विरक्त सतसंगी उपदेशक होवें (ब-शरते कि वे खुद मतलबी और मानी और अहंकारी न हो जावें) उन में भी मुवाफ़िक़ हर एक के दरजे के, प्रीति-भाव के साथ बर्तावा चाहिये, क्योंकि जो सब का इष्ट एक ही, यानी राधास्वामी दयाल हैं और सब का निज घर भी एक ही यानी राधास्वामी धाम है और सब का असली उपदेशक वही बानी और बचन राधास्वामी दयाल के हैं, तो सब का आपस में इत्तफ़ाक़ और दिली मुहब्बत और प्यार होना चाहिये।

१०६—ज़ाहिरी उपदेश चाहे जिससे हासिल किया होवे, पर हिदायत और तालीम और जुगत और अभ्यास तो सब का एक ही होगा। इस वास्ते कुल उपदेशक और उपदेशियों को राधास्वामी दयाल के दरबार में प्यार-भाव के साथ मिलना चाहिये, और इसी तरह से जहाँ-कहीं जिस किसी का इत्तफ़ाक़ से मेला हो, तो हर एक सतसंगी को मुनासिब है कि एक दूसरे के साथ मुहब्बत से पेश

आवे और परमार्थी भाईचारे के मुवाफ़िक़ बर्ताव करे और ईर्षा और विरोध और ख़ुद्-मतलबी को अपने मन में दख़ल न देवे, क्योंकि यह दस्तूर और आदत संसारी जीवों की है। और सच्चे परमार्थियों का स्वभाव उन से जुदा होना चाहिये यानी आम तौर पर उनके मन में सफ़ाई और प्यार और दया सतसंगी भाइयों पर, ख़ास कर, और कुल्ल जीवों की तरफ़, आम तौर से, बग़ैर लिहाज़ क़ौम और मज़हब और देश और रंग-रूप के, जारी होनी चाहिये।

ग्यारहवाँ भाग

वर्णन कैफ़ियत कुल्ल-मालिक के औतार स्वरूप की, और उस की ज़रूरत

११०—बाज़े अपनी अनजानता और ओछी समझ के मुवाफ़िक़ ख़याल करते हैं कि औतार स्वरूप कुल्ल मालिक नहीं हो सकता, या यह कि कुल्ल-मालिक देह स्वरूप में नहीं समा सकता। यह समझ उनकी दुरुस्त नहीं है जैसा कि इस दृष्टान्त से ज़ाहिर होता है।

दृष्टांत—जिस वक़्त कि समुद्र में ज्वार-भाटा आता है यानी उसकी लहर उठ कर समुद्र से सौ-सौ कोस तक, ब-राह-ए-दरिया बढ़ती चली जाती है और कुछ अर्से ठहर कर फिर समुद्र में लौट आती है, तो जिस क़दर देर तक वह लहर सौ कोस में फैली रही, वह समुद्र की लहर

कहलाती है, यानी ख़ुद समुद्र वहाँ मौजूद है और अपने समुद्र रूप से (जो कि बहुत बड़े हिस्से ज़मीन को घेरे हुये है) जुदा नहीं, और सिमट कर फिर वही समुद्र रूप हो जाती है। इसी तरह औतार स्वरूप कुल्ल मालिक की लहर है कि जो उस अपार सिंध स्वरूप चैतन्य से निकल कर और ब्रह्मांड में होकर पिंड में आकर ठहरी, और जिस क़द्र अर्से तक उस का पिंड में ठहराव रहा, वह लहर अपने सिंध स्वरूप से जुदा नहीं हुई, और रात-दिन में चंद बार (अभ्यास के वक़्त) सिमट कर सिंध स्वरूप में उलट कर समा जाती है और फिर उत्थान करके, और ब्रह्मांड में रवाँ होकर, पिंड में ठहर जाती है। इस हालत में यह लहर रूप कभी पिंड के मुवाफ़िक़ महदूद नहीं होता और हमेशा सिंध के साथ उसका मेल, और सिंध के मुवाफ़िक़ अपार और अनंत रहता है।

१११—इस दृष्टांत से साफ़ ज़ाहिर है कि लोगों की समझ, निस्बत महदूद होने कुल्ल-मालिक सिंध स्वरूप के, ब-सबब फैलने यानी उतर आने उस की लहर के, पिंड में, सही और दुरुस्त नहीं है। यह कलाम आम जीवों की निस्बत सही हो सकता है कि उनकी धार जो सिंध से रँवा होकर पिंड में आकर ठहरी, वह अपने आप से उलट नहीं सकती, यानी सिंध स्वरूप से मिल कर सिंध रूप नहीं होती।

लेकिन औतार स्वरूप की निस्बत ऐसा ख़्याल करना ग़लत है, क्योंकि उनके सब पट कुले होते हैं और छिन भर में, वह लहर या धारा, सिंध स्वरूप और कभी पिंड में धार रूप होती रहती है और कभी सिंध से जुदा नहीं होता, यानी उसके और सिंध के बीच में कोई पट या परदा हायल नहीं होता है।

११२—ऐसा औतार स्वरूप जब कभी प्रगट हुआ, वह गोया कुल्ल-मालिक ने आप नर-रूप धारण किया। फिर उस स्वरूप की और कुल्ल-मालिक की महिमा बराबर है। लेकिन इस औतार स्वरूप की पहिचान कठिन है। जीवों की क्या ताक़त है कि वे अपनी महदूद और ओछी समझ से इस औतार स्वरूप की गत-मत जान सकें। यह पहिचान थोड़ी-बहुत उसको आवेगी कि जो उनका, कोई काल, प्रीति-भाव के साथ संग करेगा और उनकी जुगती का उन से उपदेश लेकर, उसकी थोड़ी-बहुत अंतर में कमाई करके, उनकी क़ुदरत और दया की अपने घट में परख करेगा, या उसको थोड़ी-बहुत पहिचान आवेगी कि जिसको वे अपनी दया से आप बख़्शिश फ़रमावें। आम तौर पर, वे देह में बैठ कर जीवों के मुवाफ़िक़ बर्ताओ करते हैं और अपनी क़ुदरत और ताक़त का मुतलक़ दिखावा नहीं करते और न किसी को जताते हैं कि वे कौन हैं। फिर जीवों की क्या ताक़त कि उनकी गति को जान सकें?

११३—जो कोई कहे कि मालिक को औतार लेने को क्या ज़रूरत है, और जो उस ने औतार लिया यानी पिंड में आन समाया, तो क्या निज स्थान ख़ाली हो गया ?

जवाब इसका यह है कि ज्वार-भाटे के वक़्त, जब समुद्र लहर रूप होकर सौ सौ कोस तक अपने किनारे से दूर चला गया, तो क्या उसका समुद्र रूप ख़ाली हो गया या कहीं जाता रहा ? नहीं, वह दोनों जगह एक ही वक़्त में बराबर मौजूद है। उसका निज रूप न घटा, न बढ़ा। इसी तरह औतार स्वरूप का हाल समझना चाहिये कि उस का, दोनों हालतों में, सिंधस्वरूप एकसाँ क़ायम रहता है।

११४—और औतार स्वरूप की ज़रूरत की वजह यह है कि कुल्ल-मालिक का निज भेद कोई नहीं जान सक्ता, जब तक कि वह आप न जनावे। और जो भक्ति रीत कि उस मालिक ने संत रूप धर कर आप जारी फ़रमाई, उससे भी सब जीव बे-ख़बर हैं। वह रीति भी वह आपही जारी फ़रमाता है और जो कि निज रूप से यह कार्रवाई दुरुस्त नहीं हो सक्ती, यानी उसकी अंतरी हिदायत और उपदेश को कोई नहीं सुन सकता है या समझ सक्ता है, और न जीव को यह ख़बर पड़ सकती है कि अंतर में कौन बोलता है और न किसी बचन की (बग़ैर पहिले उपदेश और हिदायत ज़ाहिरी स्वरूप से पाने के) समझ आ सक्ती

है, क्योंकि जितने मत दुनिया में जारी हैं, उनके आचार्य टटोलवाँ चले, यानी वे निज भेद से उस स्थान और उसके धनी के जहाँ तक कि उनकी पहुँच हुई, वाक़िफ़ न थे। दुनिया में पैदा होकर और भेदी यानी गुरू से मिल कर उनको ख़बर पड़ी, और फिर अभ्यास करके और मन-माया के बहुत से झकोले खाकर, उनको उस पद की प्राप्ति हुई। तब उन्होंने उसी पद की भक्ति और पूजा या उसके ज्ञान यानी समझ-बूझ का अपने साथियों को, जिन्होंने उनका बचन माना, उपदेश किया। और कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल का देश और भेद किसी ने न जाना, क्योंकि सर्व मतों के आचार्य किसी न किसी स्थान पर माया की हद्द में रहे और सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल का भेद और देश का हाल और वहाँ पहुँचने का तरीक़ा कुल्ल-मालिक राधा-स्वामी दयाल ने आप इस दुनिया में औतार स्वरूप धर कर प्रगट किया। और जिन जीवों ने उनका बचन माना, उनको अपने चरणों की भक्ति की रीति समझाई और उसकी कारवाई आप कारवाई और अपने चरणों के प्रेम की दात आप बख़्शिश करी।

११५—जीवों की सुरत यानी रूह इस क़दर पिंड में नीचे उतर गई है कि वे कुल्ल-मालिक के निज रूप का बचन नहीं सुन सकते और न समझ सकते हैं। और जो

फ़र्ज़ किया कि किसी तरह से कोई बचन उतर कर सुनाया भी जावे, तो उसमें अनेक तरह के संशय और भरम पैदा करके, उसकी प्रतीत नहीं करते और न उसके मुवाफ़िक़ कारवाई करने को तैयार हो सकते हैं। इस वास्ते, जब कि कुल्ल-मालिक ने देखा कि सब जीव माया के घेर में कहीं न कहीं अटक रहे और निज घर का भेद न पाकर उससे बिल्कुल बे-ख़बर रहे, और वहाँ कोई न जा सका और न रास्ता वहाँ पहुँचने का किसी को मालूम पड़ा, तब कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल ने अति दया करके आप संत रूप धारण किया और अपना निज भेद और निज घर में पहुँचने का तरीक़ा आप प्रगट किया। अब जीवों को चाहिये कि राधास्वामी दयाल के बानी और बचन को अच्छी तरह समझ कर मानें और उसके मुवाफ़िक़ अभ्यास शुरु करें और चरणों में नित्त सतसंग और अभ्यास करके प्रीति और प्रतीत बढ़ाते रहें तो राधास्वामी दयाल की दया से एक दिन उनका कारज दुरुस्त बन जावेगा यानी माया के घेर से निकल कर निज घर यानी दयाल देश में बासा पावेंगे और अमर आनंद को प्राप्त होवेंगे। और जो वे ऐसा न करेंगे तो माया के देश में बारम्बार किसी न किसी क़िस्म की देह धर कर दुख-सुख भोगते रहेंगे और कभी सच्चा उद्धार उनका नहीं होगा, यानी दयाल देश में नहीं

जाने पावेंगे और न पूर्ण और अमर आनंद को प्राप्त होंगे।

११६—जिन जीवों को कि संत सतगुरु, अपनी दया से सत्त पुरुष राधास्वामी देश में पहुँचावें, वे जीव फिर उलट कर इस देश में नहीं आ सकते, क्योंकि वहाँ का आनंद और विलास ऐसा गहरा और भारी है कि वह उन से छोड़ा नहीं जा सकता और फिर माया देश की तरफ़ उनकी तवज्जह नहीं होती।

११७—जो कोई पूछे कि ब्रह्म पद का भी औतार स्वरूप प्रगट होता है या नहीं, तो जवाब उसका यह है कि हाँ होता है, क्योंकि जो ऐसा न होता तो ब्रह्म पद का भी भेद पूरा २ किसी को मालूम न होता। जब २ ब्रह्म ने औतार जोगी और जोगेश्वर रूप धारण किया, तब २ उस पद का भेद और उस रचना का हाल जो उसके नीचे है, प्रगट किया, और गुरुवाई की चाल चलाई। और मालूम होवे कि पूर्ण औतार ब्रह्म का कभी २ होता है पर कलायें उस मुक़ाम से अक्सर प्रगट होती रहती हैं और रचना की सम्हाल करती रहती हैं।

११८—और मालूम होवे कि रचना में संत अक्सर प्रगट होते रहते हैं, पर गुप्त रहते हैं और जब तक कि राधास्वामी दयाल की मौज न होवे सतसंग खड़ा नहीं करते और न आम तौर पर उपदेश संत मत का करते हैं।

११६—संत सतगुरु को इख़्तियार है कि जिस को वे पसंद करें, सतसंग और भक्ति करा कर संत बना देवें। जिस पर ऐसी कृपा होवे, वही बड़-भागी है।

बचन ६

वर्णन इस बात का कि जब तक गुरुमुखता नहीं आवेगी यानी राधास्वामी दयाल के चरणों में गहरी और मुख्य प्रीत नही होगी, तब तक पूरा काम नहीं बनेगा।

१—कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल बे-परवाह हैं, यानी किसी से कुछ नहीं चाहते। पर जो कोई कि उनके चरणों में प्रीति करेगा, उस का भारी फ़ायदा होगा यानी देह के दुख-सुख और जनम-मरन के कष्ट-क्लेश से छुटकारा हो जावेगा।

२—ज़ाहिर है कि दुनिया में कुल्ल जीव किसी न किसी में प्रीति धर कर कार्रवाई कर रहे हैं यानी जिस को जिस किसी चीज़ या काम का शौक़ है, उसी को वह तवज्जह और मेहनत के साथ करता है और जिस किसी में उस का प्यार है, वहीं तन-मन-धन ख़र्च करता है और उसी के संग में उस को सुख और आराम मिलता है।

३—इसी तरह जो कोई राधास्वामी दयाल के चरणों

में, पता और भेद धुर धाम और उसके रास्ते का, और जुगत चलने की, भेदी अभ्यासी से दरियाफ़्त कर के, प्यार लावे और मिलने के निमित्त शौक़ के साथ जतन शुरू करे, तो उसको भी अंतर में किसी क़दर सुख और रस मिलेगा और जिस क़दर चाल बढ़ती जावेगी, उसी क़दर वह सुख और आनंद भी बढ़ता जावेगा, और अपने प्रीतम राधास्वामी दयाल की दया की भी परख होती जावेगी।

४—राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीति, साथ प्रतीत के, करना चाहिये यानी ऐसा निश्चय धारण करे कि वे कुल्लमालिक और सर्व समर्थ और प्रेम और आनंद का भंडार हैं। और यह निश्चय सतगुरु के सतसंग और उन की जुगत की थोड़ी-बहुत अंतरी कमाई करने से आवेगा।

५—यह प्रीति राधास्वामी दयाल की महिमा सुन कर और देह और दुनिया की नाशमानता का हाल देख कर आवेगी। यानी सतसंग के बचन सुन कर यह मालूम पड़ेगा कि सिवाय राधास्वामी दयाल के, और कोई जीव का सच्चा संगी और हितकारी नहीं है कि जो दुख-सुख में इस की सहायता करे। और यह संसार और उसके भोग और सुख ठहराऊ नहीं है और न जीव की देह ठहराऊ है। एक दिन ज़रूर सब को छोड़ना पड़ेगा और उस वक़्त का संगी और सहायक हर एक को ज़रूर दरकार है। और ऐसे संगी और

सहायक, कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और उनके चरणों की धार है, और वह घट २ में मौजूद है।

६—जो कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल कुल्ल रचना के कर्ता और प्रेरक और फिर सब से न्यारे हैं, इस वास्ते जो कोई उनके चरणों में सच्ची प्रीति करे, वह भी एक दिन सब से न्यारा होकर उनकी मेहर और दया से उनके धाम में पहुँचेगा और उन के दर्शनों के परम बिलास और आनंद को प्राप्त होगा।

७—पर शर्त यह है कि वह, जैसे कि राधास्वामी दयाल को सब का करता और सब से बड़ा माना है, उसी मुवाफ़िक़, उन से सब से ज़्यादा प्रीति और भाव करे। यह हालत जल्दी नहीं आ सक्ती है। लेकिन जो कोई उनके चरणों में प्रीति शुरू करेगा और आहिस्ता २ सतसंग और अंतरमुख अभ्यास करके उसको बढ़ाता जावेगा, तो रफ़्ता २ एक दिन उसकी प्रीति की मुख्यता उनके चरणों में ज़रूर हो जावेगी और तब ही उसका काम पूरा समझना चाहिये।

८—ऐसी गहरी प्रीति जब आवेगी, तब दिन २ अभ्यास करके राधास्वामी धाम की तरफ़ इसकी नज़दीकी होती जावेगी और उनकी दया और मेहर और क़ुदरत नज़र में आती जावेगी। और जिस क़दर कि प्रीति और

प्रतीत बढ़ती जावेगी, उसी क़दर इसकी चाल भी तेज़ होती जावेगी और रस और आनन्द भी बढ़ता जावेगा। ऐसे प्रेमी अभ्यासी का नाम गुरुमुख है और वही निज धाम में पहुँच कर बासा पावेगा यानी अपने सच्चे माता-पिता राधास्वामी दयाल का दर्शन पाकर परम आनन्द को प्राप्त होगा।

९—देखो दुनिया में स्त्री और पुरुष की कैसी गाढ़ी प्रीत होती है कि अपने पति के ख़ातिर स्त्री कुल कुटुम्ब-परिवार को छोड़ कर चली आती है, और उसके सुख में सुख और उसकी सेवा और उसके संग में अपना आनंद और आराम मानती है। हरचंद कि अपने और पति के कुटुम्ब-परिवार में दरजे-ब-दरजे प्रीति उसकी रहती है, पर पति के साथ मुख्यता यानी सब से ज़्यादा भाव और प्यार रहता है, और ज़रूरत के वक़्त अपने पुत्र का भी संग छोड़ कर पति के संग रहना ख़ुशी से मंज़ूर और क़ुबूल करती है। और विचार करो कि वह कभी पति का सुमिरन और ध्यान नहीं करती, लेकिन गहरी प्रीति के सबब से पति का स्वरूप उसके हिरदे में बसा रहता है और हर वक़्त उसके वास्ते मुहब्बत और सेवा का जोश, उमंग के साथ, उठता रहता है।

१०—परमार्थ में जिस किसी को गहरी प्रीति राधास्वामी दयाल के चरणों में आगई, वही बड़भागी है। यानी

कुटुम्ब-परिवार और दुनिया के भोग और सामान से ज़्यादा भाव और प्यार, जिस किसी का, राधास्वामी दयाल के चरणों में आया और वह दिन २ बढ़ता जाता है, उसी का नाम गुरुमुख है और वही परम पद पावेगा।

११—ऐसी प्रीति का चरणों में पैदा होना ना-मुमकिन या निहायत मुश्किल नहीं मालूम होता, क्योंकि देखने में आता है कि दुनिया में लोग सिर्फ़ स्त्री और पुत्र से नहीं, बल्कि और लोगों से भी, जो कि रिश्तेदार और बिरादरी और हम-क़ौम भी नहीं हैं, ऐसी गहरी प्रीति करते हैं कि जिसको एक-जान-दो-क़ाबिल कहना चाहिये यानी कुल्ल अपने प्यारों और रिश्तेदारों और धन और सामान वग़ैरा से ज़्यादा प्रीति अपने दोस्त के साथ करते हैं और उसको ज़िन्दगी भर वैसा ही निभाते हैं।

१२—इसी तरह बाज़े जीव एक २ इन्द्रिय के भोग में या किसी और शौक़ में बँध कर, अपने कुटुम्ब-परिवार और धन और माल, बल्कि अपनी देह और जान तक की प्रीति का ख़्याल छोड़ कर, उसी एक भोग और शौक़ का रूप हो जाते हैं और अपनी इज़्ज़त-हुरमत का भी ज़रा ख़्याल नहीं करते, जैसे शराबी और जुआरी और सैलानी और तमाशबीन वग़ैरा।

१३—खुलासा यह है कि जिसके मन में जिस बात

का गहरा शौक़ पैदा हो जाता है, फिर वह उस शौक के पूरा करने के वास्ते पूरी कार्रवाई करता है, और कुटुम्ब-परिवार और ज़ात-पाँत और इज़्ज़त और हुरमत और अपने तन, मन और धन का कुछ भी ख़्याल और सोच-विचार नहीं करता, और न जगत की बदनामी से डरता है और न किसी की शर्म और लाज उसको उसके काम से रोक सकती है।

१४—फिर जो किसी ने परमार्थ में, वास्ते अपने जीव के सच्चे कल्यान और उद्धार के, कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और गुरू और प्रेमी और भक्त-जन में विशेष प्रीति करी और मामूली चाल से ज़्यादा क़दम बढ़ा कर रक्खा यानी सच्चे परमार्थ में ज़्यादा प्रीति करी और तन-मन-धन ज़्यादा लगाया, तो कुछ मुश्किल और अचरज की बात नहीं है। दुनिया के लोगों को, उसकी हँसी करना या उसकी चाल पर तान मारना नहीं चाहिये, बल्कि जो कार्रवाई वह करे उसको बजा और मुनासिब समझ कर उसकी तारीफ़ करना चाहिये, और जो बने तो आप भी उसी के मुवाफ़िक थोड़ी-बहुत परमार्थी कार्रवाई यानी सतसंग और सेवा और भजन करके अपना जन्म सुफल करें। बर-ख़िलाफ़ इसके, दुनिया के लोगों का यह हाल है कि परमार्थियों की निंदा, बग़ैर समझे-बूझे, जल्द

करते हैं और उन के धमकाने को तैयार होते हैं और जो कोई संसार में चाल-कुचाल चले उसकी ख़बर भी नहीं लेते।

१५—जो कोई कहे कि बग़ैर देखे या कुछ रस पाये गहरी प्रीति नहीं हो सक्ती, तो यह बात दुरुस्त है। सच्चे परमार्थी को मुनासिब है कि पहले सतसंग करके कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीति लावे और जो उपदेश ध्यान और भजन का, उन्होंने सहज जुगत से जारी फ़रमाया है, उस के मुवाफ़िक कोई दिन अभ्यास करे, तो उस को वे अपनी दया से थोड़ा-बहुत अंतर में ज़रूर रस देंगे। फिर प्रीति भी आहिस्ता २ पैदा होती जावेगी और जैसा कि रस और आनंद अंतर में बढ़ता जावेगा और परचे मिलते जावेंगे, उसी क़दर प्रीति और प्रतीत भी बढ़ती जावेगी।

१६—ज़ाहिर में प्रेमी सतसंगी (जो राधास्वामी दयाल के उपदेश के मुवाफ़िक प्रीति सहित साधना कर रहे हैं), चाहे वे विरक्त हैं या गृहस्थ, राधास्वामी दयाल की देह हैं। सो जिस किसी को जब उमंग सेवा की उठे, तब उसको चाहिये कि इन की सेवा करे। उस सेवा का फल राधास्वामी दयाल बख़्शेंगे, यानी प्रेम और भक्ति सेवक के हृदय में बढ़ावेंगे।

१७—जो किसी को भाग से संत सतगुरु मिल जावें,

तो उनको राधास्वामी का देह स्वरूप समझना चाहिये। और जो सेवा कि प्रेमी सतसंगी उमंग के साथ उनके चरणों में करेगा, वह ख़ुद राधास्वामी दयाल की सेवा समझी जावेगी। और उसका फल राधास्वामी दयाल संत सतगुरु स्वरुप से देवेंगे यानी अंतर में ज़्यादा प्रेम और अभ्यास में विशेष रस बख़्शेंगे।

१८—जिस क़दर कि प्रेमी सेवक की प्रीति संत सतगुरु के चरणों में पैदा होती और बढ़ती जावेगी, उसी क़दर उनके निज स्वरूप यानी कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीति और प्रतीत बढ़ती और पकती जावेगी और सुरत और मन, संत सतगुरू स्वरूप को अभ्यास के समय अगुवा करके, सहज में सिमटेंगे और घट में आहिस्ता २ ऊँचे की तरफ़ को चढ़ेंगे।

१९—संत अथवा राधास्वामी मत में बाहरी पूजा प्रीति भाव के साथ संत सतगुरु के चरणों में की जाती है, क्योंकि उनका स्वरूप जो कि अभ्यासी के अंतर में ध्यान करके प्रगट होगा, वह चैतन्य और अकाल रूप है। और जहाँ तक कि रूप-रंग-रेखा है, वहाँ तक वह स्वरूप दरजे-ब-दरजे सूक्षम और नूरानी होता हुआ अभ्यासी के संग जावेगा और सच्चे अरूप पद में, जोकि रूप-रंग-रेखा से न्यारा है, पहुँचा देगा।

२०—और अंतर में सेवा संत सतगुरू के निज रूप की है, जो कि शब्द और प्रकाश स्वरूप है। और वह सेवा यह है कि चित्त देकर आवाज़ को घट में सुनना और उसके आसरे सुरत को चढ़ाना। सो जब तक कि संत सतगुरू के ज़ाहिरी स्वरूप में गहरा प्यार नहीं आवेगा, तब तक शब्द स्वरूप भी, जैसा कि चाहिये, प्रगट नहीं होगा, और न उसमें गहरी प्रीति आवेगी यानी अंतर में चढ़ाई संत सतगुरु के ज़ाहिरी स्वरुप की मदद से होवेगी, जो उसमें गहरा प्रेम रहा है।

२१—खुलासा यह है कि जब तक संत सतगुरु नहीं मिलेंगे, तब तक पूरी और गहरी प्रीति और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरणों में नहीं हो सक्ती है, और न सुरत की चढ़ाई माया के घेरे के पार मुमकिन है। लेकिन सच्चे परमार्थियों को मुनासिब और लाज़िम है कि जिस क़दर बन सके, राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीति और प्रतीत लाकर, अपना अभ्यास ध्यान और भजन का, प्रेमी सतसंगी की मदद से जारी रक्खें और जो उनके सच्चा दर्द है, तो संत सतगुरु भी ज़रूर सवेर-अवेर मिल जावेंगे और फिर उनकी दया और मेहर से प्रीति और प्रतीत ज़ाहिरी और अंतरी, दोनों रूपों में बढ़ती जावेगी और आहिस्ता २ एक दिन कारज पूरा बन जावेगा।

बचन ७

राधास्वामी दयाल के चरणों में गुरमुख-अंग का बर्ताव और उस की विधी का वर्णन।

१—जब कि होशियारी और समझ-बूझ के साथ सतसंग करके ऐसा निश्चय हो गया कि कोई कुल्ल और सच्चा मालिक रचना का ज़रूर है और वह सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल हैं, और सब जीव उन को अंश हैं, जैसे सूरज और सूरज की किरण और उन्हीं के चरणों की धार से सब रचना प्रगट हुई और उसी के आसरे ठहरी हुई है।

२—और यह भी सतसंग करके तहक़ीक़ हो गया कि रचना में तीन बड़े दर्जे हैं :—

एक, राधास्वामी दयाल देश जहाँ माया नहीं है, लेकिन सत्त क़ुदरत है यानी राधास्वामी धाम के (जहाँ किसी तरह का ग़िलाफ़ नहीं है) नीचे के चैतन्य पर सत्त-लोक तक सत्त क़ुदरत का ग़िलाफ़ है अथवा सत्त चैतन्य का सत्त चैतन्य रूपी ग़िलाफ़ है और इसी सबब से वहाँ की रचना अमर और अजर और महा आनंद स्वरूप है और काल और कष्ट और क्लेश का वहाँ नाम और निशान भी नहीं है।

दूसरा दर्जा, जहाँ माया प्रगट हुई और शुद्ध है और उसी का ग़िलाफ़ इस दर्जे के निर्मल चैतन्य पर

चढ़ा हुआ है और इसी सबब से वहाँ की रचना में सुख विशेष और दुख बहुत कम, और जनम-मरन बहुत देर से होता है, और रचना भी सूक्षम है और सतोगुनी बर्तावा बहुत, और रजोगुनी कम, और तमोगुनी बहुत कम है, लेकिन राधास्वामी दयाल देश के जाने वाले को इस दर्जे में ठहरना और वहाँ के सुख और आनंद में लिपटना मुनासिब नहीं है, नहीं तो उसका अपने निज घर यानी राधास्वामी धाम में जाने का रास्ता बंद हो जावेगा।

तीसरा दर्जा, जहाँ कि चैतन्य पर मलीन माया का ग़िलाफ़ चढ़ा हुआ है और इस सबब से इस दर्जे की रचना में कष्ट और क्लेश ज़्यादा, और सुख और आनंद कम, और जनम-मरन भी जल्द २ होता है। राधास्वामी देश के जाने वाले को इस दर्जे की रचना में भी अपना बंधन और मोह नहीं करना चाहिये। सिर्फ़ गुज़ारे के मुवाफ़िक मुनासिब तौर से बर्ताव जारी रखना चाहिये कि जिस्से उस की चाल में विघ्न न पड़े और आहिस्ता २ सब बंधन अंतरी और बाहरी ढीले होते जावें और किसी तरह का उन में अटकाव पैदा न होवे या, इस क़िस्म का दुख-सुख कि जो इसकी चाल और निज घर के पहुँचने के इरादे में ख़लल डाले, न व्यापे।

३—और सतसंग करके यह भी समझ में आ गया

कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल या उन के चरणों की धार, कुल्ल रचना की करता और प्रेरक और सम्हाल करनेवाली है और सब रचना उन के चरणों के आधीन है तो उनकी ओट और शरन लेना कोई नई और अचरज की बात नहीं है, क्योंकि प्रेरक और सम्हाल करने वाले असल में वे ही हैं।

४—जब कि ऊपर की तीन बातें सही हो गईं और उन का थोड़ा-बहुत निश्चय हृदय में आगया, तब सच्चे और प्रेमी परमार्थी को, जो (संसार और उस के भोग और सामान और अपनी देही को नाशमान देख कर) अपना सच्चा और पूरा उद्धार चाहता है यानी देहियों के दुख-सुख और जनम-मरन से सच्चा बचाव चहाता है, मुनासिब है कि राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रेम और प्रीति करे और उनके धाम में पहुँचने का सच्चा और पक्का इरादा दिल में बाँधे, क्योंकि बिना प्रेम और शौक़ के, कोई किसी से मिल नहीं सक्ता और न उसकी तरफ़ चल सक्ता है। और जो धुर धाम में पहुंचने का इरादा पक्का और सच्चा न हुआ तो रास्ते में थक जाने या अटक जाने का ख़ौफ़ रहेगा और इस वास्ते काम पूरा नहीं बनेगा ।

५----भक्ति यानी प्रेम प्रीति का बर्ताव राधास्वामी दयाल के चरणों में तीन प्रकार से हो सक्ता है--पहिला, सेवक-स्वामी

भाव, दूसरा पुत्र-पिता भाव, और तीसरा, स्त्री-पति यानी प्रीतम भाव।

६—पहिले भाव में सेवक के दिल में ख़ौफ़ और अदब स्वामी के तेज और बड़ाई का ज़्यादा रहता है। और दूसरे भाव में स्वामी की दया का भरोसा भक्त के मन में विशेष रहता है। और तीसरे भाव में प्रेमी के मन में स्वामी के चरणों में प्रेम की मुख्यता रहती है। ये तीनों अंग, तीनों भाव में बर्तते हैं, पर एक-एक में एक ख़ास अंग की, जैसा कि ऊपर बयान हुआ, मुख्यता रहती है।

७—प्रेमी-प्रीतम भाव कोई अरसे के सतसंग और सेवा और अंतर अभ्यास के पीछे आवेगा। यानी जिस क़दर कि प्रेमी को अंतर और बाहर रस और आनंद मिलता जावेगा और दया के परचे नज़र आते जावेंगे, उसी क़दर उसकी प्रीति और प्रतीत चरणों में ज़्यादा से ज़्यादा होती जावेगी और उस हालत में प्रेमी को सर्व करतूत अपने प्रीतम की, चाहे आम तौर पर मन के मुवाफ़िक़ है या नहीं, प्यारी लगेंगी और अभाव किसी वक्त. में नहीं आवेगा, यानी उसकी हालत प्रेम की, आराम और तकलीफ़ में, यकसाँ रहेगी और प्रेम दिन २ बढ़ता रहेगा, जैसा कि इन कड़ियों में कहा है :—

अगर मेहर से शहद देवें तुझे। मुनासिब समझ ज़हर देवें तुझे ॥
तू ख़ुश होके ले और सिर पर चढ़ा। तू चुप होके पी और कह यह सदा ॥
कि धन २ हैं धन २ हैं सतगुरू मेरे। उतारेंगे भौजल से बेशक परे ॥

८—पहिले और दूसरे भाव में सेवक के मन में थोड़ा-बहुत झुकाव संसार और उसके भोग और सामान और कुटुम्ब-परिवार की तरफ़ रहता है, और आराम और तकलीफ़ में थोड़ी-बहुत हालत बदल जाती है। लेकिन बिल्कुल बे-प्रतीत और प्रीति नहीं होती और थोड़ी देर में सोच और विचार करके अथवा बानी का पाठ करके या कुछ अंतर अभ्यास करके फिर अपने घाट पर आ जाता है। और प्रीति और प्रतीत के बढ़ाने की कोशिश, उनकी, बदस्तूर जारी रहती है और अपनी कसरों को निहारता और अपनी हालत पर झुरता और पछताता और दया के वास्ते प्रार्थना करता रहता है।

९—खुलासा यह है कि जिस किसी के दिल में परमार्थ की मुख्यता आ गई और उसने कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल को सब से बड़ा और सब से ज़्यादा प्रीति करने के लायक़ अच्छी तरह सोच और विचार करके समझ लिया, और सब प्रीतों को उनकी प्रीति के नीचे रक्खा और संसार के भोग और पदार्थों को विघ्नकारक और रास्ते में अटकाने वाला जान कर, उनमें ज़रूरत के मुवाफ़िक़ अपना बर्ताव रक्खा है, तो उसी का नाम गुरुमुख है, और वही एक दिन गुरुमुखताई का पूरा दर्जा हासिल करके निःचिन्त हो जावेगा। यानी जब से कि गुरुमुख अंग

आया, उसी वक़्त से कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल सब तरह से उसकी रक्षा और सम्हाल और तरक़्क़ी, अपनी मेहर और दया से, आप फ़रमावेंगे और एक दिन उसको धुर पद में पहुँचा कर निहाल कर देंगे।

१०—मालूम होवे कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल का धाम सबसे ऊँचा और न्यारा और महा निर्मल और प्रेम और आनन्द का भंडार है। और वहाँ, वह स्वभाव और तरंगें जो पिंड और ब्रह्माण्ड में माया के मसाले के संग से पैदा हुये हैं, बिल्कुल नहीं हैं। इस वास्ते जो कोई उस धाम में पहूँचना चाहे, उसको ज़रूर है कि इन स्वभावों और चाहों और तरंगों से न्यारा हो जावे। और यह बात अंतर और बाहर के सतसंग से, जिससे मन और सुरत निर्मल होकर घट में चढ़ेंगे, हासिल होगी। इस वास्ते प्रेमी अभ्यासी को मुनासिब है कि जो कार्रवाई संतों ने बताई है, उसके मुवाफ़िक़ अभ्यास करके और दया-मेहर संत सतगुरू राधास्वामी दयाल की, संग लेकर अपनी हालत बदलता जावे, यानी दिन २ सफ़ाई हासिल करे और प्रेम बढ़ाता जावे, तब उस धाम में पहूँचने के क़ाबिल हो जावेगा।

११—कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल सब रचना से न्यारे हैं। इस वास्ते जो कोई उनके धाम में पहूँच कर उनका

दर्शन चाहे, उसको भी सब दुनिया की प्रीतें आहिस्ता २ कम करके एक उन्हीं की गहरी प्रीत दृढ़ करनी चाहिये। तब वहाँ पहुँचना और ठहराव होगा। और जो किसी क़िस्म की वासना इस तरफ़ की रही आई, तो चलना और चढ़ना मुशकिल होगा। इस वास्ते सर्व वासना, सिवाय उनके मिलने को आस के, आहिस्ते २ घटानी और दूर करनी ज़रूर चाहिये। और यह काम सच्चे परमार्थी का राधास्वामी दयाल अपनी दया से आप बनावेंगे।

१२—इस वास्ते कुल्ल सच्चे परमार्थियों को ऊपर लिखी हुई समझौती को लेकर चाहिये कि जहाँ तक बन सके अपनी सफ़ाई करें और संसारी स्वभाव छोड़ते जावें और दुनिया की चाह और तरंगें कम उठावें और मुख्य प्रीति संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल के चरणों में लावें और सच्चा और पक्का इरादा उनके धाम में पहुँचने का करें, तो उनकी मेहर और दया से सहज २ काम बनता जावेगा, और एक दिन सुरत निज धाम में पहुँच कर परम आनन्द को प्राप्त होगी।

१३—बग़ैर दया और मदद राधास्वामी दयाल के, यह काम दुरुस्त और पूरा नहीं बन सक्ता। क्योंकि जीव निबल है और पिंड में मन और माया का ज़ोर बहुत भारी है, इस वास्ते जो सच्चे प्रेमी का इरादा अपने सच्चे

उद्धार कराने का पक्का और मज़बूत है, तो राधास्वामी दयाल ज़रूर अपनी मेहर और दया से उसकी आशा पूर्ण करेंगे और मन और माया और काल और करम के विघ्नों को हटाते और दूर करते जावेंगे, और अपने चरणों का प्रेम उसके हिरदे में दिन २ बढ़ाते जावेंगे और माया के भोग और पदार्थों का भाव उसके मन से हटा कर एक दिन उनसे न्यारा कर देंगे।

बचन ८

हाल सच्चे वेदान्ती यानी जोगी ज्ञानियों का, जो कि षट चक्र बेध कर ब्रह्म पद में पहुँचे, और वर्णन इस बात का कि आज-कल के ज्ञानी कसरत से वाचक हैं और उनके संग से जीव का सच्चा कल्यान या उद्धार नहीं होगा

१—जो कि आज कल ब-सबब ज़्यादा फैलने विद्या के, वाचक ज्ञान का बहुत ज़ोर है और विरक्त और गृहस्थ, बग़ैर जाँचने अपने अधिकार के, थोड़े ग्रन्थ ज्ञान के पढ़ कर कसरत से ज्ञानी और सूफ़ी होते जाते हैं, और असल में

उनकी हालत बहुत कम बदलती है, बल्कि बहुतेरों के स्वभाव ब-दस्तूर संसारियों के मुवाफ़िक़ बने रहते हैं, और अपने ज्ञान की समझ का अहंकार ज़्यादा हो जाता है, इस वास्ते मुनासिब मालूम हुआ कि सच्चे ज्ञानियों का हाल थोड़ा सा लिखा जावे कि जिससे वाचक ज्ञान का मुक़ाबला करके, उसकी ओछी हालत की जाँच हो जावे और सच्चे परमार्थी उससे बचे रहें और उनका अकाज न होने पावे।

२—जोगी ज्ञानी उनको कहते हैं कि जो प्राणों का साधना करके षट चक्र को बेंध कर ब्रह्म पद में पहुँचे और वहाँ से ब्रह्म को नीचे के सर्व देश में व्यापक देख कर, उसके लक्ष रूप में समाये और अपने आपे को उसमें लै कर दिया।

३—इन जोगी ज्ञानियों ने पाँच उपासना मुक़र्रर करीं। पहिली गणेश की गुदा चक्र में, दूसरी विष्णु की नाभि में, तीसरी शिव की हिरदे में, चौथी आत्मा यानी शक्ति की कंठ में और पाँचवीं परमात्मा या सूरज ब्रह्म का छठे चक्र में, और उसके परे चिदाकाश में समाये।

४—और जोगेश्वर ज्ञानी सहसदल कँवल को पार करके त्रिकुटी यानी ओङ्कार पद में पहुंचे और उस के लक्ष स्वरूप में, जो अरूप है, लीन हुये, और कोई २ पार ब्रह्म पद में जो संतों का दसवाँ द्वार है, समाये, और वहाँ से उस

चैतन्य को नीचे के सर्व देशों में व्यापक देखा और कुल्ल सूरतों में उसी का ज़हूरा और जलवा देख कर मगन और तृप्त हो गये।

५—इन जोगी और जोगेश्वर ज्ञानियों ने अपनी बानी और बचन में ब्रह्म पद की महिमा ज़्यादा से ज़्यादा गाई और फ़रमाया कि वह ब्रह्म सर्व व्यापक है और सब लोकों में उसी का जलवा और प्रकाश मौजूद है और असल में सब उसी का ज़हूरा है।

६—और उन्होंने ब्रह्म की प्राप्ति प्राणायाम यानी अष्टांग योग की साधना करके वर्णन करी और उस अभ्यास का तरीक़ा, मय उसके संजमों के, मुफ़स्सिल तौर पर अपने ग्रन्थों में बयान किया।

७—और यह भी बयान किया कि पहले उपासना करनी ज़रूर चाहिये और जब वह उपासना पूरी होगी, तब चार साधन यानी (१) वैराग (२) विवेक (३) षट सम्पत्ति (सम, दम, उपरति, तितिक्षा, सरधा, और समाधानता और (४) मुमोक्षता हासिल होंगे, तब वह उपासक यानी मुमोक्षु ज्ञान के ग्रन्थों के पढ़ने का अधिकारी होगा।

८—और इस बात को निहायत ज़ोर देकर कहा कि जिस शख़्स को ऊपर के बयान किये हुये चारों साधन पूरी तौर से हासिल नहीं हुये, वह ज्ञान के ग्रन्थों के पढ़ने का

अधिकारी नहीं है, और जो कोई बग़ैर हासिल हुये उन साधनों के, ज्ञान के ग्रन्थों को पढ़ेगा उसका अकाज होगा यानी बग़ैर पूरी उपासना किये हुये अगर कोई ज्ञान के बचन सुनेगा या पढ़ेगा या कहेगा, तो उसके हक़ में वह ज़हर के मुआफ़िक़ असर करेंगे, यानी वह वाचक ज्ञानी होकर अहंकारी हो जावेगा और इस वास्ते उसकी मुक्ति नहीं होगी।

९—और उन्हीं जोगी ज्ञानियों ने यह भी वर्णन किया कि शरीर में पाँच कोश यानी परदे या ग़िलाफ़ हैं और पाँचवें में या उसके परे आत्मा का बासा है। सो जब तक कि यह परदे या ग़िलाफ अंतर अभ्यास करके न फोड़े जावेंगे, तब तक अभ्यासी को अपने स्वरूप का दर्शन नहीं होगा, और वह कोश या ग़िलाफ़ ये हैं :--(१) अन्न मई कोश (२) प्राण मई कोश (३) मनो मई कोश (४) विज्ञान मई कोश (५) और आनन्द मई कोश।

१०—इससे साफ़ जाहिर है कि जोगी ज्ञानियों ने आत्मा की प्राप्ति, बाद तै करने मन और बुद्धि के मुक़ाम के, कही है और वाचक ज्ञानी स्थूल शरीर में इन्द्रियों के मुक़ाम पर बैठे हुये अपने आप को अत्मा और परमात्मा या ब्रह्म मानते और क़रार देते हैं। यह समझ उनकी ग़लत है और इसी समझ का सच्चे ज्ञानियों ने निषेध किया है।

११—इस में कुछ शक नहीं कि आत्मा अपनी धारों से कुल्ल शरीर में व्यापक है और उसी की धारें, मन और इन्द्रिय वग़ैरा को चैतन्य कर रही हैं। पर आत्मा का स्थान जहाँ से कि ये धारें छूट रही हैं, जुदा है। और जब तक कि अभ्यासी, अभ्यास करके सब परदों को फोड़ कर उस मुक़ाम तक नहीं पहूँचेगा, तब तक अपने स्वरूप को नहीं पावेगा और न उसका आनन्द, जैसा कि चाहिये, उस को प्राप्त होगा और न मन और इन्द्रिय उसके क़ाबू में आवेंगे। फिर परमात्मा या ब्रह्म पद में उसकी पहुँच कैसे हो सकती है?

१२—इस सबब से वाचक ज्ञानी कि जिन्होंने सिर्फ़ सिद्धान्त के बचन ग्रन्थों से छाँट कर पढ़ लिये हैं और थोड़ी-बहुत उनकी समझ हासिल की है, पर अंतरी अभ्यास किसी क़िस्म का नहीं किया और जो कुछ अभ्यास किया भी, तो स्थूल या सूक्षम शरीर के पार नहीं गये, तो उनका अपने आप को आत्मा या परमात्मा या ब्रह्म मानना, बग़ैर पहुँचे हुये उस पद के, ग़लत है। और इसी वजह से वे ग्रन्थों से समझौती लेकर और ऐसी ग़लत धारणा धारण करके अहंकारी हो जाते हैं और बर्ताव और रहनी उनकी संसारी जीवों के मुवाफ़िक़ (जिन्होंने ज्ञान के ग्रन्थ नहीं पढ़े और सिद्धान्त के बचन नहीं सुने) रहती है, और यही सबब उन के नुक़सान और अकाज का हुआ।

१३—वाचक ज्ञानियों का क़ौल है कि जब कि ब्रह्म सब जगह व्यापक है तो जाना-आना कहाँ है। सिर्फ़ इस क़दर अभ्यास ज़रूर है कि जिस से मन थोड़ा-बहुत स्थिर हो जावे और बाद उसके विचार या अहंग्रह यानी अहंब्रह्म उपासना करते हैं। विचार से मतलब यह है कि सब रचना का निषेध करके कि हम यह नहीं, वह नहीं, केवल आत्मा ही आत्मा या ब्रह्म हो ब्रह्म हैं और अपने तईं वही रूप ख़्याल करके अपने ख़्याल को पकाते हैं। और अहंग्रह उपासना से मतलब यह है कि अपने तईं ब्रह्म रूप और बाक़ी सब रचना को मिथ्या समझ कर, इसी समझ को दृढ़ करते हैं। और बाज़े दृष्टि का साधन करके जो रोशनी कि उनको नज़र आती है, उसी को आत्मा का प्रकाश समझ कर उसी में अपनी वृत्ति को लीन करते हैं और समझते हैं कि आत्मा का दर्शन हमको होता है। और शुरू में मन के स्थिर करने के वास्ते कोई २ आजपा जाप यानी स्वाँसा के साथ ओङ्ग सोहंग का सुमिरन थोड़े दिन के वास्ते करते हैं। और कोई २ अपने तौर पर शब्द के सुनने का साधन चन्द रोज़ करके फिर उसको छोड़ देते हैं और ऐसा ख़्याल करते हैं कि शब्द मायक है, थोड़े दिन वास्ते ठहराने मन के उसका साधन मुनासिब है, पर जो कि माया और सब पसारा उसका मिथ्या है, इस वास्ते शब्द का अभ्यास भी

छोड़ देना और सिर्फ़ ब्रह्म में अपनी वृत्ति को लै करना मुनासिब समझते हैं ।

१४—अब मालूम होवे कि यह सब साधन जिनका जिक्र ऊपर हुआ, वास्ते उद्धार जीव के, काफ़ी नहीं है । और जब तक कि कोई ख़ास जतन चलने और चढ़ने जीव आत्मा यानी सुरत का न किया जावे यानी माया की हद्द के पार जाने का अभ्यास अमल में न आवे, तब तक विचार और अहंग्रह उपासना (जो कि मन और इन्द्रियों के स्थान पर बैठ के की जाती है), वास्ते पहुँचने निर्मल चैतन्य देश के कुछ फ़ायदा नहीं दे सकते हैं, क्योंकि निर्मल चैतन्य देश जो कि सुरत का निज स्थान है, माया के घेर के पार और ऊँचे से ऊँचा है ।

१५—इस में कुछ शक नहीं है कि चैतन्य सब जगह मौजूद है, लेकिन ब-सबब हायल होने माया के परदों के, वह सब जगह एक-रस यानी यकसाँ नहीं है । इसी वजह से पिछले जोगी ज्ञानियों ने चैतन्य में विशेष और सामान्य का भेद किया । विशेष चैतन्य से यह मतलब है कि वहाँ माया सूक्ष्म है या कम है और सामान्य से मतलब यह है कि वहाँ माया स्थूल है या ज़्यादा है, और ऐसा सामान्य चैतन्य वग़ैर मदद विशेष चैतन्य के कुछ कार्रवाई नहीं कर सकता यानी माया के परदों में ढका हुआ कुछ काम नहीं कर सकता ।

१६—अपने पिंड के हाल को, जो कि ब्रह्माण्ड का नमूना है, मुलाहज़ा करने से मालूम होगा कि जीव चैतन्य इस में भी सिर से पैर तक एक-रस व्यापक नहीं है यानी आला दरजे की क़ुव्वतें सिर में, जो ऊँचे से ऊँचा और पहिला दर्जा है, मौजूद है और गले से कमर तक जो कि दूसरा दर्जा है, कम दर्जे की क़ुव्वतें कारवाई करती हैं। और जब किसी बीमारी में (जैसे सन्निपात में) सिर की तरफ खिंचाव रूह का ज़्यादा हो जाता है तो इस दूसरे दर्जे की क़ुव्वतें बिलकुल बेकार हो जाती हैं यानी उनकी कारवाई बन्द हो जाती है। और सोते वक़्त में भी जब कि रूह का किसी क़दर खिंचाव दिमाग़ की तरफ़ मामूली तौर पर होता है, कुल्ल इन्द्रियाँ उस वक़्त बेकार हो जाती हैं। और तीसरे दर्जे में यानी कमर से नीचे २ कोई ख़ास क़ुव्वत सिवाय चलने-फिरने की ताक़त के नहीं है और वह ताक़त भी दिमाग़ से आती है। इन दोनों दर्जों की कारवाई अव्वल दर्जे की मदद से यानी जब रूह की धार दिमाग़ से नीचे उतरती है, जारी होती है और उस दर्जे में विशेष चैतन्य है और नीचे के दर्जों में सामान्य चैतन्य है।

१७—इसी तरह इस पृथिवी लोक में चैतन्य व्यापक है। वह सामान्य चैतन्य है और जब तक सूरज से जो

उसका विशेष चैतन्य है, किसी क़िस्म की किरनियाँ के वसीले से मदद (यानी गरमी और रोशनी) न आवे तब तक यहाँ का चैतन्य कुछ कारवाई (यानी उत्पत्ति करना रचना की और उसकी सम्हाल) नहीं कर सक्ता है, फिर ऐसे व्यापक चैतन्य से क्या काम निकल सकता है ? और जो कि वह हर वक़्त इस लोक की रचना की कारवाई में लिप्त हो रहा है या उसका संगी और समीपी है और माया से घिरा हुआ है, तो जो कोई उसमें लीन होगा या उससे मिलेगा, वह भी इसी रगड़े में पड़ा रहेगा यानी उत्पत्ति प्रलय के चक्कर से बाहर नहीं जावेगा।

१८—और मालूम होवे कि यह सूरज भी, ब-निस्बत उस बड़े सूरज के, जिसके गिर्द यह मय अपने तारागण के घूम रहा है, सामान्य चैतन्य है और वह बड़ा सूरज इसका विशेष चैतन्य है। इसी तरह दो दर्जे के ऊपर सत्तपुरुष और उसके परे राधास्वामी पद है जिसको अगर महा विशेष चैतन्य कहो, तो हो सकता है। यह दोनों पद निर्मल चैतन्य देश में हैं यानी माया के घेर के पार हैं। इनमें सदा आनन्द रहता है, क्योंकि सिवाय चैतन्य के वहाँ कोई दूसरी चीज़ नहीं है और चैतन्य ऐन आनन्द स्वरूप है।

१९—इस वास्ते जब तक कि कोई अभ्यास करके एक विशेष चैतन्य से दूसरे में, और फिर महा विशेष चैतन्य

में नहीं पहुँचेगा, तब तक उसका सच्चा और पूरा उद्धार नहीं होगा, यानी जब तक कि माया के घेर के पार नहीं जावेगा, तब तक जन्म-मरण और दुख-सुख से निवृत्ति नहीं होगी।

२०—अब ख़्याल करो कि जिस पद में जीव को समाना चाहिये या पहुँच कर वहाँ का आनन्द-बिलास देखना चाहिये, वह हमारे तन में, बैठक के मुक़ाम से बहुत दूर है और रास्ते में कई मंज़िलें या ठेके हैं, सो जब तक कि शब्द-अभ्यासी और शब्द-भेदी गुरू से भेद लेकर और अभ्यास करके चढ़ कर दयाल देश में नहीं पहुंचेगा, तब तक उसका सच्चा और पूरा उद्धार और जन्म-मरण से छुटकारा नहीं होगा।

२१—सिवाय इसके, पिछले जोगी-ज्ञानियों ने ब्रह्म के तीन स्वरूप या तीन दर्जे बयान किये यानी शुद्ध ब्रह्म और साक्षी ब्रह्म और माया-सबल ब्रह्म। अब ख़याल करो कि मुवाफ़िक़ इन दर्जों के, जो कोई शुद्ध ब्रह्म के पद में नहीं पहुँचेगा, तब तक वह जोगेश्वर ज्ञानी नहीं हो सक्ता और वास्ते प्राप्ति मुक्ति के, माया देश को छोड़ कर शुद्ध ब्रह्म पद में पहुँचना ज़रूर है। फिर कई दर्जे ब्रह्म में, ब-सबब हायल होने माया के हो गये और सब दर्जों में वही ब्रह्म, व्यापक हुआ, पर वास्ते बचाव जन्म-मरन और काल-क्लेश

और प्राप्ति परम आनन्द और मुक्ति के (मुवाफ़िक़ जोगी ज्ञानियों के मत के) नीचे के देशों को छोड़ कर ऊँचे देश यानी शुद्ध ब्रह्म में जाना ज़रूर हुआ ।

२२—ऊपर के बयान से साफ़ ज़ाहिर है कि वाचक ज्ञानियों का यह क़ौल कि "जब कि ब्रह्म सर्व-व्यापक है तो जाना-आना कहाँ है", बिलकुल ग़लत है और इस हिसाब से इन लोगों का उद्धार योगी-ज्ञानियों के दर्जे तक का किसी सूरत में मुमकिन नहीं है ।

२३–इसी तरह जोगी और जागेश्वर ज्ञानियों ने चार अवस्थाएँ, यानी जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरिया बयान की हैं और अभ्यास करके तुरिया और तुरियातीत अवस्था में पहूँचना लिखा है । लेकिन वाचक ज्ञानियों ने तुरिया अवस्था को काट कर, जो चैतन्य कि तीन अवस्थाओं में व्यापक है, उसी को तुरिया क़रार दिया यानी चलना और चढ़ना जिससे कि तीन अवस्थाओं के पार जाना मुमकिन था, नहीं माना, और इस सबब से उस निर्मल गति की, जो तुरिया और तुरिया-तीत के दर्जे में पहूँच कर हासिल होती, उनको ख़बर भी नहीं हुई, यानी जाग्रत अवस्था के मुक़ाम पर उनका बासा रहा और इस वास्ते मन और इन्द्रियाँ उन पर ग़ालिब रहे और उनका ज्ञान वाचक रहा ।

२४—ये लोग सिद्धान्त की बातें बनाते रहेंगे

पर ब-सबब पड़े रहने मलीन माया के देश में, इनकी हालत नहीं बदलेगी और सच्चा ब्रह्मानंद इनको कभी हासिल नहीं होगा।

२५—और एक भारी नुक़सान की बात वाचक ज्ञानियों में यह है कि ये उपासना यानी भक्ति से विरोध रखते हैं, और माया को मिथ्या कह कर, कुल्ल नाम रूप की रचना को नाशमान समझ कर, उसका निरादर करते हैं। और हरचंद आप शरीर का व्यवहार जारी रखते हैं और मेले-तमाशे और देशान्तर की सैर वग़ैरा में हमेशा भरमते रहते हैं और ज्ञान की पोथियाँ पढ़ते और पढ़ाते रहते हैं, और फिर इन सब कामों को भरम बताते हैं और कहते हैं कि जब कि सिवाय ब्रह्म के और कोई वस्तु नहीं है और हम आप वही ब्रह्म स्वरूप हैं तो फिर उपासना किस की करें और उपासना की क्या ज़रूरत है जब कि सिवाय ब्रह्म के कोई दूजा असल में नहीं है ?

२६—बल्कि, बाज़े ज्ञानी इस क़दर बढ़ कर बोलते हैं कि रचना असल में हुई नहीं है, और न मौजूद है, और जो कुछ कि हम देखते हैं और कहते-सुनते हैं, सब भर्म है और फिर बर्ताव में अपने शरीर, रूप और कुल्ल संसार को सत्य देखते और समझते हैं। ये लोग सिर्फ़ भक्ति न करने के वास्ते ऐसी बातें कि जो उनके व्यवहार और बर्ताव के बिलकुल

ख़िलाफ़ है (यानी कुल्ल रचना और कुल्ल कारवाई को भर्म समझना), बनाते हैं।

२७—नतीजा ऐसी बातों का यह होता है कि इन वाचक ज्ञानियों के हृदय से भय और भाव यानी अदब और ख़ौफ़ और प्रेम, गुरू और मालिक के चरणों का, बिलकुल जाता रहता है। और ये लोग निरभय हो कर संसार में बर्तते हैं, यानी मन और इन्द्रियों के कहने में चलते हैं और अपने आप को ब्रह्मरूप मान कर समझते हैं कि किसी काम का असर उन पर नहीं पहुँचता। और जो ग़ौर करके देखा जाऐ तो मालूम होता है कि इन लोगों की रहनी मुवाफ़िक़ संसारी विद्यावानों के, बल्कि अक्सर उन से भी कम दर्जे की है, क्योंकि ये लोग धनवान और हुकूमतवान लोगों को हमेशा ढूंढ़ते रहते हैं कि कोई उनका बचन माने और ख़ातिरदारी करे और जब ऐसा मौक़ा मिल जावे तब भोगों में बे-तकल्लुफ़ बर्तते हैं।

२८—अब ग़ौर करने की बात है कि जो इन वाचक ज्ञानियों को थोड़ा भी आत्मानन्द आया होता तो इन का बर्ताव ऐसा नहीं होता जैसा कि आम तौर पर देखने में आता है और जिसका थोड़ा हाल ऊपर लिखा गया।

२९—यह सब कसरें, ब-सबब न करने उपासना या भक्ति के, गुरू और मालिक के चरणों में, पैदा होती हैं यानी

जो चार साधन कि मुमोक्षु को, पेश्तर पढ़ने ज्ञान के ग्रन्थों के, हासिल होने चाहियें, वे इन लोगों में नहीं पाये जाते क्योंकि वे ईश्वर की दात है और बग़ैर उपासना किये और उपास्य से मिलने के, वे प्राप्त नहीं हो सक्ते। और ये वाचक ज्ञानी नाम रूप को पहिले ही मिथ्या समझ कर भक्ति को उड़ा देते हैं और ईश्वर और गुरू दोनों की, इनकी नज़र में बे-क़द्री हो जाती है। और ये लोग ब्रह्म को सर्व-व्यापक मान कर कोई अन्तरी अभ्यास चलने और चढ़ने का (जिस से उनका संसारी स्वभाव और मन की हालत बदले) नहीं करते। इस सबब से ये लोग सिर्फ़ सिद्धान्त के बचन सुन कर और याद करके अहंकारी और बे-परवाह हो जाते हैं और अपनी कसरों पर ज़रा निगाह नहीं करते, और, जो कोई जतावे तो क्रोध करने को तैयार हो जाते हैं।

३०—अब ख़्याल करो कि इन वाचक ज्ञानियों ने किस क़द्र धोखा खाया और किस क़द्र ग़लती में पड़े हैं कि जिसके सबब से उनका भारी नुक़सान हुआ, यानी ब्रह्म पद की प्राप्ति से महरूम रहे, और बर-ख़िलाफ़ उसके, अपने आपको ब्रह्म रूप मान कर इस क़द्र अहंकारी हो गये कि अब जो कोई उनको उनकी ग़लती बतावे और सीधा और सच्चा रास्ता उद्धार का समझावे तो बिल्कुल नहीं सुनते और उल्टा

समझाने वाले को भूला हुआ और भरमा हुआ ख़्याल करके, उससे क्रोध और विरोध करने को तैयार होते हैं, जिसके सबब से इनकी दुरुस्ती यानी उद्धार किसी तरह से मुमकिन नहीं है ।

३१—मालूम होवे कि जोगी और जोगेश्वर ज्ञानियों का सिद्धांत (यानी ब्रह्म और पार-ब्रह्म पद) माया की हद्द में रहा । इस सबब से उन्होंने ज्ञान की मुख्यता की, यानी ब्रह्म के लक्ष स्वरूप अथवा अरूप में समाये, क्योंकि उन्होंने देखा कि ब्रह्म का वाच्य स्वरूप हमेशा क़ायम नहीं रहता, यानी जब रचना का अभाव होता है (प्रलय और महा प्रलय के वक़्त) तब वह भी सिमट जाता है और उसके लोक की रचना भी सिमट जाती है, और इस सबब से ब्रह्म उपासकों की मुक्ति की हालत हमेशा और यकसाँ क़ायम नहीं रह सकी और रचना में आवागमन भी नहीं बन्द हो सका । इस वास्ते उपासना की सिर्फ़ इस क़दर ज़रूरत समझी गई कि जिसमें मुमोक्षु भक्ति करके स्थूल, सूक्षम और कारण रचना के पार चल कर अपने उपास्य के सन्मुख यानी ब्रह्म लोक में पहुँचे, और इसी तरह अभ्यास करके, निर्मल होकर, क़ाबिल समावने ब्रह्म के लक्ष स्वरूप यानी अरूप पद के, हो जावे यानी ज्ञान पद को प्राप्त होवे, क्योंकि जो ज्ञान पद में रसाई न हुई और

उपासना करता रहा या उपास्य के लोक में पहुँच कर वहीं ठहर गया, तो आवागमन दूर नहीं हुआ।

३२–वास्ते दुरुस्ती उपासना के, उपास्य के नाम, रूप, लीला और धाम की ज़रूरत है। और जब कि नाम और रूप का मायक होना और उसका समय २ पर प्रगट होना और सिमट जाना मालूम किया गया, तब उपासना करने वालों का पूरा उद्धार यानी आवा-गमन से रहित होना नहीं माना गया। इस सबब से भक्ति की ज़रूरत सिर्फ़ वास्ते तै करने, रूपवान रचना की हद् के, मुनासिब समझी गई, और बाद् उसके, लक्ष स्वरूप की महिमा विशेष मानी गई कि वहाँ पहूँचने से (ज़ाहिरी तौर से) आवा-गमन दूर हो गया, क्योंकि मुमोक्षु नाम और रूप के परे पहुँच कर ब्रह्म के लक्ष यानी सिंध स्वरूप में समाया और इसी का नाम ज्ञान यानी सच्ची मुक्ति या उद्धार रक्खा गया।

३३—इस क़ायदे के मुवाफ़िक़, ज्ञान (यानी अपने निज अरूप पद् को प्राप्त होना) अव्वल नम्बर क़रार दिया गया। और उपासना यानी भक्ति का दर्जा दूसरा रक्खा गया। और इससे यह मतलब समझा गया कि उपासक ब्रह्म के लोक में पहुँच कर अपने उपास्य या भगवंत के समीप या सनमुख रह कर और दर्शन के ...द और विलास को प्राप्त हो कर, बहुत काल के

वास्ते सुखी हो जावे। लेकिन प्रलय या महा प्रलय के समय ब्रह्म और ब्रह्म लोक का सिमटाव और अभाव ज़रूर होगा। और उस वक़्त ब्रह्म उपासकों की भी हालत बदल जावेगी और फिर रचना में आना पड़ेगा। इसी सबब से ज्ञान के मुक़ाबले में भक्ति की महिमा कम ठहरी और ज्ञानियों की नज़र में उसका आदर घट गया। लेकिन अभ्यासियों के वास्ते उसको क़ायम रक्खा और जब उपासना पूरी हो गई यानी उपासक उपास्य के लोक में पहुँच गया और उसका दर्शन करके चारों साधन उसको प्राप्त हो गये, फिर भक्ति की ज़रूरत नहीं रही। फिर ज्ञान के हासिल करने का जतन बाक़ी रहा यानी सिद्धान्त के बचन सुन कर और समझ कर, दिन २ अभ्यास ब्रह्म के लक्ष स्वरूप में यानी अरूप पद में समाने का करके, अपना आपा जिस क़दर कि बाद भक्ति के बाक़ी रहा, सिद्धान्त पद में पहुंच कर निज अरूप में लीन कर दिया।

३४—वाचक ज्ञानियों ने जब सिद्धान्त के बचन सुने और ऊपर का लिखा हुआ हाल उनको मालूम हुआ तो उन्होंने शुरू ही से भक्ति का निरादर किया और ब्रह्म बन बैठे, और कहने लगे कि भक्ति में त्रिपुटी (यानी उपास्य उपासक और उपासना) क़ायम रहती है और इस सबब से दूजा भाव बना रहता है और आवा-गमन दूर नहीं [illegible]

और ज्ञान में सिर्फ़ ब्रह्म ही ब्रह्म रहता है और दुनिया का अभाव है और इस वास्ते जन्म-मरण भी नहीं रहता। इस सबब से उन्होंने बग़ैर अभ्यास करके तै करने नाम और रूप की रचना के, पहले ही से नाम और रूप का अभाव और निरादर कर दिया, यानी ब्रह्म के वाच्य स्वरूप से लेकर नीचे से नीचे की रचना तक, सब को नाशमान और मिथ्या कह कर उपासना को फ़िज़ूल समझा। और इस सबब से वे जहाँ के तहाँ रहे यानी स्थूल मन और इन्द्रियों के घाट पर बैठे हुये सिद्धान्त की बातें और ब्रह्म के वाच्य और लक्ष स्वरूप का बुद्धि से निर्णय करके लक्ष रूप की धारणा करने लगे, और सच्चे और प्रेमी परमार्थियों पर, जो भक्ति और अंतर अभ्यास करके निज अरूप पद में पहुँचने का जतन कर रहे हैं, तान मारने लगे कि इनका जन्म-मरण नहीं छूटेगा और ब-सबब न होने ज्ञान (वाचक) के उन का पूरा उद्धार नहीं होगा।

३५—जो कोई इन वाचक ज्ञानियों के क़ौल और हाल यानी बोली और रहनी पर ग़ौर से नज़र करे, तो उस को साफ़ मालूम हो जावेगा कि इन लोगों ने अपने आचार्यों के यानी जोगी और जोगेश्वर ज्ञानियों के सिद्धांत के बचन सुन कर जल्दी की, और जो बचन कि उन्होंने निसबत उपासना और अंतर अभ्यास के फ़रमाये थे, उन पर

मुतलक़ तवज्जह नहीं करी, यानी बग़ैर तीन लोक की रचना के (अभ्यास करके) पार जाने के, पार पद को (जो उनका सिद्धान्त था) सही करके उसी की धारणा, सिर्फ़ अक़ली विचार करके, शुरू की और ऐसा यक़ीन किया कि उस रचना का ज़बानी या मानसी निषेध करके पार पद में पहुँचना या अपने तईं वही (लक्ष रूप) समझ कर पूरे बन जाना मुमकिन है। यह बड़ा भारी धोखा इन वाचक ज्ञानियों ने खाया और अपना भारी अकाज किया, यानी चौरासी के चक्कर से नहीं बचे, और न इधर के रहे और न उधर के हुये, यानी न तो भक्ति करके ब्रह्मलोक के आनन्द और विलास को प्राप्त हुए और न ज्ञान करके ब्रह्म के लक्ष स्वरूप में समाये।

३६—सबब इस धोखे का यही हुआ कि वाचक ज्ञानियों ने, मुवाफ़िक़ क़ौल और बचन अपने आचार्यों के, ब्रह्म को सर्व-व्यापक माना और माया और उसकी रचना को मिथ्या समझा बल्कि यहाँ तक कहा कि तीन काल रचना हुई ही नहीं, और है भी नहीं और वही ब्रह्म स्वरूप आप को और कुल्ल को माना और चैतन्य का तन, मन और इन्द्रियों के साथ बंधन और संसार में झुकाव को भर्म समझा। और इस भर्म के दूर करने का इलाज यह क़रार दिया कि सिद्धान्त यानी ज्ञान के बचन सुन कर

और समझ कर अपने आप को निर्मल और निरलेप चैतन्य समझे और इस ख़याल को विचार और अहंग्रह उपासना करके पकावे, तो फिर ज़रूरत भक्ति और दूसरे अभ्यास करने की नहीं रहेगी, क्योंकि आना-जाना उन्होंने नहीं माना। लेकिन जो कि माया और उसकी रचना जब तक कि जहाँ-जहाँ मौजूद है, सच्ची है और माया के देश यानी घेरे में बराबर जारी है और रहेगी, और सिर्फ़ ज़बानी जमा-ख़र्च से, बग़ैर उसकी हद्द के पार पहुँचने के, उस से छुटकारा मुमकिन नहीं है, इस सबब से उसको पहिले ही से मिथ्या और ग़ैर-मौजूद और भर्म समझने से इन वाचक ज्ञानियों ने धोखा खाया यानी माया के घेर में ही रहे। और इस सबब से जन्म-मरण से उनका बचाव नहीं हुआ और जो कोई इन को ख़ुद जोगेश्वरों के बचन के ब-मूजिब समझावे कि षट चक्र बेध कर पिंड के परे ब्रह्मांड में जाना चाहिये तो उनका मन (जो कि अपने स्वभाव के मुवाफ़िक़ ऊँचे से ऊँचे और बढ़ से बढ़ की बात बग़ैर मेहनत और तक़लीफ़ के हासिल करना चाहता है) ऐसी समझौती को क़बूल नहीं करता। फिर ये लोग संतों के बचन को जो कि पिंड और ब्रह्मांड के पार दयाल देश में जाने की जुगत बतलाते हैं, किस तरह मानें? इस वास्ते संतों के सतसंगियों से इन वाचक ज्ञानियों का मेल किसी तरह नहीं हो सक्ता है।

३७—संत सतगुरु जो सच्चे और कुल्ल-मालिक सत्त-पुरुष राधास्वामी दयाल के धाम में पहुँचे, फ़रमाते हैं कि निरंजन जोत, सत्तपुरुष की किरणें यानी बूंदें हैं, और ये दोनों धारें सत्तलोक यानी सत्तपुरुष के चरणों से निकल कर पहिले संतों के दसवें द्वार में ठहरीं और उनका नाम पुरुष-प्रकृति हुआ। यही स्थान तिरलोकी का मूल पद है। यहाँ माया बीज रूप थी। इस सबब से जोगेश्वर-ज्ञानियों को नज़र न आई और उन्होंने उस पद को शुद्ध और पार-ब्रह्म क़रार दिया। फिर वहाँ से उतर कर ये दोनों धारें त्रिकुटी में ठहरीं और यहाँ उनका माया-ब्रह्म नाम हुआ। इसी स्थान से सूक्षम मसाला, तीन लोक की रचना का प्रगट हुआ। फिर यहाँ से उतर कर ये दोनों धारें सहसदल कँवल के मक़ाम पर ठहरीं और दोनों का रूप जुदा २ प्रगट हुआ और शिव-शक्ति और जोत-निरंजन इनका नाम हुआ। यहाँ से पाँचों तत्व और तीनों गुणों की धारा प्रगट होकर निकलीं और इन्होंने नीचे के देश में देवताओं और मनुष्यों और चारों खानों की रचना करी। संतों का देश पार-ब्रह्म से बहुत ऊँचा रहा, जहाँ माया का नाम और निशान भी नहीं है यानी जो कुछ कि उसका सूक्षम से सूक्षम बीजा था, वह निकाल कर नीचे उतार दिया गया। उस देश को निर्मल चैतन्य और महा शुद्ध धाम समझना

चाहिये। वहाँ, एक चैतन्य ही चैतन्य है और किसी तरह की मिलौनी दूसरे की नहीं है। और जो कि चैतन्य महा आनन्द स्वरूप है, इस वास्ते वहाँ की रचना भी ऐन चैतन्य और आनन्द स्वरूप है और हमेशा एक-रस क़ायम रहती है और यहाँ ही सत्त पुरुष राधास्वामी सच्चे कुल्ल-मालिक का निज धाम है।

३८—संतों का उपास्य और भगवंत कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल हैं। वे निर्मल चैतन्य और प्रेम और अमृत के निज भंडार हैं और सुरत-चैतन्य (यानी आत्मा) उन्हीं की अंश है। इस तरह संतों का भगवंत यानी कुल्ल-मालिक और उसका धाम (यानी दयाल देश) और उसके चरणों की भक्ति (जो कि ऐन प्रेम की धार है) अमर और अजर हैं।और उनकी अंश सुरत भी अमर और अजर है। पर वह माया के देश में उतर कर और देही और मन और इन्द्रियों के साथ बंध कर और माया के पदार्थों की (यानी भोगों की) चाह उठा कर इस संसार में दुख-सुख भोगती है। और जो कि देही, जो माया के मसाले की बनी हुई है और हमेशा उसका अंग-अंग बदलता रहता है, और भाव-अभाव होता रहता है, सदा एक-रस क़ायम नहीं रहती, इस सबब से सुरत भी उसके साथ बंधन करके जन्म-मरण के चक्कर में पड़ी रहती है। यह चक्कर,

जब तक कि सुरत अपने निज मालिक राधास्वामी दयाल और उनके धाम का भेद पाकर अपने घर की तरफ़ नहीं उलटेगी, और जैसे २ देही, उतार के वक़्त हर एक मंडल में धारण करती आई है, उन से चढ़ाई के वक़्त अपना ताल्लुक़ और बंधन छोड़ती न जावेगी, नहीं मिटेगा। इस चक्कर का जोर दयाल देश के नीचे-नीचे, जहाँ कि माया की मिलौनी चैतन्य के साथ हुई है, रहता है। और जब सुरत अभ्यास करके माया की हद्द के पार पहुँचती है, तब ही काल के कष्ट और क्लेश क़ितई दूर हो जाते हैं और निज देश में पहुँच कर परम आनन्द को प्राप्त होती है और अपने सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल का दर्शन पाकर हमेशा को मग्न हो जाती है।

३—जबकि संतों का भगवंत और उसका धाम अमर और अजर है और उसकी प्रेमाभक्ती भी हमेशा क़ायम है, इस सबब से संतों ने भक्ति की महिमा विशेष की है और शुरू से अख़ीर तक उसको क़ायम रक्खा, यानी जब तक कि सुरत अभ्यास करती हुई निज धाम में पहुँच कर अपने भगवंत राधास्वामी दयाल का दर्शन पावे, तब तक भेद भक्ति, और जब कि राधास्वामी दयाल के चरणों में रल-मिल जावे, तब उसको अभेद भक्ति कहते हैं, क्योंकि निज धाम में पहुँच कर सुरत की यह गति हो जाती है

कि वह जब चाहे तब अपने मालिक के चरणों में मिल जावे और जब चाहे तब न्यारी होकर उनके दर्शन का विलास करे। इस वास्ते संतों ने ज्ञान का लफ़्ज़ अपनी बानी में इस्तेमाल नहीं किया, क्योंकि उनके मत में सुरत का चैतन्य रूपी आपा हमेशा क़ायम रहता है या उसको ऐसी गति हासिल हो जाती है कि वह जब चाहे तब उस आपे को अपने मालिक के चरणों में लीन कर दे और जब चाहे तब न्यारी होकर उस के दर्शनों का आनंद लेवे। बर-ख़िलाफ़ इसके, ब्रह्म-ज्ञानी जब कि ब्रह्म के लक्ष स्वरूप में लीन हो गये तब अपना आपा खो बैठे यानी फिर न्यारे नहीं हो सके और न उन को फिर अपने आपे या ब्रह्म के लक्ष स्वरूप की ख़बर रहती है, क्योंकि उनका आपा बिलकुल गुम हो जाता है।

४०—संत कहते हैं कि जब कि सच्चे जोगी और जोगेश्वर ज्ञानी माया के घेर में रह गये तो उनका पूरा उद्धार नहीं हुआ, चाहे उनको इस बात की ख़बर पड़ी या नहीं, क्योंकि जहाँ तक माया की हद है, वहाँ तक भाव-अभाव रचना का, और उसके साथ जन्म-मरण जीवों का बराबर जारी रहेगा, चाहे वह नित-प्रति होवे या कुछ काल देर करके या बाद प्रलय, और महा प्रलय के। फिर वाचक ज्ञानियों का उद्धार किसी दरजे का भी मुमकिन नहीं है, क्योंकि उनकी बैठक पिंड में मन और इन्द्रियों के मक़ाम

पर रही और चारों साधन उनको असल में पूरे २ प्राप्त नहीं हुए, और न ब्रह्म के वाच्य और लक्ष स्वरूप में उनकी प्रीति या लगन, जैसा कि चाहिये थी आई, और न जीते जी उन्होंने माया के पर्दे जो माबैन उनके और ब्रह्म के हायल हैं, फोड़ कर उनके पार गये। इस सबब से वे (जो कोई संसारी या परमार्थी बासना उनके दिल में ज़बर नहीं रही) मनाकाश में समाते हैं और वहाँ से कुछ अर्से बाद नीचे को उत्थान होकर फिर देह धरते हैं और सिलसिला आवागवन का ब-दस्तूर क़ायम रहता है।

४१—बर-ख़िलाफ़ इस के, संतों का सतसंगी भक्ति करके और दया का बल लेकर सुरत-शब्द योग का अभ्यास करता हुआ, माया की हद्द के पार दयाल देश में पहुँच कर अपने प्रीतम भगवंत यानी राधास्वामी दयाल के सन्मुख पहुँच कर अमर आनन्द और विलास को प्राप्त होता है, और जन्म-मरण के कष्ट और देहियों के क्लेश से हमेशा को छूट जाता है। और ज़्यादा बढ़की बात यह है कि उसका सुरत रूपी निज आपा हमेशा क़ायम रहता है कि जिससे वह अपने सच्चे कुल्ल-मालिक की अपार क़ुदरत को देख कर मग्न होता है और दर्शनों का आनन्द सदा लेता है।

४२—अब समझना चाहिये कि संतों ने जो प्रेमा भक्ती की महिमा विशेष करी, और शुरू से अख़ीर तक,

उसको क़ायम रक्खा, उसका सबब यही है कि उनका उपास्य और उसका निज धाम अमर और अविनाशी है। और जोगी और जोगेश्वर ज्ञानियों का उपास्य और उसका धाम चलायमान और नाशमान है। इस सबब से उनकी भक्ति हमेशा क़ायम नहीं रह सक्ती। और बग़ैर ज्ञान यानी लक्ष या अरूप पद में समाने के, कोई सूरत रिहाई और बचाव की, उनको नज़र न आई। इस सबब से उन्होंने ज्ञान पर ज़्यादा ज़ोर दिया यानी उसकी मुख्यता की ओर भक्ति को थोड़े दिन का यानी ओछा साधन समझ कर उसका निरादर रक्खा और अख़ीर में उड़ा दिया। और वाचक ज्ञानियों ने सच्चे ज्ञानियों के इस बचन को सुन कर या पढ़ कर, शुरू से ही भक्ति का निरादर करके और सिद्धांत के बचनों को पकड़ के, विचार वग़ैरा के साथ अमल-दरामद किया कि जिससे वे जहाँ के तहाँ रहे, क्योंकि उन्होंने ब्रह्म को सर्व व्यापक मान कर चलने और चढ़ने की ज़रूरत न समझी और इस कार्रवाई में उनको अपने बल यानी पुरुषार्थ का भरोसा रहा और समर्थ पुरुष की ओट या सहारा नहीं लिया।

४३—अब ख़्याल करो कि इस देश और पिंड में किस क़दर माया और उसके मसाले का ज़ोर-ओ-शोर है और काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार और मन और

इन्द्रियाँ किस क़दर बली हो रहे हैं और कुल्ल जीवों बल्कि देवताओं को भी नाच नचा रहे हैं। फिर जीव की, जो कि महा निबल है, क्या ताक़त है कि बग़ैर सहारे और मदद समर्थ पुरुष के, और बग़ैर कमाई ऐसे अभ्यास के कि जिससे माया देश यानी पिंड और ब्रह्मांड से आहिस्ता २ न्यारे हो कर सुरत ऊँचे देश की तरफ़ चढ़ती जावे और कुल्ल बैरियों को जीत कर दया के बल से माया की हद्द के पार संतों के निज देश में पहुँचे और हमेशा को महा सुखी हो जावे। यानी सच्चा और पूरा उद्धार और अमर देश में अमर आनन्द का प्राप्त होना बग़ैर दया कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और बग़ैर मदद संत सतगुरु के किसी तरह मुमकिन नहीं है।

४४—फिर बिचारे वाचक ज्ञानियों की कहाँ ताक़त (कि जिन को असल में चारों साधन बल्कि उन में से एक भी साधन यानी सच्चा और पूरा बैराग हासिल नहीं हुआ) कि अपने मन और इन्द्रियों पर ग़ालिब आवें और कुछ भी साधन अपने जीव के कल्याण यानी उद्धार का कर सकें? अलबत्ता बातें बनाना और जबानी वाच्य और लक्ष स्वरूप ब्रह्म का निर्णय करना ख़ूब आ जाता है, और अपने आपको ब्रह्म स्वरूप मानने से अहंकार ख़ूब बढ़ जाता है और ब-सबब न हासिल होने ब्रह्मानन्द के,

मेले और तमाशों में देश-विदेश भमतें रहते हैं। यह हालत उनकी प्रगट नज़राई देती है और विचारवान और समझदार लोग उनकी चाल-ढाल को देख कर आसानी से दरियाफ़्त कर सकते हैं कि वे वाचक ज्ञानी ब्रह्मानंद से खाली हैं, फिर उनको ग्रन्थों के पढ़ने और पढ़ाने और ख़ाली निर्णय और विचार करने का सिवाय तरक़्क़ी मान और अहंकार के, और निरभय होकर बर्तने मन और इन्द्रियों की तरंगों में, क्या फ़ायदा और फल हासिल हुआ ?

४५—संतों के सतसंगियों को इस वास्ते मुनासिब है कि ऐसे वाचक ज्ञानियों का जो कि अद्वैत वादी हैं यानी भक्ति से विरोध और नफ़रत रखते हैं और सिवाय विचार और अहंग्रह उपासना के (मैं ब्रह्म हूँ) और कोई अभ्यास नहीं करते, संग और सोहबत न करें, और न इस क़िस्म के ग्रन्थों को, सिवाय एक दफ़े के, वास्ते मालूम करने उनके हाल के, पढ़ें और नहीं तो इनके बचन बे-परवाही और अहंकार के सुन २ कर आलसी और बे-परवाह हो जावेंगे और फिर उनसे अभ्यास संतों की जुगत का नहीं बनेगा और इस सबब से उनके उद्धार में ख़लल पड़ जावेगा।

४६—लेकिन जो वेदान्ती या ज्ञानी या सूफ़ी द्वैत-वादी हैं यानी भक्ति को क़ायम रखते हैं और अपनी सफ़ाई

के वास्ते कोई न कोई अंतरी अभ्यास करते रहते हैं, जैसे अजपा जाप,यानी स्वाँसा से नाम का लेना,या मानसी प्राणायाम करना या दृष्टि का साधन करना या दिल पर नाम की ज़र्ब लगाना या दस प्रकार के शब्द जो पातंजलि योग शास्त्र में लिखे हैं, उनका किसी न किसी तरकीब से चित्त लगा कर सुनना या ब्रह्म को आकाशवत-व्यापक मान कर, चैतन्य यानी रोशन आकाश का ध्यान करना वग़ैरा २, उनका संग और सोहबत शुरू में जब तक कि संत या साधगुरु (संत मत वाले) न मिलें, करने में कुछ हर्ज नहीं होगा, बशर्ते कि यह शख़्स सच्चा परमार्थी है, और अपनी हालत को निरखता-परखता चलता है और जाँच करता रहता है कि किस क़दर मेरी वृत्ति ब्रह्मानंद में लीन होती है। ऐसे शख़्स को इन ज्ञानियों के सतसंग से यह फ़ायदा होगा कि अंदरूनी सफ़ाई हासिल होगी। पर सुरत की चढ़ाई का फ़ायदा बग़ैर अभ्यास संतों की जुगत (सुरत-शब्द योग) के, और किसी तरह हासिल नहीं हो सक्ता। और जब उसको संत सतगुरु या साधगुरू भाग से मिल जावें, तब उस को मुनासिब और लाज़िम होगा कि और सब संग छोड़ कर सिर्फ़ उनका सतसंग करे और उनके उपदेश के मुवाफ़िक़ सुरत-शब्द योग का अभ्यास, प्रेम और अनुराग के साथ करे। तब उसकी सुरत आहिस्ता २ पिंड

से न्यारी होकर ब्रह्मांड यानी ब्रह्मदेश में, और फिर वहाँ से संतों के दयाल देश में पहुँच कर और अपने सच्चे कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल का दर्शन पाकर परम आनंद को प्राप्त होगी। वह कुल्ल-मालिक अकह, अपार, अनंत और अविनाशी है और उसका देश भी अमर है और वहाँ का आनन्द भी अनन्त और अपार और अमर है और वहाँ पहुँचने वाली सुरत भी अमर हो जावेगी।

४७—सच्चे जोगेश्वरों के मत में और संत मत में सिर्फ़ इतना भेद है कि वे एक दरजे नीचे रहे यानी उनका सिद्धान्त पद शुद्ध माया की हद यानी ब्रह्मांड में रहा। और इस सबब से उनका आवागमन क़तई नहीं छूटा यानी प्रलय या महा-प्रलय के बाद फिर शरीर धारण करना पड़ा। और संत, माया की हद यानी ब्रह्मांड के पार गये और निर्मल-चैतन्य यानी कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के देश में पहुँच कर बासा किया। और वाचक-ज्ञानियों का यह हाल है कि उन्होंने चलना-चढ़ना (यानी माया देश को तै करना) नहीं माना। इस सबब से वे मलीन माया के देश यानी पिंड में ही रहे और मनाकाश में जिसको उन्होंने ब्रह्म या आत्मा क़रार दिया, समाये। और हरचन्द इन्होंने ब्रह्म को अपना सिद्धान्त माना, लेकिन उसके निज धाम की (जो ब्रह्मांड में वाक़ै है) इनको ख़बर नहीं पड़ी। इस

सबब से इनका दर्जा बहुत नीचा रहा और आवागवन उनका जल्द-जल्द होता रहा ।

बचन ९

मन और सुरत की चढ़ाई धीरज के साथ चाहिये और अभ्यास दुरुस्ती से यानी निर्विघ्न करना चाहिये ।

१—राधास्वामी मत के अभ्यासियों को चाहिये कि विरह और उमंग लेकर अपना अभ्यास नियम के साथ रोज़-मर्रा करें, और मन और सुरत और दृष्टि को पहिले पाँच-चार मिनट तीसरे तिल के मुक़ाम पर जमावें । और फिर पहले या दूसरे स्थान पर तवज्जह रख कर, यानी चित्त को ठहरा कर, शब्द को सुनें और ध्यान के वक़्त उसी मुक़ाम पर नज़र और चित्त को ठहरा कर स्वरूप का ख़्याल करें (चाहे जब नज़र आवें) । और अभ्यास करने में चढ़ाई के वास्ते नीचे से ऊपर को तरफ़ बहुत ज़ोर न लगावें । सहज स्वभाव, मन और चित्त और नज़र को ऊपर को तरफ़ तान कर मुक़ाम पर शब्द या स्वरूप के आसरे ठहरावें । और होशियारी रक्खें कि दुनिया के ख़्यालात किसी क़िस्म के, मन में न आवें और न किसी तरह की तरंग स्वार्थी वा परमार्थी उठावें । ऐसा करने से अभ्यासी को थोड़ा-बहुत रस और आनन्द शब्द या स्वरूप का ज़रूर मिलेगा ।

२—जो अभ्यास के वक़्त हालत विरह और उमंग की न होवे तो चाहिये कि पहले दो शब्द चितावनी और वैराग, और दो शब्द प्रेम के ग़ौर से पढ़ कर अभ्यास में बैठें और अपनी कसरों पर नज़र करके, दीनता के साथ, थोड़ी प्रार्थना, वास्ते प्राप्ति दया के, राधास्वामी दयाल के चरणों में करें और फिर भजन या ध्यान शुरू करें ॥

३—जो इस पर भी मन न माने और गुनावन और ख़्यालात बे फ़ायदा उठावे तो जो भजन करते होवें उस में ध्यान शामिल करदें यानी उसी आसन से बैठे हुये, स्वरूप का ध्यान करें और शब्द की तरफ़ भी तवज्जह रक्खें। और जो फिर भी गुनावन बन्द न होवें तो नाम का सुमिरन भी करते जावें। इस तरह मन थोड़ा-बहुत निश्चल होकर अभ्यास में लगेगा।

४—जो फिर भी गुनावन दूर न होवें और मन दुरुस्ती के साथ भजन में न लगे, तो भजन या ध्यान के वक़्त किसी प्रेम के शब्द या कुछ प्रेम की कड़ियों को अंतर में या थोड़ी आवाज़ के साथ थोड़ी देर गावें। उससे यक़ीन है कि गुनावन दूर हो जावेंगे और भजन और ध्यान का कुछ रस आवेगा।

५—जो इस पर भी मन रूखा-फीका रहे और ख़्यालात बे-फ़ायदा उठावे तो भजन और ध्यान छोड़ कर,

धुन के साथ नाम का सुमिरन करे। इस तरह कुछ सफ़ाई हासिल होगी। और फिर थोड़ी देर ध्यान या भजन करे या दोनों को मिला कर अभ्यास करे तो कुछ फ़ायदा मालूम पड़ेगा।

६—जो किसी वक़्त इन कामों में मन बिलकुल न लगे या रूखा-फीका रहे, तो पाँच शब्द जिन में रास्ते का भेद और चढ़ाई का हाल होवे, ग़ौर के साथ और अर्थों पर नज़र रख कर, आहिस्ते २ या थोड़ी आवाज़ के साथ पढ़ें। और मुक़ाम २ पर जैसा कि उनका ज़िक्र आवे, मन और चित्त को ख़्याल के साथ ठहराते जावें। और शब्द की हर एक कड़ी को चार या पाँच दफ़े या ज़्यादा पढ़ें। और उतनी देर उसी मुक़ाम पर जिसका ज़िक्र कड़ी में है, चित्त को ठहरावें। इस क़िस्म का पाठ थोड़ा-बहुत भजन और ध्यान के बराबर फ़ायदा देगा। और होशियारी रक्खें कि और कोई ख़्याल संसारी या परमार्थी मन में न आवे।

७—जो इन कार्रवाइयों में से कोई भी दुरुस्ती से न बन सके, तो समझना चाहिये कि मन निहायत कर्मी और मलीन है। और उसकी सफ़ाई का इलाज यह है कि चन्द रोज़ होशियारी के साथ सतसंग करे और प्रेमी और साध जन की थोड़ी-बहुत सेवा इख़्तियार करे, और उनके और सतसंग

के बचनों को चित्त देकर सुने और मनन करे। तब कुछ अर्से में सफ़ाई हासिल होगी और शौक़ पैदा हो जावेगा। उससे जो अभ्यास कि ऊपर लिखा गया है, फिर दुरुस्ती से बनना शुरू हो जावेगा।

८–और जो ऐसा मौक़ा न होवे कि कोई दिन सतसंग में रह कर सेवा और अभ्यास करे, तो यह तरकीब करे कि घन्टे-दो घन्टे बाद, पाँच मिनट या सात मिनट, जहाँ बैठा हो या कोई काम हाथों से कर रहा हो या चारपाई पर लेटा हो, आँख बन्द करके, पहले स्थान पर मन और सुरत और दृष्टि को जमा कर, सुमिरन और ध्यान करे। इस क़दर थोड़े अर्से यानी पाँच-सात मिनट में मन चंचल नहीं होगा और न कोई ख़्याल और तरंगें उठावेगा। इस तरह, दिन-रात में जो दस-बारह दफ़े भी यह अभ्यास बन पड़ा तो क़रीब एक घन्टे या कुछ ज़्यादा वक़्त इस निर्मल अभ्यास में लग जावेगा और कोई दिन में थोड़ा-बहुत रस ज़रूर आवेगा कि उसका असर हर वक़्त मालूम पड़ेगा। और मामूली भजन और ध्यान के वक़्त भी पाँच-पाँच, सात-सात मिनट कई बार करके मन स्थिर होकर कुछ रस पावेगा और रफ़्ता २ मामूली अभ्यास भी दुरुस्ती से बनेगा। और सिवाय उसके यह चन्द मिनट का अभ्यास भी और-और वक़्तों पर जारी रहेगा कि जिससे मन और

इन्द्रियों की सफ़ाई होती जावेगी और आनन्द भी आहिस्ता २ बढ़ता जावेगा।

९—जो किसी को वक़्त भजन या ध्यान के, इधर से ग़फ़लत हो जावे और अन्तर में होश रहे, तो यह निशान दुरुस्ती अभ्यास का है। लेकिन जो नींद की सी हालत हो जावे और दोनों तरफ़ का होश न रहे, तो मुनासिब है कि वक़्त शुरू होने ऐसी हालत के, दो-चार मिनट के वास्ते अभ्यास छोड़ कर आँखें खोल दे। और जो सुस्ती दूर न होवे तो उठ कर दो-चार क़दम टहल कर फिर अभ्यास करे। और जो फिर नींद की सी हालत होवे तो वही इलाज करे। और जो फिर भी ग़फ़लत आवे तो उस वक़्त अभ्यास मुल्तवी कर दे।

१०—एक वक़्त कम से कम आध घन्टा या बीस मिनट अभ्यास करना चाहिये और जिस अभ्यास (भजन या ध्यान) में मन ज़्यादा लगे, वह ज़्यादा करना चाहिये और दूसरा कम, लेकिन यह दोनों अभ्यास दो दफ़े रोज़-मर्रा ज़रूर करना मुनासिब है और जहाँ तक मुमकिन होवे, नाग़ा नहीं करना चाहिये।

११—मामूली तौर पर अभ्यास का वक़्त सुबह और शाम का मुनासिब है। और कोई क़ैद नहाने और धोने और जगह वग़ैरा की नहीं है। जिस तरह जिसका दिल

चाहे, आराम के साथ नर्म फ़र्श पर बैठे और जो पेशाब या पख़ाने की हाजत होवे, तो उससे फ़ारिग़ होकर बैठे। और जगह की इस क़द्र अहतियात चाहिये कि अभ्यासी के नज़दीक शोर-ओ-गुल न होवे और कोई ग़ैर आदमी वहाँ मौजूद न रहे, और कोई अभ्यासी को अभ्यास की हालत में न छेड़े। जो ज़रूरत होवे तो दूर से आवाज देवे।

१२—शौक़ीन अभ्यासी को इख़्तियार है कि चाहे जिस वक़्त, खाना खाने से पेश्तर या दो-तीन घन्टे बाद खाना खाने के, चाहे जिस जगह अभ्यास करे, और चाहे जितनी देर दस मिनट से लगा कर एक घन्टे या सवा घन्टे या डेढ़ घन्टे तक, जिस क़द्र दिल चाहे, एक मर्तबा अभ्यास करे। और जब दया से उसकी सुरत और मन सिमट कर ऊपर की तरफ़ को चढ़ने लगें तो शुरू में इस क़द्र अहतियात रक्खे कि बहुत ज़्यादा और बहुत ऊँचे की तरफ़ उनको न खींचे। आहिस्ता २ जिस क़द्र बर-दाश्त होवे, चढ़ाई करे। और जब ऐसा होवे कि ब-सबब ज़्यादा चढ़ाई के, दिल तड़पने लगे, तो जितने दर्जे बरदाश्त होवे अभ्यास जारी रक्खे, और जब ऐसी हालत दिल की बरदाश्त न होवे तो उस वक़्त अभ्यास छोड़ देवे। या जो ख़ुद-ब-ख़ुद खिंचाव ज़्यादा मालूम होता होवे और

उसकी बरदाश्त न कर सके या कुछ तकलीफ़ या ख़ौफ़ मालूम होवे, तो भी उस वक़्त अभ्यास छोड़ कर उठ खड़ा होवे, और फिर थोड़े अर्से बाद अभ्यास करे, ताकि आहिस्ता २ उस हालत की बरदाश्त हो जावे। और बाद अभ्यास के कुछ काम-काज भी करता रहे जिससे बदन और इन्द्रियाँ शिथिल और सुस्त न होने पावें।

१३—जो किसी अभ्यासी का, वक़्त ध्यान या भजन के, कोई हिस्सा बदन का सुन्न यानी सुस्त या बेकार हो जावे तो जानना चाहिये कि उससे अभ्यास दुरुस्त बनता है। ऐसी हालत को देख कर ख़ौफ़ और वहम न करना चाहिये। बाद अभ्यास के, आहिस्तगी के साथ उठ कर दस-पाँच मिनट चिहल-क़दमी करे तो सुस्ती बदन की रफ़ा हो जावेगी।

१४—जब भजन या ध्यान में विशेष रस या आनन्द मिलने से अभ्यासी की तबीअत में मस्ती और बे-परवाही और संसार के भोग-विलास और कर्रवाई की तरफ़ से किसी क़द्र नफ़रत पैदा होवे तो लाज़िम है कि ऐसे जोश की हालत में, किसी चीज़ या काम या रोज़गार या कुटुम्ब-परिवार का जल्दी से त्याग न करे और इस जोश को पक्का और ठहराऊ न समझे। थोड़े दिन में आहिस्ता २, यह रस हज़्म हो जावेगा, यानी साधारण हो जावेगा और फिर अपने त्याग वग़ैरा पर पछताना पड़ेगा। इस वास्ते, इस मुआमले

में निहायत अहतियात के साथ बर्ताव करना लाज़िम है। और उस जोश को, जिस क़दर मुमकिन होवे, ज़ब्त करना और दुनियादारों की नज़र से छिपाना मुनासिब है।

१५—और अभ्यासी को ऐसे जोश की हालत में अपने तईं पूरा मानना या अपना सब काम पूरा बन जाना नहीं समझना चाहिये, नहीं तो रास्ता, आइन्दा की तरक़्क़ी का, बन्द हो जावेगा और जो हालत कि पैदा हुई है, वह भी रफ़्ता २ साधारण हो जावेगी और फिर अपनी कसरें मालूम पड़ेंगी और वह समझ (पूरे मानने की) ग़लत हो जावेगी।

१६—अभ्यासी को हर हालत में मुनासिब है कि अपनी कसरों पर नज़र रक्खे और दीनता न छोड़े। और जब तक कि त्रिकुटी और दसवें द्वार में न पहुँचे, तब तक जो कुछ कि हालत मस्ती और बे-परवाही की उस पर गुज़रे और ज़्यादा से ज़्यादा आनन्द प्राप्त होवे, उसको पायदार और मुस्तक़िल न समझे। और दिन २ अभ्यास में तरक़्क़ी करे। और ऊँचे से ऊँची चढ़ाई पर नज़र और इरादा रक्खे। और देह और इन्द्रियों से थोड़ा-बहुत काम-काज करता रहे, जिसमें रूह की धार का चढ़ाव और उतार बराबर जारी रहे और तरक़्क़ी भी होती रहे। इस तरह अहतियात के साथ अभ्यास करने से काम पूरा और दुरुस्त बनेगा

और नहीं तो मस्ती और बे-परवाही ग़ालिब हो जावेगी और दुनिया और देह के काम में बहुत हर्ज वाक़ै होगा। और फिर अभ्यास और उसकी तरक़्क़ी में भी ख़लल पड़ेगा। और वह मस्ती की हालत भी एक-रस क़ायम नहीं रहेगी, और शायद तन्दुरुस्ती में भी किसी न किसी तरह का ख़लल वाक़ै होवे।

१७—वास्ते दुरुस्ती से जारी रहने कार्रवाई अभ्यास के, और ज़ब्त करने जोश मस्ती के, अभ्यासी को मुनासिब है कि संत सतगुरु या साधगुरू या प्रेमी अभ्यासी से, जो अपने से ज़्यादा दरजे का है, मेल करे और उनके सतसंग में वक़्तन-फ़वक़्ततन चंद रोज़ के वास्ते शामिल होना, ज़रूर जारी रक्खे। उनकी सोहबत और बचनों से इसको अपनी हालत की ख़ामी मालूम होती रहेगी और आनन्द और सरूर का नशा, जो इसको वक़्तन-फ़वक़्तन अभ्यास में हासिल होगा, ना-मुनासिब तौर पर बढ़ने नहीं पावेगा। और वे हर तरह से अंतर और बाहर मदद देकर, इस को जल्द-बाज़ी और मस्ती और दूसरे नुक़सान वग़ैरा से बचाते रहेंगे और दिन २ इसको तरक़्क़ी में मदद देंगे।

बचन १०

तरकीब रोकने मन की चाह और तरंगों की, और ज़ब्त करने इन्द्रियों की, और वर्णन फ़ायदा राधास्वामी दयाल की शरन का।

१—जब कि अभ्यास के समय मन और इन्द्रियाँ चंचल रहेंगी तो कुछ रस नहीं आवेगा और न कुछ तरक़्क़ी होवेगी। इस वास्ते वह उपाय कि जिससे मन थोड़ा-बहुत ठहरे, आगे लिखा जाता है।

२—मन के हाल को ग़ौर से विचारने और जाँच करने से मालूम होता है कि यह चार मौक़ों पर थोड़ा-बहुत क़ाबू में आ सक्ता है यानी चंचलता छोड़ कर जहाँ ठहराओ, वहाँ ठहर जाता है—एक, ख़ौफ़ के वक़्त, दूसरे, अपने मतलब के पूरे होने की जगह, तीसरे, इश्क़ और मुहब्बत की जगह, और चौथे, रंज के वक़्त।

पहिले, ख़ौफ़ का बयान

३—जिस वक़्त कि किसी क़िस्म का ख़ौफ़ दिल पर ग़ालिब होता है, उस वक़्त मन और इन्द्रियाँ शिथिल हो जाती हैं और जिस तरफ़ को कि तवज्जह के साथ उनको लगाओ तो थोड़े-बहुत लग जाते हैं। ख़ास कर भजन और ध्यान में, ऐसे वक़्त, मन और सुरत का सहज में सिमटाव

और ऊपर की तरफ़ चढ़ाई मुमकिन है, क्योंकि इस तरफ़ आस मिलने सहारे की, वास्ते दूर होने ख़ौफ़ या बचाव के, ख़ौफ़ की चोज़ से, रहती है। और ऐसे वक़्त पर जिस क़दर ख़ौफ़ ज़्यादा होता है। उसी क़दर मन और सुरत ज़ोर के साथ अन्तर में लगते हैं। लेकिन हद से ज़्यादा ख़ौफ़ की हालत में कोई काम नहीं बन सकता और ऐसी हालत दिल पर कभी नहीं आने देना चाहिये।

दूसरे, आशा पूर्ण होने की जगह

४—जिस जगह कि जीव का कुछ काम अटका हुआ है या जहाँ से जिसकी कोई आशा पूर्ण होने वाली है, वहाँ यह मन उमंग और दीनता के साथ कार्रवाई करने को तैयार रहता है और उस शख़्स के प्रसन्न और राज़ी करने को, जिससे या जिसके वसीले से वह मतलब पूरा होना मुमकिन है, कोशिश करता है, और अपनी टेक और आदत और तरंगें, चाहे जिस क़िस्म की होवें, फ़ौरन छोड़ देता है। और जिस तरफ़ वह शख़्स चाहे, उधर को फ़ौरन मुतवज्जह होकर, सर्व अंग से काम करने को तैयार होता है और नीच-ऊँच सेवा और ख़िदमत तन, मन और धन की, ख़ुशी से करता है।

तीसरे, इश्क़ और मुहब्बत की जगह

५—जहाँ इस मन को किसी क़िस्म की मुहब्बत है या किसी के साथ इश्क़ पैदा हो जाता है, वहाँ यह ग़ुलामों

के मुवाफ़िक़ ख़िद्मत और हाज़िरी उमंग के साथ करता है, और अपनी सर्व चाहें और तरंगें उसकी ख़ातिर छिन में छोड़ कर अपने माशूक़ की ख़ुशी और रज़ामंदी को मुक़द्दम समझता है, और ज़रा भी अपने नफ़े और नुक़सान और इज़्ज़त और हुरमत का आगा-पीछा नहीं सोचता है, और कुटुम्ब परिवार और बिरादरी वग़ैरा का ख़्याल नहीं करता है, और दुनिया की लज्जा और शर्म और ख़ौफ़ और उम्मेद वग़ैरा को ताक़ पर रख देता है, और जैसे माशूक़ चाहे, वैसे ही बर्तने को हर दम तैयार रहता है।

चौथे, दुक्ख और रंज के वक़्त

६—जब कोई सख़्त सदमा या मुसीबत या रंज वाक़ै होता है, उस वक़्त यह मन सब तरंगें संसारी तरक़्क़ी और इन्द्रियों के भोगों की छोड़ कर उदासीन हो जाता है। और सच्चे वैराग की हालत उस पर ग़ालिब हो जाती है, और निहायत दर्जे की दीनता और ग़रीबी के साथ बर्ताव करता है, और किसी पर ज़ियादती या सख़्ती करना पसन्द नहीं करता है। और आम तौर पर परमार्थ और ख़ास कर मालिक के चरणों की तरफ़ इस की सरधा ऐसे वक़्त में बहुत बढ़ जाती है। और संत और महात्माओं के वचनों को ग़ौर से सुनता और विचारता है और उन पर अमल करने को शौक़ के साथ तैयार होता है। और जो कोई

कड़ुवा या सख़्त वचन कहे, तो उसकी बरदाश्त करता है और उससे बदला लेने का इरादा नहीं करता।

७—जो ज़िक्र मन की हालत का ऊपर लिखा गया, उसका बर्ताव दुनिया में प्रत्यक्ष और ज़ाहिर नज़र आता है और परमार्थ में भी उन चार सूरतों में मन की वैसी ही हालत बल्कि उससे ज़्यादा बदलनी मुमकिन है। उस का ज़िक्र तफ़सील के साथ नीचे लिखा जाता है।

अव्वल, परमार्थी ख़ौफ़ का बयान

८—जबकि इस दुनिया और उसके सामान की नाशमानता सच्चे परमार्थी की नज़र में आई और देह धर कर जो दुख-सुख भोगने में आते हैं, उनका भी हाल उसने ग़ौर से दरियाफ़्त किया और जहाँ २ कि उसकी प्रीति या बंधन है, उसके सबब से भी जो ख़ुशी और तकलीफ़ आयद होती है, उसको भी उसने जाँच कर देखा कि अपनी ही आसक्ति का नतीजा है और फिर अपनी मौत और आइन्दा को ज़बर वासना और संग और स्वभाव के अनुसार बारम्बार जन्म और मरण का विचार करके जो ख़ौफ़ दिल में पैदा हुआ, तो उसके सबब से किसी क़दर शिथिलता और सुस्ती ज़रूर मन में आवेगी। जो हर वक़्त नहीं तो जिस वक़्त कि इन बातों का ख़्याल दिल में आवेगा, उस वक़्त ज़रूर मन की हालत बदलेगी। और

जब कि अपने सच्चे और कुल्ल-मालिक का पता और भेद घट में मालूम हुआ और उसका कुछ जलवा और प्रकाश भी सच्चे गुरू का संग करके नज़र आया, तब उस मालिक और गुरू के हुक्म के मुवाफ़िक़, संसार और परमार्थ में न बर्तने के सबब से, जो ख़ौफ़ मालिक की अप्रसन्नता का दिल में पैदा हुआ, वह सब से बढ़ कर और निर्मल और सच्चा वसीला मन की दुरुस्ती के वास्ते होवेगा। ऐसा ख़ौफ़ सिर्फ़ सच्चे परमार्थियों के दिल में कि जिन को हरदम कुल्ल-मालिक और गुरू की प्रसन्नता का ख़्याल रहता है, पैदा होगा, और वेही इसके सबब से बुरे कामों से बचेंगे।

९—यह सब ख़ौफ़ मन की गढ़त और उसकी दुरुस्ती के वास्ते और अभ्यास के समय उसको शब्द और स्वरूप में स्थिर करने के लिये और भोगों से बचते रहने के लिये, बड़ी भारी मदद देते हैं। इस वास्ते हर एक परमार्थी को चाहिये कि इन में से कोई न कोई ख़ौफ़ दिल में पैदा करके, संसार से अपना बचाव (जिस क़दर मुनासिब और ज़रूरी होवे) करता रहे और अंतर अभ्यास और बाहर सतसंग और सेवा, विरह अंग लेकर, दुरुस्ती से करता रहे।

१०—और जब कभी दुनिया का ख़ौफ़, किसी क़िस्म का, दिल में पैदा होता है, उस वक़्त भी अभ्यासी के मन

और सुरत किसी क़दर निश्चल होकर अभ्यास में जुड़ जाते हैं और अंतर में किसी क़दर शान्ति और तसल्ली उनको हासिल हो जाती है।

दूसरे, बयान आस का, वास्ते पूरे होने मतलब के

११—जो कि सच्चे परमार्थी के मन में सब से बढ़ कर एक आशा अपने मालिक से उसके निज धाम में पहुँच कर मिलने की ज़बर होगी और वह आशा बग़ैर दया और मेहर और बख़्शिश कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के पूरी होनी ना-मुमकिन है, और कुल्ल-मालिक और संत सतगुरु की दया उस वक़्त हासिल होगी कि जब वे सेवक की सेवा और दीनता और प्रेम और आज्ञाकारी होने से राज़ी और प्रसन्न होवें, इस वास्ते वह सेवक वास्ते प्राप्ति दर्शन और निज धाम के, ज़रूर ख़ुशी और उमंग के साथ उन अंगों में बर्तना शुरू करेगा कि जिससे राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की प्रसन्नता और दया हासिल होवे। और उस बर्ताव में उसको किसी तरह की दिक़्क़त और तकलीफ़ न होगी। बल्कि उस का मन उन अंगों में जिस क़दर मुमकिन होगा, बर्त कर राज़ी होगा और कोई अंग में न बर्तने से या भूल-चूक हो जाने से निहायत दुखी होकर पछतावेगा, और मुआफ़ी के वास्ते प्रार्थना करेगा

और आइन्दा को ज़्यादा होशियारी और एहतियात के साथ काम करेगा।

१२—इस वास्ते हर एक सच्चे परमार्थी को दर्शनों की चाह और निज धाम में पहुँचने की आशा ख़ूब मज़-बूत करके, वास्ते प्राप्ति मेहर और दया और प्रसन्न करने कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के, जिस क़दर बन सके जतन करना चाहिये, और जब २ भूल-चूक हो जावे तब २ अपने मन में शरमाना और पछताना और चरणों में प्रार्थना करना चाहिये।

तीसरे, बयान प्रेम और इश्क़ का राधास्वामी दयाल के चरणों में

१३—जब कि सच्चे परमार्थी को सतसंग करके साबित हो गया कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु ही सच्चे और पूरे हितकारी जीव के हैं, और निज रूप से हर दम और हर वक़्त इसके संग हैं और वे ही रचना भर में सबसे बड़े और समर्थ पुरुष हैं, और उनका धाम जो ऊँचे से ऊँचा और सबके परे है, अमर-अजर और परम आनन्द का स्थान है और वहीं से सुरत आदि में उतर कर आई और सिवाय कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के, और कोई, जीव के बंधनों को आहिस्ता २ काट कर, और उसको माया और

काल के जाल से निकाल कर, उस निज घर में पहुँचाने वाला नहीं है, तब उस सच्चे परमार्थी के दिल में ज़रूर प्रीति और प्रतीत राधास्वामी और संत सतगुरु के चरणों में आवेगी। और जिस क़दर कि उनकी दया से अभ्यास करके इसकी चाल चलती जावेगी और अंतर में दया और मेहर के परचे मिलते जावेंगे, उसी क़दर प्रीति-प्रतीत बढ़ती जावेगी, यहाँ तक कि दुनिया भर में उसको राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु से ज़्यादा या उनके बराबर कोई प्यारा नहीं लगेगा। और जिस क़दर प्रेम उसका शुरू से बढ़ता जावेगा, उसी क़दर वह तन-मन-धन की सेवा, ज़्यादा से ज़्यादा, करता जावेगा, और जान-प्राण तक उन पर नौछावर करने को तैयार रहेगा और किसी क़िस्म की सेवा करने और भक्ति के अंगों में बर्तने में उसको झिझक या लिहाज़ या शर्म या डर या सोच या विचार आगे-पीछे का नहीं रहेगा और उनकी आज्ञा में बर्तने को अपना बड़ा भाग समझेगा।

१४—इस वास्ते हर एक परमार्थी को राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरणों में प्रीति और प्रतीत लाना और अंतर और बाहर सतसंग जारी रख कर उसका दिन २ बढ़ाना मुनासिब और लाज़िम है कि जिससे उस पर दिन २ दया और मेहर की बख़्शिश ज़्यादा से

ज़्यादा होती जावे और सेवा और भजन और आज्ञा में बर्तना उस को सहज और आसान हो जावे।

चौथे, दुक्ख और रंज यानी तीन तापों में गिरफ़्तारी

१५—इस दुनिया में कोई जीव ऐसा नहीं है कि जो किसी न किसी क़िस्म के दुःख में, किसी न किसी वक़्त, गिरफ़्तार न होवे यानी तीन ताप का चक्कर हमेशा चलता रहता है और सब जीव रोग-सोग और उपाधि के झटके सहते रहते हैं।

१६—दुनियादार ऐसे दुक्खों के वक़्त रोते और चिल्लाते और बिल्लाते हैं और पुकारते हैं, मगर कुछ सुनवाई नहीं होती। लेकिन परमार्थी जीव ऐसी तकलीफ़ों के वक़्त, अपने कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों की तरफ़, अपने घट में, दौड़ते हैं यानी उस वक़्त सुमिरन, ध्यान और भजन ज़ोर देकर करते हैं कि जिस से उन को थोड़ा-बहुत, दया से, सहारा मिलता है। और ऐसे वक़्त में जो कि मन उनका दुनिया और उसके समान और भोगों की तरफ़ से सच्चा उदास होता है और मामूली चंचलता छोड़ देता है यानी किसी क़िस्म की तरंगें और ख़्याल और गुनावन वग़ैरा नहीं उठाता है, इस सबब से वे ज़्यादा आसानी के साथ अंतर अभ्यास में लग जाते हैं, और उस तकलीफ़ से दूर

होने या हलके होने या न व्यापने या कम व्यापने की नज़र से, ज़्यादा विरह के साथ उनके मन और सुरत नाम और रूप और शब्द में जुड़ जाते हैं। और उनको फ़ौरन उसका नतीजा यानी दया और मेहर और रक्षा और सम्हाल अपने घट में मालूम होती है।

१७—इस वास्ते कुल्ल परमार्थियों को मुनासिब और लाज़िम है कि जिस क़दर बन सके,तकलीफ़ के वक़्त थोड़ा-बहुत अंतर अभ्यास करें, बैठे २ या लेटे २, और जो मामूली तौर से न बन सके तो अपने चित्त को सहज तौर से चरणों में जोड़ते रहें, तो ज़रूर कुछ न कुछ मदद मिलेगी यानी अंतर में दया का सहारा और ताक़त पावेंगे। और ऐसी हालत में हमेशा यह ख़्याल रखना चाहिये कि जो कुछ होता है वह अपने मालिक राधास्वामी दयाल की मौज से होता है और वे उसमें हमेशा अपने बच्चों की रक्षा और सम्हाल करते हैं और उनके दुखदाई कर्मों के फल को बहुत हलका कर देते हैं और उसी में उनके मन की गढ़त और सफ़ाई भी करते हैं। और जो इस तरह मौज से तकलीफ़ आवे, उसमें ज़्यादा घबराना या निराश नहीं होना चाहिये, बल्कि धीरज के साथ राधास्वामी दयाल की दया का बल लेकर उसको सहना चाहिये, और जहाँ तक मुमकिन हो, मौज के साथ, बग़ैर शिकवा और शिकायत के

मुवाफ़िक़त करना मुनासिब है। और जब दिल चाहे,प्रार्थना करे और दया और मेहर माँगे। लेकिन जो प्रगट दया होती हुई न मालूम पड़े यानी तकलीफ़ किसी क़दर न घटे, तो भी उसको ऐसी ही मौज समझ कर, जहाँ तक बने,बरदाश्त करने को तैयार होवे, तो ज़रूर वे दया से थोड़ी-बहुत ताक़त बरदाश्त की बख़्शेंगे। और जो मौज कम करने या घटाने तकलीफ़ की नहीं होगी, तो भी थोड़ी-बहुत उसकी मसलहत अपने सेवक को जता कर सहारा देंगे, क्योंकि बाज़े कर्म इसी तरह काटे जाते हैं और उसमें मतलब यह है कि अभ्यासी भक्त की मौज से जल्द सफ़ाई हो जावे और कोई कर्म उसको चरणों में पहुँचने और वहाँ बासा पाने से न अटकावे। इस वचन से यह न समझना चाहिये कि तकलीफ़ या बीमारी के वक़्त, निरा-निरी अभ्यास के आसरे रहे, नहीं, ज़ाहिरी तदबीर मिस्ल दवा वग़ैरा के दस्तूर के मुवाफ़िक़ ज़रूर करना चाहिये और दया का आसरा और भरोसा वास्ते कामयाबी उस तदबीर या दवा के मन में रखना चाहिये, क्योंकि दवा का असर, मुनासिब और और मुवाफ़िक़ दया से होगा। और जो भक्त के किसी कुटुम्बी या रिश्तेदार को कोई तकलीफ़, या मुसीबत आयद होवे, तो उस भक्त की भक्ति के सबब से, बहुत सहायता उस कुटुम्बी की हो जावेगी। मगर जैसे कि उसके कर्म हैं, उनका भोग,

दया और सहायता के साथ। उनको ज़रूर भोगना पड़ेगा, क्योंकि कर्मों का लेख, जैसा कुछ कि है, मिट नहीं सक्ता है, पर दया से हलका हो जाता है या परमार्थी भाव में बदल दिया जाता है।

१८—मन की हालत और कोई २ ख़वास उसके ऐसे हैं कि बग़ैर थोड़ी-बहुत तकलीफ़ पाये, उनकी गढ़त और दुरुस्ती मुमकिन नहीं है। यानी इसका संसार में बंधन और झुकाव ऐसा ज़बर है कि जब तक अपने प्यारे जीवों और भोगों और पदार्थों से यह किसी क़दर तकलीफ़ या दुख न पावे, तब तक उनकी तरफ़ से मुख नहीं मोड़ता। इस वास्ते जब इसको किसी क़दर छुड़ाना, और उन भोगों से हटाना मुनासिब और ज़रूरी मालूम होता है, और बचनों की समझ-बूझ लेकर यह उनसे जैसा चाहिये वैसा नहीं हटता है, तब मौज से इसको उन मुआमलों में, किसी न किसी क़िस्म की तकलीफ़ या रंज या झगड़ा या तकरार वग़ैरा पैदा करके हटाया और बचाया जाता है।

१९—ऐसी तकलीफ़ें या झगड़े, जब २ पेश होवें, उनको मसलहत वास्ते परमार्थी फ़ायदे के, समझ कर, सच्चे परमार्थियों को ऐसी मौज के साथ मुवाफ़क़त करना चाहिये।

२०—सिवाय इन चार सूरतों के, पाँचवी जुगत वास्ते दुरुस्ती और सम्हाल मन के, और दूर करने उसके

विकारों के, यह है कि यह शख़्स औरों में औगुण और विकार के अंग देख कर और उनको बुरा समझ कर अपने हाल की तरफ़ नज़र करे कि आया वही औगुन और विकार मेरे में भी हैं या नहीं, और जो हैं तो वे और लोगों को ऐसे ही बुरे मालूम होते होंगे जैसे कि औरों के औगुण मुझ को बुरे मालूम होते हैं। फिर औरों को नसीहत करने या उनके औगुणों की बुराई करने से पहिले मुझको लाज़िम और मुनासिब है कि अपने औगुणों और विकारों को दूर करूँ। और इस तरह यह शख़्स आहिस्ता २ औरों के औगुण देख कर अपनी सफ़ाई करे, तो कुछ अर्से की ऐसी कार्रवाई से बहुत-कुछ दुरुस्ती और सम्हाल मन की मुमकिन है। और अपने मन के हाल पर नज़र करने में इस क़दर एहतियात चाहिये कि सब तरह के विकारों और औगुणों पर, चाहे वे संसार में नुक़सान करने वाले होवें या परमार्थी कार्रवाई में विघ्न डालने वाले होवें, ग़ौर से नज़र करे और उनके दूर करने में जहाँ तक बन सके राधास्वामी दयाल की दया का बल लेकर कोशिश करे।

२१—ईश्वर का भी वाक्य है कि मैं वास्ते दुरुस्ती और बचाव और सम्हाल अपने भक्तों के, उनको तीन चीज़ें देता हूँ—पहिले, थोड़ा रोग, दूसरे, संसारियों में किसी क़दर निरादर, तीसरे, किसी क़दर निरधनता यानी वाफ़ी और काफ़ी धन न का होना।

पहिले, रोग का फ़ायदा

२२—थोड़ी बहुत बीमारी के रहने से मन कमज़ोर रहेगा और ज़्यादा भोग-बिलास में नहीं बर्तेगा और अहंकार मन में कम आवेगा, और दूसरे पर सख़्ती कम करेगा और मौत का ख़्याल जब-तब आता रहेगा और शरीर बहुत पुष्ट न होगा कि जिससे भजन में हर्ज पैदा होवे ।

दूसरे, निरादर का फ़ायदा

२३—जब संसारी और बिरादरी के लोग तान और निंदा और हँसी करेंगे और भक्त को नादान समझ कर उसका निरादर करेंगे, तो उसका दिल उनकी तरफ़ से ख़ुद-ब-ख़ुद और सहज में हट जावेगा और मेल बहुत कम होवेगा । इस तरह सहज में संसारियों के साथ मुहब्बत और नशिस्त-बरख़ास्त और बात-चीत बहुत कम हो जावेगी और उनका संसारी असर भक्त के दिल को नुक़सान नहीं पहुँचावेगा ।

तीसरे, निरधनता का फ़ायदा

२४—जब कि धन की आमदनी सिर्फ़ गुज़ारे के लायक़ होगी और भक्त के पास जमा नहीं होगा, तो उसका मन, ज़रूरत के वक़्त, हमेशा मालिक की तरफ़ रुजू होगा और दया और मदद माँगेगा, और धन का भरोसा और

अहंकार नहीं करेगा और भोगों में भी कम बर्तेगा, क्योंकि जिस चीज़ और दिखावे के सामान को उसका मन चाहेगा, उसको ब-सबब काफ़ी न होने धन के, ख़रीद् नहीं सकेगा और इस तरह निभाना रहेगा।

२५—परमार्थियों को समझना चाहिये कि मुसीबत और तकलीफ़ एक क़िस्म की कसौटी है। इसमें अपने मन के हाल की, और भी प्रीति और प्रतीत अपने इष्ट की, खूब जाँच होती है और अपनी कसरों को मालूम करके उनके दूर करने का मौक़ा मिलता है। यह ज़रूर नहीं है कि भक्तों पर हमेशा तकलीफ और मुसीबत की ऐसी हालत गुज़रती रहे, लेकिन कभी २ इसका आयद् होना, वास्ते तरक़्क़ी उनके परमार्थ और दूर करने कसरों के, मुनासिब और ज़रूर है। और इसकी मसलहत और ज़रूरत कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु खूब जानते हैं। ख़ास मतलब उनका यही है कि अपने प्यारे भक्त को सब तरह से निर्मल और साफ़ करके, और अपने चरणों की प्रीति और प्रतीत बढ़ा कर अपने निज धाम में बासा देवें और काल और माया के जाल और कर्मों के कष्ट और क्लेशों से छुड़ा कर पूर्ण और अमर आनन्द बख़्शें।

२६—मालूम होवे कि जब तक मन में संसार और संसारी लोग और माया और उसके भोगों का भाव और

प्यार है, तब तक जीव काल का क़र्ज़दार है और वह आसा धर कर कर्म करने से बाज़ नहीं रहेगा और फिर उस कर्म का फल, दुख-सुख भी ज़रूर भोगेगा। इस वास्ते, राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की नज़र यही रहती है कि सिवाय ज़रूरी कार्रवाई के, फ़िज़ूल ख़्वाहिशें और तरंगें, वास्ते तरक़्क़ी और विस्तार जगत के व्यवहार और भोग बिलास के, अपने भक्त के हृदय से जिस क़दर मुमकिन होवे, दूर कर दें, ताकि निज घर के पहुँचने के जतन और साधन में कोई संसारी बंधन और ख़्वाहिश उसको रास्ते में न अटकावे।

राधास्वामी दयाल की दया और उनकी शरन का फ़ायदा

२७—यह सब तद्बीरें और जतन और हालतें जिनका ऊपर बयान हुआ, वास्ते थोड़ी-बहुत दुरुस्ती और गढ़त मन के, मुफ़ीद हैं और हर एक सच्चे परमार्थी को उनका ख़्याल अपने परमार्थी बर्ताव में रखना ज़रूर चाहिये। लेकिन बग़ैर दया और मेहर राधास्वामी दयाल के, इन में पूरी कामियाबी होनी मुश्किल है। और यह दया उस वक़्त हासिल होगी, जब प्रेमी भक्त राधास्वामी दयाल को कुल्ल-मालिक और सर्व समर्थ समझ कर, उनकी सच्चे मन से शरन लेवेगा और सर्व बल और आसरे और अहंकार

छोड़ कर, राधास्वामी दयाल की दया का भरोसा मन में रखकर, अपने परमार्थ और स्वार्थ की कार्रवाई, जहाँ तक मुमकिन होवे, उनकी मौज और हुक्म के मुवाफ़िक़ शुरू करेगा।

२८—शरन का स्वरूप यह है कि जैसे तीन-चार वर्ष का बालक अपनी माता के आसरे रहता है और दुख-सुख के वक़्त उसी की गोद की तरफ़ दौड़ता है, और जैसे माता रक्खे, उसी में राज़ी रहता है, और हरचंद कि खेल-कूद में भी और लड़कों के साथ शामिल होता है, पर थोड़ी २ देर बाद माता की याद करके उसके पास जाता है, और उसके दूध और दर्शन और प्यार का आधार रखता है, ऐसे ही प्रेमी भक्त राधास्वामी दयाल के चरण-रस का आधार रखता है, यानी जब तब ध्यान और भजन करके, अन्तर में थोड़ा-बहुत रस लेता रहता है और अबल बालक की तरह, सर्व अङ्ग करके, परमार्थ और स्वार्थ में उन्हीं की दया और सम्हाल का भरोसा रखता है।

२९—ऐसे भक्त पर राधास्वामी दयाल ज़रूर दया करते हैं और उसके सब कामों की, और भी मन और इन्द्रियों की, हर तरह से सम्हाल फ़रमाते हैं, और जब वह किसी काम में भूलता है या चूकता है और उसके बाद अपने मन में झुरता और शरमाता है और पछताता है और

वास्ते माफ़ी के, प्रार्थना करता है, तब वे फ़ौरन उसकी भूल-चूक माफ़ फ़रमाते हैं। ऐसे भक्त के मन में हमेशा ऐसी समझ और प्रतीत रहती है कि जो कुछ उसकी निसबत होता है, वह राधास्वामी दयाल की मौज से होता है और वह मौज चाहे जैसी होवे, दया और मसलहत से ख़ाली नहीं है यानी उसमें किसी न किसी क़िस्म का फ़ायदा उसका, चाहे वह जल्द मालूम पड़े या ब-देर, ज़रूर होगा। और जो किसी हालत में उसको बेचैनी या घबराहट होती भी है, तो वह उस वक़्त सहायता के वास्ते राधास्वामी दयाल के चरणों की तरफ़ दौड़ता है यानी अन्तर में अपने मन और सुरत को चरणों में जोड़ता है, और थोड़ा-बहुत रस और सहारा लेकर किसी क़दर शान्ति ज़रूर हासिल करता है।

३०—इस वास्ते कुल्ल सच्चे परमार्थियों को मुनासिब और लाज़िम है कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल को अपना सच्चा माता और पिता और रक्षक और हितकारी समझ कर, सच्चे मन से उनके चरणों की शरण लेवें और जितने काम परमार्थी और स्वार्थी हैं, उनमें मुनासिब तदबीर और जतन, जैसा कि हुक्म है या जैसा कि दस्तूर है, करते रहें, पर उनके फल की निसबत दया और मेहर का आसरा और भरोसा रख कर, जैसी मौज हो, उसको मंज़ूर

करें, यानी उनके साथ मुआफ़क़त करें। और जिस क़दर कि अपने से बन सके, ख़ास कर परमार्थी कामों में, मेहनत और कोशिश करते रहें और हर वक़्त दया और रक्षा और सम्हाल माँगते रहें, तो उनका काम सहज में आहिस्ता २ दुरुस्त बनता जावेगा और मन और इन्द्रिय भी रफ़्ते २ क़ाबू में आते जावेंगे। और वास्ते परख दया और मेहर के, थोड़ा-बहुत नित्त अभ्यास अंतर में करना मुनासिब है और मन की चाल की भी निरख-परख यानी निगरानी रखना ज़रूर है, ताकि उसकी हालत की ख़बर पड़ती रहे। और क़ायदे और हुक्म के मुवाफ़िक़ जिस क़दर दुरुस्ती उसकी मुमकिन है, करते रहें और जो कुछ कि अपनी ताक़त से न बन सके, उसकी दुरुस्ती मौज के हवाले करके दया के उम्मेदवार रहें।

बचन ११

नित अभ्यास करना चाहिये और जिसमें रस ज़्यादा आवे, वही काम ज़्यादा करे, और हर हाल में दया और मेहर का भरोसा रक्खे।

१—राधास्वामी मत के अभ्यासियों को चाहिये कि भजन और ध्यान और धुन के साथ सुमिरन, जिस क़दर बन सके, करें, और इनमें से जिस अभ्यास में मन ज़्यादा

रुजू होवे, उसी को ज़्यादा देर तक करें, और जिसमें मन कम लगे, उसको कम करें।

२—जो भजन में ज़्यादा मन लगे और सुमिरन और ध्यान की तरफ़ तवज्जह कम होवे, तो भजन ज़्यादा करें और जो दिल चाहे तो थोड़ा ध्यान भी किसी वक़्त करे।

३—और नाम का सुमिरन धुन के साथ उस वक़्त करें कि जब मन, भजन और ध्यान में न लगे, नहीं तो कुछ ज़रूर नहीं है। जब दिल चाहे, तब थोड़ा या बहुत करें।

४—लेकिन जो सतसंग प्राप्त नहीं होवे तो थोड़ा पाठ बानी और बचन का, समझ २ कर नियम के साथ हर रोज़ करें। यह किसी क़दर सतसंग का फ़ायदा देगा और इससे होशियारी और लगन जागती रहेगी।

५—जो थोड़ी-बहुत खटक अपने जीव के कल्याण की दिल में रही आवेगी और थोड़ा-बहुत अभ्यास और पाठ नियम के साथ जारी रहेगा, तो राधास्वामी दयाल, जब जब और जिस तरह मुनासिब समझेंगे, ज़रूर उस अभ्यासी पर दया फ़रमाते रहेंगे और अभ्यास में तरक़्क़ी भी बख़्शते रहेंगे। इस तरह, एक दिन ज़रूर जीव का कारज बन जावेगा।

६—जब कभी अभ्यास में रस और आनन्द न आवे, तो समझना चाहिये कि किसी ओछे कर्म का चक्कर है। ऐसे वक़्त में मुनासिब तो यह है कि ज़ोर देकर, मुवाफ़िक़

मामूल, अभ्यास करे, चाहे रस आवे या नहीं, और जो ऐसा न बन सके तो अभ्यास थोड़ा करे और उस रोज़ तवज्जह के साथ पाठ ज़्यादा करे और ख़ास कर चितावनी और प्रेम और चढ़ाई के शब्दों को पढ़े ।

७—ऐसी हालत में ज़्यादा घबराना या निराश नहीं होना चाहिये, बल्कि ओछे कर्म के चक्कर को जल्द काटने के लिए कुछ परमार्थी कार्रवाई, जो बन सके, तो मामूल से थोड़ी ज़्यादा करनी चाहिये ।

८—हर हाल में मेहर और दया का भरोसा रखना चाहिये । जब कि दुनिया में कोई शख़्स किसी की मेहनत और हाज़िरबाशी का एवज़ाना नहीं रखता है तो कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल अपने भक्त की सेवा किस तरह ख़ाली रक्खेंगे ?

९—कभी २ अभ्यास का रस न मिलने में भी कुछ मसलहत है, यानी जो कोई दिन कुछ रस नहीं मिला या कम मिला तो आगे ज़्यादा मिलने की उम्मेद है या कोई दूसरा फ़ायदा, जैसे मन की गढ़त, और समझ-बूझ और प्रीति और प्रतीत पक्की करना और बढ़ाना वग़ैरा २ मुतसव्वर है ।

१०—इस वास्ते, घबरा कर या निराश होकर अभ्यास को छोड़ना नहीं चाहिए और न राधास्वामी दयाल की

तरफ़ से बे-प्रतीत होना चाहिए, बल्कि अपने मन और इन्द्रियों के हाल और चाल पर ग़ौर से नज़र करना चाहिये कि कुछ न कुछ उसकी कसर के सबब से अभ्यास का रस नहीं मिला। और उस कसर के दूर करने का जतन, दया का बल लेकर करना चाहिये ताकि विघ्न जल्दी दूर हो जावें और आइन्दा को ख़लल न डालें।

११—और अभ्यासी को मुनासिब है कि जो कोई सतसंगी अपने से ज़्यादा दर्जे और ज़्यादा तजरुबे का होवे, उससे हाल अपना कह कर सलाह और मदद लेवे। उससे भी कुछ फ़ायदा होगा और तबीयत को ताक़त आवेगी।

१२–अभ्यासी को इस क़दर एहतियात ज़रूर चाहिये कि भोगों की चाह और तरंग कम उठावे और उनमें ज़रूरत के मुताबिक बर्ताव करे, क्योंकि जो इन्द्रियों के भोग में ज़्यादती के साथ बर्ताव रहेगा तो भजन में मन कम लगेगा और रस कम आवेगा।

१३–इस वास्ते अभ्यासी सतसंगी को चाहिये कि जब-तब चितावनी और बैराग और भक्ति और प्रेम के शब्दों का पाठ करता रहे, और जब मन बे-फ़ायदा और फ़िज़ूल तरंगें उठावे, तब उनको, जहाँ तक मुमकिन होवे, रोके और हटावे और मन में शरमावे और पछतावे और प्रार्थना करे। आहिस्ता २ हालत बदलेगी।

१४—इस काम में जल्दी करना मुनासिब नहीं है, क्योंकि यह मन जुगान-जुग और जन्मान-जन्म से भूला हुआ और भरमा हुआ है और शुरू से इसका झुकाव संसार और भोगों की तरफ़ हो रहा है । सो आहिस्ते २ इसका स्वभाव बदलेगा और अन्तर में मुख मुड़ेगा । दया राधास्वामी दयाल की शामिल-ए-हाल है । लेकिन वह भी आहिस्ता २ कार्रवाई करेगी, क्योंकि एक दम हालत बदलने में पूरा और ठहराऊ फ़ायदा नहीं होगा ।

१५—और सतसंगी अभ्यासी को यह भी ख़्याल रखना चाहिये कि राधास्वामी मत का मतलब मन और सुरत के समेटने और चढ़ाने का है । सो जिस तरह यह काम आसानी से हो सके (यानी जिस अभ्यास में मन ज़्यादा लगे) वही जतन करना चाहिये । और दिल में शौक़ देखने रोशनी और चमत्कारों का या हासिल होने सिद्धि और शक्ति का नहीं रखना चाहिये, क्योंकि जो इस क़िस्म की आशा मन में रही तो अभ्यास में निर्मल रस नहीं आवेगा । इस वास्ते मुनासिब है कि भजन के वक़्त शब्द की तरफ़, और ध्यान के वक़्त स्वरूप और मुक़ाम की तरफ़ (चाहे कुछ नज़र आवे या नहीं) तवज्जह रक्खे और गुनावन किसी क़िस्म की न उठावे, तो थोड़ा-बहुत रस मन और चित्त के एकाग्र होने से ज़रूर मिलेगा । और इसी का

नाम निर्मल रस है। और जब मौज से रोशनी वग़ैरा या कोई और कैफ़ियत नज़र आवे तो उसको देखे, मगर मन अपना उस में न बाँधे और न ख़्वाहिश इस बात की रक्खे कि बार २ वही रोशनी या कैफ़ियत नज़र आवे, नहीं तो शब्द और स्वरूप और मुक़ाम की तरफ़ से तवज्जह किसी क़द्र हट जावेगी और मन रूखा और फीका हो जावेगा और अभ्यास में जैसा चाहिये, नहीं लगेगा। और ऐसा ख़्याल दिल में पैदा होगा कि हम को कुछ हासिल नहीं हुआ या हमारी तरक़्क़ी नहीं होती है या कि हम पर कुछ दया नहीं है और फिर अनेक तरह की गुनावनें भी पैदा होकर मन को अभ्यास की तरफ़ से ढीला कर देंगी।

बचन १२

वर्णन सत्त पद के सच्चे खोजी का, और यह कि वह सत्त पद असत्त यानी माया देश के परे है, और उसके मिलने का रास्ता घट में है, और इस रचना में उस सत्त की सिर्फ़ किरणें आई हैं और उन्हीं की सत्ता से यहाँ की कुल्ल कार्रवाई हो रही है।

१—सत्त पद का सच्चा खोजी वह है कि जिसको सच्ची चाह इस बात की है कि सत्त वस्तु को तहक़ीक़ करे

कि वह क्या है और कहाँ है और कैसे मिले। और इस खोज करने में जब उसका सही पता लग जावे, तो उस सत्य वस्तु के हासिल करने में किसी तरह की उसके मन में अटक या लज्जा और शर्म और ख़ौफ़ न रहे और न किसी तरह की किसी में उसकी टेक या पक्ष होवे। और न यह इरादा होवे कि जो कोई बात उसने पहिले सुनी और पढ़ी है या समझी है या अपनी विद्या और बुद्धि से विचारी है, उसके साथ जहाँ तक बने, मेल मिलावे। और नई सही तहक़ीक़ात होने पर किसी तरह का अफ़सोस या मन की हठ या सुस्ती पिछली समझ या विचार के छोड़ने में न करे। यानी सत्य वस्तु के मालूम होने पर ख़ुश होकर उसको फ़ौरन ग्रहण करे और उसके हासिल करने में किसी तरह का पस-ओ-पेश न करे और अपनी पिछली समझ और विचार के ग़लत साबित होने पर, सुस्त और उदास होकर ऐसा कह कर कि असल सत्य वस्तु की प्राप्ति का जो जतन बताया गया है, वह महा कठिन है, हट न जावे।

२—जो कोई कि तहक़ीक़ात की हालत में किसी के धमकाने या डराने या फुसलाने से हट जावे या अपनी बात रखने को फ़िज़ूल बातें बना कर के खोज के जारी रखने की निसबत उज़रात पेश करे, या किसी क़दर अपनी ओछी समझ-बूझ की पक्ष करके साफ़ अक़्ल के साथ बचन न सुने

और न समझना चाहे या कोई ओछी दलील पेश करके सरीह सच्ची बात को न माने और न क़ुबूल करे या सच्ची वस्तु के लखाने वाले और उसके संगियों में औगुण देखे या उनकी चाल-ढाल पर बे-समझे-बूझे (संसारी की अक़्ल के मुवाफ़िक़) एतराज़ करे, तो जानना चाहिये कि वह सच्चा खोजी नहीं है। और फिर ऐसे शख़्स से, सत्य वस्तु के लखाव और उसकी प्राप्ति की जुगत वग़ैरा से बाबत बात-चीत करनी ना-मुनासिब होगी, क्योंकि ऊपर की बातों से साफ़ मालूम हो जावेगा कि उसका इरादा सत्य वस्तु के ग्रहण करने का नहीं है।

३—जो कोई तहक़ीक़ात पूरी करके क़ायल हो जावे और ऐसा कहे कि हक़ीक़त में सत्त वस्तु जो लखाई गई है, सही है, और उसकी प्राप्ति की जुगत और जतन भी सही है, लेकिन मैं फ़लाँ २ आदत और स्वभाव या खान-पान या फलाँ चाल-ढाल को, जिनका छोड़ना वास्ते प्राप्ति उस सत्य वस्तु के ज़रूर है, नहीं छोड़ सक्ता, तो भी उस का नाम सच्चा और पूरा खोजी और दर्दी नहीं हो सक्ता, और इस वास्ते उससे भेद की बातें कहना मुनासिब न होगा।

४—अब समझना चाहिये कि सत्य वस्तु वह है कि जो स्वतन्त्र और आप ही आप है और किसी तरह किसी के आधीन नहीं है, और सदा एक-रस और एक-हाल पर है, और कभी उस में कुछ अदल-बदल नहीं होता, और जो

महा प्रेम और महा आनन्द और महा चैतन्य और महा ज्ञान स्वरूप है, और जो कुछ कि जहाँ-तहाँ सिवाय उसके है या नज़र आता है, वह सब उसके आधीन है और उसी की सत्ता से क़ायम है।

५—अब ग़ौर करो कि इस लोक में जो कुछ कि नज़र आता है, वह सदा एक-रस क़ायम नहीं रहता, यानी नाशमान है। लेकिन जितने अर्से तक कि यहाँ की हर क़िस्म की रचना ठहरी हुई नज़र आती है, वह उसी सत्य की सत्ता से क़ायम है यानी वह सत्ता किरण रूप अथवा सुरत स्वरूप से यहाँ हर एक देह में मौजूद होकर कुल्ल कार्रवाई उसकी अपनी शक्ति से करती है और जब वह सत्ता खिंच जाती है, यानी देह से उसका वियोग हो जाता है, तो उस देह का अभाव हो जाता है।

६—इस सत्ता यानी सुरत में थोड़ी-बहुत वही ताक़त और शक्ति है जो कि उसके भंडार यानी कुल्ल-मालिक में है। और वही सच्चा सत्य-पद है और यह सुरत उसकी अंश यानी किरण है। यह हाल हर एक चीज़ यानी दरख़्त और जानदार के बीज से, जिस वक़्त कि प्रथम धार उसमें से निकलती यानी कुला फूटता है और सुरत अपना ज़हूर करती है, साफ़ ज़ाहिर होता है कि उसी वक़्त से जितनी शक्तियाँ क़ुदरत की हैं, जैसे पाँच तत्त्व और तीन गुण

और रोशनी और बिजली की शक्ति और खैंच-शक्ति और हटाव-शक्ति और बनाव-शक्ति और संहार-शक्ति वग़ैरा हाज़िर होकर उस सुरत की ताबेदारी में रल-मिल कर उसकी देह के बनाव और बढ़ाव और सम्हाल में मदद देती हैं। और जब वह सुरत देह को छोड़ती है तब यही शक्तियाँ आपस में लड़-भिड़ कर, उस देह के स्वरूप को बिगाड़ देती हैं। इससे सुरत की हुकूमत कुल्ल क़ुदरत की शक्तियों पर जो इस रचना में काम दे रही हैं, ज़ाहिर है।

७–ऊपर के बयान से ज़ाहिर है कि वह सत्तपद इसरचना में किरण यानी सुरत स्वरूप है। और वह हर एक देह में चाहे वह ज़मीनी है, या आसमानी, मौजूद है, और कुल्ल कार्रवाई उस देह की बल्कि और देहियों की, जो उसके मुताल्लिक़ यानी आधीन हैं, अपनी ताक़त से कर रहा है। इस लिए जो कोई उस सत्त का खोज करना चाहता है और उससे मिलने की चाह रखता है तो वह पहिले अपने सुरत स्वरूप का खोज करे और उससे मिल कर फिर उसके भंडार का पता लगा कर, उससे मिले। और यह पता और खोज अपने घट में लग सक्ता है, बाहर खोज इसका नहीं चल सक्ता और न कभी बाहर जतन करने से उस सत्त पद से मेला होगा।

८—ज़ाहिर है कि जब तक सुरत का ताल्लुक़ यानी बंधन देही या और जानदारों और पदार्थों के साथ, जो कि

नाशमान हैं और हमेशा उनकी हालत बदलती रहती है, रहेगा, तब तक उसको सच्चा यानी अमर सुख प्राप्त नहीं हो सक्ता और दुख और क्लेश वग़ैरा से सच्ची निवृत्ति नहीं हो सक्ती। इस वास्ते जो कोई अमर आनन्द और सत्त पद की प्राप्ति चाहता है, उसको लाज़िम है कि सुरत की धार को (जो शब्द की धार है) पकड़ कर अपने घट में उल्टा चले, तो पहिले उसको सुरत का स्वरूप, जो कि संतों के दसवें द्वार यानी सुन्न में है, नज़र आवेगा, और फिर उस रूप से ब-दस्तूर शब्द की डोरी पकड़ के और ऊपर चढ़ के सुरत के भंडार में, जो कुल्ल-मालिक का धाम और असली सत्य पद है, पहुँचेगा और अमर और पूर्ण आनन्द को प्राप्त होगा।

६—इस धाम में सिवाय सत्त के, और कोई दूसरी चीज़ नहीं है, और वहाँ की रचना ऐन रूहानी यानी निर्मल चैतन्य की है और सदा एक-रस यानी महा आनन्द स्वरूप रहती है।

१०—इस देश के नीचे से प्रकृति यानी माया प्रगट हुई और नीचे २ उसका विस्तार ज़्यादा से ज़्यादा होता गया। और वहाँ रचना मिलौनी की हुई यानी उस सत्त पद की किरणी अथवा सुरत ने माया के मसाले से अनेक रूप पैदा किये। और जो कि माया का मसाला (जो असल में ग़ुबार रूप है) हमेशा रंग और एक-रूप नहीं रह सक्ता,

इस सबब से उस माया के देश में अदल-बदल और भाव-अभाव की कार्रवाई हर दम जारी है। और इसी सबब से दुख-सुख और क्लेश वग़ैरा व्यापता है। सो जब तक कि सुरत इस हद्द के पार निर्मल चैतन्य यानी सत्य पद में उलट कर न जावेगी, तब तक दुख-सुख और जन्म-मरण से सच्चा छुटकारा नहीं होगा और न असली सत्त पद की प्राप्ति होगी।

११—इस वास्ते, कुल्ल सच्चे परमार्थियों को मुनासिब है कि असल सत्य पद का, जो अनंत, अपार और सदा एक-रस क़ायम है और प्रेम और आनन्द का भण्डार है, अपने घट में खोज लगा कर, और चलने की जुगत दरियाफ़्त करके, जिस क़दर बन सके, शौक़ के साथ सहज २ चलना शुरू करें और संसार और उसके भोगों में ज़रूरत के मुवाफ़िक़ बर्ताव जारी रक्खें। ज़्यादती में उनके परमार्थ यानी सत्य पद के मिलने के जतन में ख़लल पड़ेगा। और जो इस तौर पर कार्रवाई करेंगे तो वे राधास्वामी दयाल की दया से, रफ़्ते २ एक दिन, असत्य देश से न्यारे होकर, सत्य यानी निर्मल चैतन्य देश में पहुँच कर बासा पावेंगे और अमर आनन्द को प्राप्त होवेंगे। और जब से कि वे सच्चे मन से प्रेम अंग लेकर अभ्यास शुरू करेंगे तब से, थोड़े अर्से में आहिस्ता २ थोड़ी-बहुत सत्य की प्राप्ति होती जावेगी, यानी शब्द चैतन्य

से मेला होता जावेगा, और उसी क़दर असत्य से दूरी होती जावेगी, और उसका असर भी कम होता जावेगा। और सत्य की प्राप्ति का निशान यह है कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीति और प्रतीत बढ़ती जावे और संसार और उसके पदार्थों में रग़बत कम होती जावे।

बचन १३

राधास्वामी दयाल के चरणों में किसी न किसी तरह की प्रीति और भाव और सेवा और यादगारी का फ़ायदा।

१—दुनिया के जितने काम हैं, सब प्रीति और शौक़ के साथ किये जाते हैं। जिस काम में कि किसी की प्रीति और शौक़ नहीं होता है, वह काम दुरुस्ती से नहीं बनता है, और जिस तरफ़ जिसकी प्रीति होती है, उसी तरफ़ उसका झुकाव रहता है।

२—जहाँ जिसको गहरी प्रीति है, वहाँ आपस में मेल भी जल्द २ और बार २ होता है, और वहीं एक दूसरे के वास्ते तन-मन-धन भी ख़ुशी से लगाता है।

३—इसी तरह, परमार्थ में जिस किसी की प्रीति आई, वह कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और उनके प्रेमी भक्तों के संग की चाह उठावेगा। और उस को जब २ इत्तिफ़ाक़ से उनका

सतसंग मिलेगा, तो वह बहुत ख़ुश होकर उस में शामिल होगा और दर्शन और बचन का रस हासिल करेगा और उनकी परमार्थी किताबों को बहुत शौक़ के साथ पढ़ेगा और सुनेगा।

४—यह प्रीति, प्रेमियों के संग और उनकी किताबों के पढ़ने से पैदा होगी और बढ़ेगी। और जिस क़दर तबीयत शौक़ के साथ इस काम में लगेगी, उसी क़दर दुनिया और दुनियादारों की तरफ़ से हटेगी।

५—कुल्ल रचना में कुल्ल कार्रवाई प्रीति और शौक की है। सो जिस किसी को परमार्थ में थोड़ी-बहुत प्रतीत के साथ प्रीति आई, उसको उसी मुवाफ़िक़ वहाँ रस और आनन्द मिलेगा और उसी क़दर उससे वहाँ की कार्रवाई बनती जावेगी।

६—कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल ने जीवों के हाल को मुलाहिज़ा करके, निहायत दया के साथ, ऐसा हुकुम फ़रमाया कि जो उनके चरणों में थोड़ी भी प्रीति और प्रतीत लावेगा, तो भी उसका किसी क़दर फ़ायदा परमार्थी इस जन्म में हो जावेगा और आइन्दा की तरक़्क़ी के वास्ते सिलसिला जारी हो जावेगा यानी वह प्रीति दिन-दिन बढ़ती जावेगी।

७—और राधास्वामी दयाल ने तरीक़ा अन्तरी अभ्यास का ऐसा सहज जारी फ़रमाया कि उस को हर

कोई थोड़ा या बहुत, आसानी से कर सके, और अपनी प्रीति और प्रतीत के मुवाफ़िक़ उसका फ़ायदा (यानी रस और आनन्द) जीते-जी देख सके, और सतसंग करके उस प्रीति को, और उसके साथ अभ्यास भी बढ़ा सके।

८—राधास्वामी दयाल की इस क़दर दया और मेहर जीवों पर है कि जो वे थोड़ी-बहुत सचौटी के संग बाहर का सतसंग और अन्तर में अभ्यास थोड़े शौक़ के साथ शुरू कर देवें, तो वे दया से उनको अन्तर में परचे देकर उनकी प्रीति और प्रतीत बढ़ाते हैं और घट में थोड़ा-बहुत रस और आनन्द भी बख़्शते हैं।

९—अब, जिस किसी को दुनिया और दुनियादारों का हाल और यहाँ के सामान और पदार्थों की कैफ़ियत देख कर राधास्वामी दयाल के चरणों में (जो कि जीव के सच्चे हितकारी और दम २ के संगी और मददगार हैं) गहरी प्रीति आई, वही एक रोज़ गुरुमुख का दर्जा पावेगा और उनकी पूरी दया अपनी निस्बत, अन्तर और बाहर, परखता जावेगा। बाक़ी जीवों को जिस २ दर्जे की प्रीति उनके चरणों में होवेगी, उनको उसी क़दर फ़ायदा हाल में मालूम होवेगा, और आइन्दा वे भी अपने शौक़ और प्रीति के मुवाफ़िक़ नम्बर-वार गुरुमुख बनाये जावेंगे।

१०—इस वास्ते कुल्ल जीवों को मुनासिब और लाज़िम है कि जहाँ और सब काम दुनिया के करते हैं, वहाँ, थोड़ी-बहुत प्रीति और प्रतीत कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में और उनके सतसंग और प्रेमी भक्तों में लाकर थोड़ी-बहुत कार्रवाई परमार्थ की, यानी बाहर का सतसंग और पाठ उनकी बानी और बचन का और अन्तर अभ्यास सुमिरन और ध्यान और भजन का शुरू कर देवें, तो रफ़्ते २ उनकी प्रीति और प्रतीत, दुनिया का तमाशा देख कर, चरणों में बढ़ती जावेगी और जीते-जी उसका फ़ायदा उनको नज़र आवेगा और आइन्दा के वास्ते तरक़्क़ी का सिलसिला, वास्ते हासिल होने सच्ची मुक्ति यानी पूरे उद्धार के, जारी हो जावेगा कि जिस से एक दिन दुख-सुख और जन्म-मरण के चक्कर से सच्चा छुटकारा हो जावेगा।

११—जो कोई किसी क़िस्म का नाता यानी प्रीति थोड़ी या बहुत राधास्वामी दयाल के चरणों में जोड़ेगा या किसी तरह से उनके किसी सच्चे प्रेमी भक्त से प्रीति और मेल पैदा करेगा तो राधास्वामी दयाल अपनी मेहर और दया से उसका भी किसी क़दर कारज इसी जन्म में बनावेंगे, यानी उसके जीव का थोड़ा-बहुत कल्याण हो जावेगा और आयन्दा को भी सिलसिला लग जावेगा।

१२—और जो कोई कि राधास्वामी दयाल की जुगत की कमाई (सुरत-शब्द अभ्यास) संत सतगुरु या साध गुरू या उनके सच्चे प्रेमी सतसंगी से उपदेश लेकर, सच्चे मन से, थोड़े दिन भी करेगा तो भी वह चौरासी में नहीं जावेगा और आहिस्ता २ सिलसिला उसके उद्धार का जारी हो जावेगा।

१३—खुलासा यह है कि जैसे बने तैसे, किसी न किसी जुगत से, यादगारी राधास्वामी दयाल के चरणों की रोज़मर्रा किसी न किसी वक़्त होनी चाहिये। फिर राधास्वामी दयाल अपनी मेहर से उस जीव को आहिस्ता २ खींच कर चरणों में लगावेंगे और रफ़्ते २ उसका उद्धार करेंगे।

१४—जिस किसी ने कि एक बार भी दर्शन संत सत-गुरु के, प्यार और भाव से किये हैं और उनके बचन चित्त देकर सुने और समझे हैं, तो वह अबेर-सवेर सतसंग में मिलाया जावेगा, और जो बिल-फ़र्ज इस जन्म में शामिल नहीं हुआ, तो अंत समय पर उसके जीव की थोड़ी-बहुत सम्हाल की जावेगी और आइन्दा के जन्म में सतसंग में खींच कर मिलाया जावेगा। और जिसने कि कई बार शौक़ के साथ सतसंग किया पर उपदेश नहीं लिया तो उसके भी बहुत से कर्म कट जावेंगे और अंत समय पर उसके जीव की किसी क़दर सहायता की

जावेगी और आइन्दा को सिलसिला उद्धार का जारी हो जावेगा।

१५— जिस किसी को राधास्वामी मत और सतसंग और सतगुरु की महिमा सुन कर राधास्वामी दयाल के चरणों में भाव और प्यार आया और गुप्त सेवा तन-मन-धन की करी, पर कोई सबब से सतसंग में शामिल न हो सका और न दर्शन सतगुरु के किये और न उपदेश पाया, तो भी राधास्वामी दयाल उस जीव की, अपनी मेहर और दया से, सहायता करेंगे और इसी जन्म में, चाहे आइन्दा के जन्म में, उसको सतसंग में मिला कर और सुरत-शब्द की कमाई उससे करा कर, रफ़्ते २ उसका सच्चा उद्धार फ़रमावेंगे।

१६—जो कोई कि राधास्वामी दयाल और उनके नाम और धाम की महिमा सुन कर राधास्वामी नाम का सुमिरन, प्यार और भाव के साथ, करेगा और बानी और बचन को भी शौक के साथ पढ़ेगा, तो राधास्वामी दयाल इसी जन्म में खींच कर उसको सतसंग में लगावेंगे और उस पर दया करेंगे। और जो इस जन्म में मौक़ा न हुआ तो आइन्दा के जन्म में वह ज़रूर सतसंग में शामिल किया जावेगा और कार्रवाई उसके उद्धार की जारी हो जावेगी।

१७—ऐसा हाल दया और मेहर का सुन कर जीवों को चाहिये कि ज़रूर राधास्वामी दयाल के चरणों में, हाज़िर या ग़ायब, ज़रूर थोड़ी-बहुत प्रीति या उनकी याद-गारी करते रहें कि जिससे सहज में उनके जीव का कल्याण हो जावेगा और जो इतनी बात से चूकेंगे यानी सुन कर भी थोड़ा-बहुत भाव और प्यार राधास्वामी दयाल के चरणों में या उनके सतसंग में या उनके प्रेमी भक्त में या उनके नाम और बानी-बचन में नहीं लावेंगे, तो उनको जानना चाहिये कि वे अभागी हैं और उनके उद्धार में अभी बहुत देर है।

१८—राधास्वामी दयाल की यहाँ तक जीवों पर दया और मेहर है कि जो कोई अनजानता और मूर्खता से उनकी या उनके सतसंग की या उनके प्रेमी भक्त की निंदा करता रहेगा तो उसको भी, पहिले उसके पाप कर्म काट कर, अबेर-सबेर खींच कर सतसंग में मिलावेंगे, जहाँ से कि उसके उद्धार का सिलसिला जारी हो जावेगा।

१९—किस क़दर भारी दया की बात है कि जो किसी से महिमा जान कर या अनजानता से कोई सेवा किसी क़िस्म की तन, मन और धन या इन्द्रियों की राधा-स्वामी दयाल के निमित्त बन आवेगी तो उस को भी थोड़ा-बहुत परमार्थी फ़ायदा बख़्शेंगे यानी उसके जीव की किसी क़दर सहायता करेंगे और चरणों में प्रेम-प्रीति का दान

देकर आइन्दा को उसके उद्धार का रास्ता आहिस्ता २ जारी फ़रमावेंगे।

२०—जो कोई राधास्वामी नाम और उनकी बानी को प्यार के साथ गावेगा और पढ़ेगा तो उसको भी थोड़ा-बहुत परमार्थी फ़ायदा पहुँचेगा, क्योंकि यह नाम सच्चे कुल्ल-मालिक का है, और इसका असर बड़ा भारी है, जो प्यार और भाव के साथ गाया जावे। और जो इसका भेद समझ कर सुमिरन करेगा, तो उसका फ़ायदा और भी ज़्यादा होगा यानी वह एक दिन सतसंग में शामिल होकर या किसी प्रेमी भक्त से मिल कर अभ्यास में लग जावेगा। और राधास्वामी दयाल की बानी को भाव से पढ़ने का भी यही फ़ायदा हासिल होगा।

२१—अब ख़्याल करो कि जो लोग प्रीति और प्रतीत के साथ नित्त सतसंग और अभ्यास करते हैं और तन से, मन से और धन से, जिस क़दर मुमकिन है, नित्त सेवा करते हैं और राधास्वामी दयाल की दया और मेहर को अन्तर और बाहर नित्त अपने ऊपर देखते हैं और परखते हैं, उनको किसी क़दर भारी दर्जा और मुक़ाम, हर एक की लगन के मुवाफ़िक, बख़्शिश फ़रमावेंगे। और सतसंग से मतलब यह है कि जहाँ कितने ही प्रेमी भक्त, राधास्वामी दयाल के, मिल कर बानी का पाठ और अर्थ और चर्चा

करते हैं। और जिसको ऐसा सतसंग प्राप्त नहीं है, अगर वह आप अपने घर में प्रेम के साथ समझ २ कर बानी का पाठ करता है या अपने कुटम्बियों के साथ चर्चा करके राधास्वामी मत को समझाता है, तो यह भी सतसंग में दाख़िल है।

बचन १४

राधास्वामी शरण, सुरत-शब्द धारण, सर्व दुक्ख निवारन। महिमा और बड़ाई राधास्वामी मत की जो कुल्ल-मालिक का सच्चा मत है और बग़ैर जिसके धारण करने के, किसी जीव का सच्चा उद्धार मुमकिन नहीं है।

१—दुनिया और दुनियादारों के हाल पर नज़र करने और ग़ौर करके विचारने से मालूम होता है कि सब जीवों के मन में एक क़िस्म की चाह या तड़प, वास्ते बड़े से बड़े सुख और बड़े से बड़े दर्जे और बुज़ुर्गी और ज़्यादा से ज़्यादा धन और माल और भारी से भारी ताक़त के हासिल होने के वास्ते लगी रहती है, और चाहे जिस क़दर सामान हासिल हो जावे, फिर भी थोड़ी-बहुत चाह वास्ते उसकी ज़्यादती और तरक़्क़ी के बनी रहती है।

२—और जब किसी क़िस्म की तकलीफ़ और दुख या कोई सख़्त मुसीबत या रंज या बीमारी आयद होती

है, तो उस वक़्त जीव तहे-दिल से यानी अन्तर के अन्तर से चाहते हैं कि कोई ऐसी ताक़त उनको मिले या कोई ऐसी मदद् उनकी करे या कोई ऐसी द्वा देवे कि जिससे वह दुख या मुसीबत या तकलीफ़ जल्द् दूर हो जावे या कम हो जावे। और जब कोई ऐसा मदद्गार नहीं मिलता तो लाचार होकर मन ही मन में चुप हो जाते हैं और मुसीबत को, जसे बने, तैसे बरदाश्त करते हैं, लेकिन फिर भी दिल में एक क़िस्म की तड़प और चाह, वास्ते मिलने मदद् के, बनी रहती है।

३—पहिली क़िस्म को चाह, जो सुख वग़ैरा की प्राप्ति के लिये उठती है, उसके पूरा करने के लिये अनेक तरह के जतन और अनेक तरह के काम और अनेक तरह की मेहनत जीव उम्र भर करते हैं। यानी सुन कर, पढ़ कर और देख कर, जब और जहाँ जिस किसी को किसी काम या किसी मुआमले या किसी विद्या और हुनर और कारीगरी और सौदागरी और सफ़र वग़ैरा २ में विशेष फ़ायदा हुआ है या मान-बड़ाई और दौलत और हुकूमत और दर्जा मिला है, तो और जीव भी उसी मुवाफ़िक़ कार्रवाई करके, वैसा ही फ़ायदा और दौलत और दर्जा हासिल करना चाहते हैं। और जब एक धंधे यानी काम में पूरा फ़ायदा नहीं हुआ तो दूसरा धंधा शुरू करते हैं, यानी

बराबर अपनी कार्रवाई, जो मतलब के मुवाफ़िक़ न होवे या उससे पूरा फ़ायदा न मिले, बदलते रहते हैं और इसी तरह के फ़िक्र में कि यह काम करना चाहिये और वह छोड़ना चाहिये और इसको बढ़ाना चाहिये और उसको घटाना चाहिये, रात-दिन लगे रहते हैं। और चाहे सब काम उनके मतलब के मुवाफ़िक़ बनते जावें, तो भी चाह ज़्यादा से ज़्यादा तरक़्क़ी की, उनके मन में बनी रहती है और उनको निचला (यानी आराम से) नहीं बैठने देती है। और इसी किस्म के ख़्यालों का हुजूम उसके मन में हर रोज़ बना रहता है और उनको किसी तरह चैन नहीं लेने देता है।

४—यह हाल कुल्ल जीवों का है, चाहे वे ग़रीब हैं या अमीर या राजा-महाराजा या आलिम और फ़ाजिल या भारी हुनर वाले या मूर्ख और नादान।

५—और संग और सोहबत और दुनिया का तमाशा ऐसे ख़्यालात और चाहों को बढ़ाता रहता है और नये २ ख़्याल और चाहें पैदा करता है।

६—ख़ुलासा यह कि सब जीव अनेक क़िस्म के ख़्यालों और कामों और बखेड़ों में हमेशा लिपटे रहते हैं और ऐसे कामों की कसरत में उनको कभी इस बात के सोच और विचार करने का वक़्त भी नहीं मिलता कि क्यों बा-वजूद हासिल होने बहुत से सामान के, उनके मनमें

तृष्णा और नई-नई चाहें दुनिया की तरक़्क़ी की बनी रहती हैं और पैदा होती जाती हैं। और बे-शुमार जीव इसी हालत में उम्र भर पचते और खपते रहते हैं और आख़िर को मौत के वक़्त यहाँ से ख़ाली हाथ जाते हैं। यानी जिस २ सामान के हासिल करने में उन्होंने अपनी सारी उम्र ख़र्च करी, उनमें से कोई भी उनका अख़ीर वक़्त पर संगी और मददगार नहीं होता, और न मौत या तकलीफ़ के वक़्त धन और माल और हुकूमत और लियाक़त और इल्म और अक़्ल और कुटुम्ब और परिवार और फ़ौज और लश्कर उनका संगी और मददगार होता है। ऐसे जीव रंज और अफ़सोस के साथ जान देते हैं और सब सामान यहाँ का यहीं छोड़ जाते हैं।

७—अब दूसरी क़िस्म के ख़्यालों का ज़िक्र किया जाता है यानी दुख और मुसीबत के दूर करने के वास्ते अनेक तदबीरें सोचते हैं और काम में लाते हैं जैसे दवा-दारू करना, अपने २ अक़ीदे और निश्चय के मुवाफ़िक़ मालिक या देवताओं या पैग़म्बरों और औलियाओं और महात्माओं और जादूगरों और भूत, पलीत और चुड़ैल वग़ैरा से मदद माँगना और मुक़ामात मुतबर्रक व तीर्थ व दरियाओं और कूओं पर जाना और वहाँ के रस्म और दस्तूर के मुवाफ़िक़ कार्रवाई करना और तावीज़ और गंडे

और क़िस्म २ के पत्थर या लकड़ी वग़ैरा को गले में डालना, या बाज़ू पर बाँधना और निशान, या कोई चीज़ महात्माओं और औलियाओं की अपने संग, वास्ते हिफ़ाज़त के, रखना, या कोई नाम या मंत्र या शब्द का पढ़ना और जाप करना, या कोई ख़ास पूजा अपने मकान पर या किसी और ख़ास मंदिर या मसजिद या मज़ार या गिरजा या किसी ख़ास मुक़ाम में जाकर करना, या किसी फ़क़ीर या साधू या ख़ुदा-परस्त लोगों से इलतिजा करना और मदद माँगना, या दान और पुन्य और ख़ैरात करना और मोहताजों को खिलाना-पिलाना, या किसी देवता और महात्मा के वास्ते नज़र-नियाज़ बोलना और ज़ियारत का वादा करना वग़ैरा २।

८—और जब बा-वजूद इन तदबीरों के, मुसीबत या तकलीफ़ दूर न होवे, तो लाचार हो कर ख़ामोश हो रहते हैं और उस तकलीफ़ और मुसीबत को जबरन और क़हरन सहते हैं। फिर भी अख़ीर वक़्त तक दिल में ऐसी चाह और तड़प लगी रहती है कि कोई उनकी तकलीफ़ को, जैसे बने वैसे दूर कर देवे या घटा देवे, और जब कोई इलाज पेश नहीं जाता, तो लाचार क़िस्मत या नसीब या अपने पिछले-अगले ऐमालों का नतीजा यानी फल समझ कर या मालिक की मरज़ी ऐसी ही जान कर ज्यों-त्यों, रो-पीट कर सब्र करते हैं।

६—ग़रज़ कि कुल्ल जीव इस दुनिया में सुख और बड़ाई की प्राप्ति की चाह और फ़िक्र में, और भी तकलीफ़ और दुक्खों के दूर करने या घटाने के ख़्याल और सोच में, हमेशा सर-गरदाँ रहते हैं। लेकिन जो जतन और तद्बीरें कि वे काम में लाते हैं, चाहे उनसे थोड़ा या पूरा फ़ायदा हासिल होवे, फिर भी सुख की चाह और तकलीफ़ और दुक्खों का ख़ौफ़ और चिन्ता उनके मन से दूर नहीं होती है।

१०—इस दुनिया में ऐसी हालत का कोई इलाज न देख कर, बाज़े लोग परमार्थ यानी मज़हब की तरफ़ इस उम्मीद पर रुजू लाये कि वहाँ से कोई सहारा ऐसा मिले कि जिससे दुनिया की तरक़्क़ी और दुनियाँ की तपन से बचें, और ऐसे स्थान का पता लगे कि जहाँ पहुँच कर परम सुख को प्राप्त होवें, और फिर कोई चाह बाक़ी न रहे और ऐसी जुगत मालूम होवे कि जिससे तकलीफ़ और दुक्खों का असर कम व्यापे और रफ़्ता २ उन से पीछा छूट जावे।

११—जब बाज़े लोगों ने इस तरह मज़हबी तहक़ीक़ात और तलाश शुरू की, तब उसमें उन को बहुत सी दिक़्क़तें पेश आईं—यानी पहले तो कितने ही मज़हब नज़र आये और फिर उनमें आपस में ना-इत्तिफ़ाक़ी दिखलाई

पड़ी कि एक दूसरे को ग़लत या ओछा बतलाता है और मालिक के वजूद के निस्बत भी बहुत सा इख़्तिलाफ़ पाया गया कि कोई किसी को और कोई किसी को मालिक क़रार देता है और कोई मालिक के वजूद से बिल्कुल मुनकिर है।

१२—ऐसी हालत मज़हबों की देख कर बहुत से शक और सन्देह सच्चे खोजी के दिल में पैदा हुए। और जब उसने तहक़ीक़ात शुरू की और वास्ते दूर करने अपने भरमों के, थोड़े सवालात किये तो उनका जवाब पूरा २ किसी मत में न मिला। इस सबब से जैसी चाहिये, वैसी तसल्ली नहीं हुई। पर लोगों के तान और तिश्ने का ख़ौफ़ करके जिस मज़हज में कि जो पैदा हुए या जिसको किसी सबब से उन्होंने इख़्तियार किया, उसी में चुप्प होकर ज़ाहिरा तौर पर लगे रहे। पर दुनिया के दुख-सुख की हालत और कैफ़ियत उनकी नहीं बदली और न पूरा २ सहारा उनको तकलीफ़ और दुक्ख की हालत में मिला।

१३—यह बात ज़ाहिर है कि कसरत से लोग बे-इल्म और नादान हैं और दुनिया के सुखों के भोगने और उनके वास्ते नई २ चाह उठाने में ऐसे मशग़ूल हैं कि उनको कभी सुध भी इस बात की नहीं आती कि कोई इस दुनिया का सच्चा और कुल्ल-मालिक है, और उससे उनका क्या रिश्ता है, और उनको एक दिन देह और दुनिया के सामान और

कुटुम्ब-परिवार को ज़रूर छोड़ना पड़ेगा, यानी एक दिन मौत ज़रूर आवेगी। फिर बाद मरने के क्या हाल होगा, इसकी उनको ख़बर भी नहीं और न दरियाफ़्त करने की ख़्वाहिश है।

१४—और जो कि इसी क़िस्म के जीव हमेशा यानी ज़िन्दगी भर, इन्द्रियों के भोगों में गिरफ़्तार रहते हैं और नई २ चाहें उठा कर हमेशा मेहनत करते रहते हैं और इसी क़िस्म के लोगों का उनको संग रहता है, तो ऐसी चाह और आदत और स्वभाव और अपने कर्मों के मुवाफ़िक बारम्बार ऊँच-नीच देशों और जोनों में पैदा होकर, हमेशा देहियों के संग दुख-सुख भोगते रहेंगे और इन ऊँच-नीच देशों में बैकुन्ठ और बहिश्त और स्वर्ग और मृत्यु लोक (यानी यह दुनिया) और नर्क और जहन्नुम वग़ैरा शामिल हैं।

१५—सच्चे खोजी लोग हमेशा कम पैदा होते हैं। और उनको जब तक कि पूरी २ कैफ़ियत किसी मज़हब की न मालूम होवे कि जिससे तसल्ली और इतमीनान हो जावे, तब तक उनका खोज हमेशा जारी रहता है। यानी वे हमेशा ख़्वाहिशमन्द रहते हैं कि कोई उनको सच्चे मालिक का सच्चा पता और भेद बतावे और जब कोई भेद देने वाला मिल जावे, तो उससे निहायत ख़ुश होकर

मिलते हैं और उसके बचनों को ग़ौर और तवज्जह के साथ सुनते हैं और मग्न हो जाते हैं।

१६—ऐसे खोजियों की दो क़िस्में हैं। एक तो वे कि जो बहुत से हालात मज़हबी (जो कि मालिक के भेद में दाखिल हैं) जानना और समझना चाहते हैं और जब उनके संदेह और सवालों के, इत्तिफ़ाक से किसी भेदी से मिल कर, पूरे जवाब मिल जावें, तब उनके मन में एक क़िस्म की शान्ति आ जाती है, लेकिन यह इरादा नहीं होता कि अब उस सच्चे मालिक का उसके निज धाम में पहुँच कर दर्शन करें, क्योंकि अभी उनका मन दुनिया के भोग और बिलास और मान-बड़ाई वग़ैरा का ख़्वाहिशमंद है और उस ख़्वाहिश को छोड़ना या कम करना नहीं चाहता है।

१७—दूसरी क़िस्म के खोजी को दर्दी कहना चाहिए। उसके दिल में सिवाय दरियाफ़्त करने ख़ास २ मज़हबी बातों और भेद मालिक के, एक क़िस्म की तड़प वास्ते देखने हाल क़ुदरत के, और निज धाम में पहुँच कर हासिल करने आनंद और बिलास-दर्शन कुल्ल-मालिक के, लगी रहती है, और वह तड़प किसी सूरत में, जब तक कि उसको जुगत चल कर मिलने मालिक की सिखाई न जावे और वह उसके मुवाफ़िक़ चलना शुरू करके अपने घट में कुछ रस और आनंद न पावे, कम या दूर नहीं होती।

१८—इस दूसरी क़िस्म के खोजी दर्दी को जिस वक़्त कि कोई भेदी अभ्यासी मिलेगा, वह उसके साथ फ़ौरन मुहब्बत करेगा और जुगत चलने की दरियाफ़्त करके अभ्यास में लग जावेगा और थोड़ा-बहुत रस और आनन्द अंतर में पाकर, दिन २ उसकी प्रीति और प्रतीत चरणों में कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के, और भी उनके प्रेमी अभ्यासियों में, बढ़ती जावेगी। ऐसा खोजी किसी पिछले महात्माओं के क़ौल या किसी मज़हबी किताब के हवाले का मुहताज नहीं रहता। वह अपनी प्रीति और प्रतीत सच्चे मालिक के चरणों में, और भी सुरत-शब्द के अभ्यासों में, अपनी इल्मी और अमली तहक़ीक़ात से पैदा करता है और फिर वह प्रीति और प्रतीत ऐसी मजबूत होगी कि कोई उसको किसी तरह भर्मा नहीं सकेगा और न उसको अपने काम यानी अभ्यास से हटा सकेगा।

१९—थोड़ा सा हाल उस समझ-बूझ का कि जिसके वसीले से खोजी दर्दी को वचन सुन कर और उनका विचार करके गहरी प्रीति और प्रतीत हासिल होती है, आगे लिखा जाता है।

२०—और उस समझ-बूझ का खुलासा यह है।

(१) दुनिया और उसका सामान और सर्व इन्द्रियों

के भोग नाशमान हैं यानी न तो वे आप ठहराऊ हैं और न उनका असर देर तक रहता है।

(२) जीव भी इस रचना में मुक़र्रर अर्से से ज़्यादा देह में नहीं ठहर सकता। फिर चाहे जितनी मेहनत और मशक़्क़त करके अनेक तरह के भोग और सामान पैदा करे, अख़ीर वक़्त यानी मरने के समय उन सब को अफ़सोस के साथ ज़रूर छोड़ना पड़ेगा।

(३) कुटुम्ब-परिवार और धन-माल और बिरादरी और दोस्त और आशना और नौकर-चाकर और जिन २ से इस जीव का व्यवहार है, सब अपने २ वक़्त और मतलब के संगी हैं। इन में से कोई सच्चा और पूरा हितकारी और मददगार नहीं है कि जो आम तौर पर सुख, और ख़ास कर दुख और तकलीफ़ के वक़्त सच्ची मदद करे।

(४) बल्कि अपनी देह और इन्द्रियाँ और अंग २ भी अख़ीर वक़्त पर दग़ा देते हैं यानी महज़ बेकार हो जाते हैं और बीमारी की हालत में भी इनका थोड़ा-बहुत ऐसा ही हाल हो जाता है।

(५) जीव यानी रूह जिसको संत "सुरत" कहते हैं, अमर है। और जहाँ तक कि मन और माया की हद्द है, वहाँ तक मन, सुरत का ख़ोल यानी ग़िलाफ़ होकर, उसके संग मरने के बाद जाता है।

(६) जो कोई इसमें शक लावे तो समझना चाहिए कि जिस क़दर जड़ पदार्थ हैं, इनका असली नाश नहीं है, सिर्फ़ रूप बिगड़ जाता है। फिर सुरत जो कि जड़ को चैतन्य करने वाली है, उसका नाश यानी अभाव किस तरह मुमकिन है? अलबत्ता बाद मरने के देह यानी ग़िलाफ़ बदल जाता है। इस बात के सबूत बहुत हैं, यानी कितने ही मुआमले ऐसे हैं कि कई शख़्सों ने लड़कपन में हाल और मुक़ाम अपने पिछले जन्म का बयान किया, और उसकी ब-ख़ूबी तसदीक़ हो गई। और कितने ही मौक़ों पर मुर्दों की रूहों ने अजनबी लोगों से कुछ अपना पिछले जन्म का हाल और कोई कैफ़ियत ख़ास ज़ाहिर की और फिर उसकी तसदीक हो गई। और ऐसे मुआमले भी बहुत कसरत से वाक़ै हुए हैं और होते रहते हैं कि जिनमें मुर्दों की रूहों ने अपने अज़ीज़ों को ख़ास मुआमलों में, ख़्वाब की हालत में, गुप्त भेद या चीज़ें बतलाईं, जिसके सबब से उनका सख़्त तकलीफ़ या नुक़सान से बचाव हो गया या कोई जमा उनको मिल गई।

(७) जाग्रत और स्वप्न की हालतों का मुक़ाबला करने से साफ़ ज़ाहिर होता है कि सुरत का बंधन इस देह और दुनिया के साथ जाग्रत अवस्था में (जब कि उसकी धार आँख के मक़ाम पर ख़ास कर, और कुल्ल

इन्द्रियों के स्थान पर उतर कर ठहरती है) होता है और उसी वक़्त स्थूल देह और दुनिया के दुख-सुख उसको व्यापते हैं। और जब कि सुरत की धार नींद के बस, आँख के मुक़ाम से, अंदर में हट जाती है यानी पुतली किसी क़दर खिंच जाती है या सुवप्न देश में पहुँच कर सूक्षम शरीर और इन्द्रियों के साथ कार्रवाई करती है, तब स्थूल देह और दुनिया का दुख-सुख कुछ नहीं व्यापता, बल्कि उसकी कुछ ख़बर भी नहीं रहती है। फिर जो कोई चाहे कि दुनिया और देही के दुख-सुख से किसी क़दर नजात पावे, तो उसको चाहिये कि अपनी पुतलियों को उलटावे यानी रूह की धार को यहाँ से खींच कर अंतर में ऊपर की तरफ़ को चढ़ावे ।

(८) जिस अभ्यास से ऐसी कार्रवाई जब यह जीव चाहे आसानी से बन आवे, तो उसी साधन से दर्जे ब-दर्जे चढ़ाई करके और स्थूल सूक्षम और कारण वग़ैरा ग़िलाफ़ों से न्यारा होकर, एक दिन अपने भंडार में (जो महा आनंद और सुख का स्थान है) पहुँच सक्ता है ।

(९) और स्वप्न अवस्था की कैफ़ियत को जाँच करके मालूम होता है कि इस घट में सर्व रस और सुख का भंडार ज़रूर है, क्योंकि जब आदमी सुपना देखता है, तब सर्व इन्द्रियों के भोगों का रस अपने अंतर में लेता है,और

उस वक़्त स्थूल देह और इन्द्रियाँ बेकार होती हैं और कोई पदार्थ और भोग बाहर मौजूद नहीं होते। फिर भोगों के पैदा करने और उनका रस लेने की शक्ति और वह रस और आनन्द घट में ही मौजूद हैं। जो ज़्यादा अंतर में सुरत चढ़े और पर्दों यानी ग़िलाफ़ों के पार जावे, तो ज़रूर उसको शक्ति और आनंद और आराम बढ़ते जावेंगे और देहियों यानी ग़िलाफ़ों की तरफ़ से दूरी और बे-ख़बरी होती जावेगी यानी उनके दुख-सुख कम या बिल्कुल नहीं व्यापेंगे।

(१०) दुनिया में देखा जाता है कि हर एक चीज़ में दर्जे हैं और जानदारों में भी इन्सान से लगा कर कीड़े-मकोड़े और भुनगे और बनस्पति तक बहुत दर्जे हैं। और जो कि आसमानी रचना मिस्ल सूरज और चाँद और तारागन, इस लोक में ज़्यादा लतीफ़ और बहुत बड़ी और ज़्यादा ठहराऊ मालूम पड़ती है, तो ज़रूर हुआ कि उनमें रचना, जानदारों की, ब-निसबत इस लोक के, ज़्यादा रोशन और ताक़तवर और सुखदाई और ठहराऊ इनसान के दर्जे से ऊपर सिलसिले वार होगी।

(११) लेकिन स्थूल देह के साथ सुरत किसी ऊँचे लोक या मक़ाम में नहीं जा सकी। पहाड़ों और ग़ुब्बारों पर चढ़ने वालों ने तहक़ीक़ किया है कि साढ़े छः मील

से ज़्यादा कोई मनुष्य इस आकाश में नहीं चढ़ सक्ता। वहाँ पहुँचने पर जान जाती रहती है और जो कि सुरत (रूह) का असली स्वरूप चैतन्य की धार है और वह निहायत सूक्ष्म और लतीफ़ है और चाल उसकी रोशनी और बिजली की धार से (जो कि एक सेकिंड में क़रीब एक लाख कोस के चलती है) ज़्यादा से ज़्यादा है, तो जो वह सुरत, आहिस्ता २ अभ्यास करके, अपनी देह से न्यारी हो जावे यानी अपने घट में आँख के पार आकाश में ऊँचे को चढ़ने लगे, तो उसको ऐसी शक्ति हासिल हो जावेगी कि चाहे जिस ऊँचे लोक में पहुँच कर सैर करे, और वहाँ का सुख और आनन्द देखे, और जब चाहे जब देह में लौट आवे। और इसी तरह अभ्यास बढ़ा कर एक दिन ऊँचे से ऊँचे देश में, जो कुल्ल-मालिक का स्थान और परम आनंद का भंडार है, अपनी चैतन्य धार पर सवार होकर पहुँच सक्ती है, उसी तरह जैसे सूरज की किरन अपनी धार पर सवार होकर सूरज में उलट कर जा सकती है। मैस्मेरिज़्म और हिप्नोटिज़्म के आमिल लोग अपने मामूलों से अक्सर दूर मुक़ामों का हाल और परदेशियों की ख़बर और बीमारी वग़ैरा की अंदरूनी हालत और उसका इलाज दरियाफ़्त करके बता सक्ते हैं और कितने ही ऐसे वाक़े हुए कि जिनमें बीमारों की या कोई सदमा-रसीदा शख़्स की

रूह अपने जिस्म से किस क़दर न्यारी होकर ऊँचे देश में चढ़ी और उस वक़्त उसके कुटुम्बी या संगियों ने उसको मुर्दा समझा लेकिन वह ऊँचे चढ़ कर सब कार्रवाई देखता रहा,और हरचंद उसकी रूह ने चाहा कि ज़्यादा ऊँचे चढ़ कर गहरा आनंद पावे,लेकिन उसकी रूह फिर देह में उतर आई और आँखें खोल कर उसने जो हालत कि गुज़री और जो कैफ़ियत कि देखी, अपने लोगों से ज़ाहिर की।

(१२) इस तरह अभ्यासी सुरत का ऊपर के लोकों की सैर करना और फिर अपने निज भंडार यानी सच्चे मालिक के चरणों में अपने घट में चढ़ कर पहुँचना मुमकिन है। और रास्ता चलने का, आँख के मुक़ाम से जहाँ कि सुरत की बैठक जाग्रत अवस्था में है, चलेगा।

(१३)—मनुष्य की हालतों से, और भी मुवाफ़िक़ बचन संतों और महात्माओं के, ज़ाहिर है कि मनुष्य का स्वरूप कुल्ल रचना का नमूना है। यानी जो कुछ कि रचना बाहर है वह सब छोटे नमूने के तौर पर मनुष्य के अंतर में मौजूद है और दोनों का आपस में इत्तिफ़ाक़ और मेल है और रास्ता ऊँचे से ऊँचे देश का भी घट में, चैतन्य धार के वसीले से, मौजूद और जारी है, जैसे कि कुल्ल आसमानी रचना यानी तारागन जो नज़र आते हैं, इनका सूत हमारी आखों से ब-वसीले उनकी किरनियों के, जो इस लोक में आती हैं और

इस लोक से उन तारागणों में जाती है, लगा हुआ है। और जिस किसी की सुरत जिस्मानी क़ैद यानी देही के बन्धन से किसी तरह आज़ाद और न्यारी हो जावे, तो वह अपने सूक्ष्म स्वरूप यानी चैतन्य धार रूप से, जहाँ चाहे, छिन भर में जा सकता है और लौट कर देह में आ सकता है, क्योंकि सुरत की धार की चाल बहुत तेज़ से तेज़ है। रोशनी और बिजली की चाल जो कि निहायत तेज़ है, उसकी चाल के साथ मुक़ाबला नहीं कर सकती।

(१४) सुरत की चैतन्य धार निहायत सूक्ष्म और लतीफ़ है और वह देखने में नहीं आती, पर उसकी कार्रवाई से, यानी जब वह जाग्रत के वक़्त आँख के मुक़ाम पर उतर कर बैठती है और देह और इन्द्रियों को चैतन्य करती है, उसका देह में मौजूद होना ज़ाहिर होता है। और ख़ास निशान उस चैतन्य धार का, चैतन्यता और शब्द यानी आवाज़ है, क्योंकि जब बच्चा पैदा होता है तो वह पहिले आवाज़ करता है और जो आवाज़ न करे तो मुर्दा (यानी हिस्स से ख़ाली) समझा जाता है। और आदमी या जानवर जब तक बोलता है और हरकत करता है, ज़िंदा यानी चैतन्य है और जब हरकत और बोल बन्द हो गया, तब मुर्दा समझा जाता है। और जो ग़ौर करके देखा जावे, तो इस दुनिया की कुल्ल कार्रवाई शब्द और

सुरत से हो रही है यानी एक बोलता है और दूसरा सुन कर तामील करता है, वल्कि जड़ पदार्थों की भी कार्रवाई (जो कि चैतन्य पुरुष की मदद् से जारी होती है) बग़ैर हरकत और आवाज़ के नहीं होती है और वह हरकतें और आवाज़ गुप्त चैतन्य का (जो सब जड़ पदार्थों में मौजूद है, पर वग़ैर मदद् विशेष चैतन्य के कुछ कार्रवाई नहीं कर सकता) ज़हूरा है। ख़ुलासा यह कि जहाँ धार रवाँ है, उसके साथ आवाज़ भी बराबर जारी है, यानी शब्द्, कुल्ल का चैतन्य करने वाला और हरकत देने वाला है और ख़ुद् चैतन्य रूप है, चाहे जिस द्र्जे का होवे। इससे साबित हुआ कि जो कोई चैतन्य धार पर सवार होकर चलना चाहे, वह शब्द् यानी उस धुन को, जो उस धार के साथ जारी है, पकड़ कर चले, तो जहाँ से वह धार आती है, वहां पहुँच जावेगा। देखो अंधे आद्मी को, जो कोई थोड़ी दूर से बुलावे, तो वह बुलाने वाले की आवाज़ को पकड़ के उसके पास पहुँच जाता है, और अँधेरी रात में जो कोई जंगल में रास्ता भूल जावे और कोई नज़दीक के गाँव से आद्मियों की आवाज़ आती होवे, तो वह उस आवाज़ को पकड़ के गाँव में पहुँच सकता है। इस से ज़ाहिर है कि आवाज़ की बराबर कोई रास्ता दिखाने वाला और अँधेरे में प्रकाश करने वाला नहीं है।

(१५) जितने मत कि दुनिया में जारी हैं, उन सब में शब्द की महिमा लिखी है और यह बयान किया है कि शब्द, कुल्ल रचना की आदि है यानी यह कि पहिले शब्द हुआ और फिर उससे रचना हुई और वह शब्द मालिक के साथ था और ख़ुद मालिक का रूप और ज़हूरा है और वही सच्चा कर्तार है। अब समझना चाहिये कि शब्द से मतलब चैतन्य धार से है जो कुल्ल मालिक के चरणों से प्रगट हुई और कुल्ल रचना की कर्तार है और कुल्ल हरकत और चैतन्यता और असर का कारण शब्द है और वही चैतन्य है। पर माया के देश में,ब-सबब मिलौनी माया के, उस चैतन्य शब्द की ताक़त और असर में दर्जे-ब-दर्जे फ़र्क़ हो गया, और उसी क़दर उसकी ताक़त और हरकत और असर में भी फ़र्क़ यानी दर्जे हो गये। पर कुल्ल कार्रवाई जहाँ जैसी है, शब्द के आसरे हो रही है।

(१६) संतों ने, जो कि धुर मुक़ाम यानी कुल्ल-मालिक के धाम से आये, शब्द का भेद साफ़ २ और शरह के साथ बयान किया, और हाल मंज़िलों का, जो कि कुल्ल-मालिक के स्थान से सुरत के पिंड में नशिस्त के मुक़ाम तक वाक़ै हैं, मय कैफ़ियत शब्द हर मुक़ाम के, तफ़सील के साथ, ज़ाहिर किया, कि जिसकी मदद से चलने वाला हर एक मुक़ाम के हाल और कैफ़ियत को समझ कर और

उस मुक़ाम की आवाज़ को पकड़ कर रास्ता तै कर सके, यानी अपनी सुरत को, अपने घट में शब्द को पकड़ के, ऊँचे देश यानी अपने निज घर की तरफ़ चढ़ाता जावे,और इस जुगत से आहिस्ता आहिस्ता एक दिन अपने कुल्ल-मालिक का दर्शन पाकर और माया और मन और काल- और कर्म के घेरे से निकल कर, परम और अमर आनंद को प्राप्त होवे और दुख-सुख और कष्ट और क्लेश और जन्म-मरण से अपना सच्चा छुटकारा कर लेवे।

(१७) जो कोई मन और इन्द्रियों के भोग-बिलास को सच्चा सुख,और देह और दुनिया को अपना रूप और घर समझ कर, इसी के वास्ते मेहनत और जतन करते रहेंगे, तो उस आशा और मंशा और स्वभाव के मुवाफ़िक़, उन को बारम्बार देह धरनी पड़ेगी, क्योंकि मृत्यु, देह की होती है, न कि सुरत की, यानी जब सुरत देह को छोड़ देती है या उससे जुदा हो जाती है, उसी का नाम मौत है।

(१८) लेकिन जो कोई दर्दी खोजी दुनिया और देह के हाल को देख कर,और यहाँ के सामान की नाशमानता ख़्याल करके, अजर धाम और अमर आनंद की प्राप्ति की चाह उठा कर जतन करना चाहते हैं, उनके वास्ते,ऊपर के बयान के मुवाफ़िक़, यह हिदायत की जाती है कि अपनी सुरत को आँख के मक़ाम से, चैतन्य धार यानी शब्द को

धुन को पकड़ के, अपने घट में ऊपर की तरफ़ भेद मंज़िल और रास्ते और चलने की जुगत का, संत सतगुरु से (जो धुर मक़ाम के पहुँचे हुये हैं) या साध-गुरू से (जो निस्फ़ रास्ता तै कर चुके हैं और आगे को चल रहे हैं) या उनके सच्चे प्रेमी सतसंगी से (जो कुछ रास्ता तै कर चुका है और चल रहा है)उपदेश लेकर चलना शुरू करे । लेकिन यह कार्रवाई जब दुरुस्त बनेगी, जब कि चलने वाले के मन में कुल्ल-मालिक के दर्शनों का सच्चा प्रेम पैदा होगा और अभ्यास करके वह प्रेम दिन २ बढ़ता जावेगा और उसी क़दर रास्ता भी आसानी के साथ तै होता जावेगा ।

(१६) प्रेम, यानी खैंच शक्ति या आपस में मिलने की शक्ति, कुल्ल रचना का जुज़-ए-आज़म यानी परम तत्व है यानी कुल्ल रचना इसी प्रेम से हुई और इसी प्रेम के आसरे ठहरी हुई है और इसी तरह कुल्ल कार्रवाई इस दुनिया में, प्रेम यानी शौक़ और मुहब्बत के वसीले से जारी है ।

(२०) जिसको जिस चीज़ या काम का शौक़ या इश्क़ होता है, वह वही काम करता है और जिसमें उसका प्यार है वह उसी से मिलता है और सब दे दिया और उनके रूप, इसी प्रेम के सबब से बने हुए और ठहरे हुए हैं,यहाँ तक कि कुल्ल मालिक,आप,प्रेम सिंध यानी प्रेम का अपार भंडार है और जो धारें कि उसके चरणों से निकलीं, वह भी प्रेम स्वरूप हैं

और जो उन धारों से मंडल और उनमें रचना पैदा हुई, वह भी प्रेम स्वरूप है। खुलासा यह कि कुल्ल जीव प्रेम रूप हैं और प्रेम से ही कुल्ल कार्रवाई कर रहे हैं और प्रेम ही के बल से अपने निज भंडार की तरफ़ उलट कर जा सकते हैं। इस वास्ते जो कोई कि इस मर-देश से न्यारा होकर अमर-देश में पहुँचना चाहे, वह प्रेम अंग लेकर चल सकता और अपने प्रेम भंडार से मिल सकता है।

(२१) जिस मज़हब और उसके अभ्यास में प्रेम की मदद नहीं है, या उसका ज़िक्र भी नहीं है, वे सब मज़हब और अभ्यास थोथे और ख़ाली हैं। और यह प्रेम कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में (जो घट घट में मौजूद हैं) आना चाहिये, और ज़ाहिर यानी बाहर में, संत सतगुरु या साधगुरु के चरणों में (जो कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के धाम का भेद देकर, जुगत उनसे मिलने की बताते हैं और मदद देकर सुरत को पहुँचाते हैं) आना चाहिये। तब रास्ता आसानी और दुरुस्ती से तै होगा। और जो प्रेम मन में नहीं आया, तो जो कुछ कि करनी यानी अभ्यास वग़ैरा करेगा, वह नेम यानी कर्म में दाख़िल होगा। लेकिन दर्दी खोजी के मन में फ़ौरन महिमा राधास्वामी दयाल और उनके धाम की सुन कर चरणों का प्रेम पैदा होगा। और इसी तरह जिस किसी को संत सतगुरु या साधगुरू मिलेंगे, वे

अपनी दया से बचन सुना कर उसके मन में प्रेम पैदा कर देंगे। और सतसंग और अभ्यास करके वह प्रेम दिन २ बढ़ता जावेगा और एक दिन धुर धाम में पहुँचा कर छोड़ेगा।

२२—यह कैफ़ियत जो ऊपर बयान हुई और जो दर्दी खोजी की समझ-बूझ का नतीजा है, सिर्फ़ दुनिया और अपनी देह की हालत के मुलाहिज़े से मालूम हो सकती है। यानी खोजी और विचारवान पुरुष, देह और दुनिया के हालात को ग़ौर से जाँच कर, जो बयान कि ऊपर की इक्कीस दफ़ों में किया गया है, बतौर नतीजे के, अपनी ज़ाहिरी तहक़ीक़ात से निकाल सकता है। फिर उसके वास्ते कोई ज़रूरत या हाजत किसी की गवाही या तस-दीक़ की (जैसे पुरानी मज़हबी किताबों या महात्माओं के बचन की) नहीं रहती। और इस सबब से उस खोजी का यक़ीन भी पूरा और पक्का होता है। और जो कि उसके दिल में दर्द है यानी इस दुखदाई और मर-देश को छोड़ कर, महा सुख के स्थान और अमर-देश में पहुँचना चाहता है, इस वास्ते उससे कार्रवाई अभ्यास की भी, दर्जे-ब-दर्जे, बहुत दुरुस्त बनेगी और निर्विघ्न जारी रहेगी।

२३—ऐसे दर्दी खोजी को संत सतगुरु (जो कि अंतर-यामी हैं) अपनी दया से संयोग बना कर ज़रूर

मिलते हैं और हर तरह की मदद देकर मेहर और दया से उसका पूरा कारज बनाते हैं ।

२४—असल परमार्थ यही है, और सच्ची मुक्ति और पूरा उद्धार इसी का नाम है । बाक़ी जितनी कार्रवाई अंतर और बाहर परमार्थ के नाम से लोग करते नज़र आते हैं, वे भर्म हैं । लेकिन किसी क़दर सफ़ाई और और शुभ कर्म का फल उससे मिलता है यानी कुछ अर्से के वास्ते ऊँचे नीचे देश और योनियों में सुख प्राप्त हो जाता है, पर देहों का बंधन चाहे सूक्ष्म होवे या स्थूल और उसके लाज़मी दुख-सुख और भाव-अभाव यानी जन्म-मरण से छुटकारा किसी सूरत में मुमकिन नहीं ।

२५—मज़हब या तरीक़ या पंथ नाम रास्ते का है, और मत और दीन और ईमान नाम उस समझ-बूझ का है कि जिसका यक़ीन हासिल करके, प्रीति के साथ, उस रास्ते पर चलना शुरू किया जावे कि जिससे चलने वाला परम सुख और हमेशा के क़ायम रहने वाले स्थान में पहुँच कर अमर आनन्द को प्राप्त होवे और दुख और ओछे सुखों से क़तई छुटकारा हो जावे, और काम-क्रोध और लोभ-मोह और अहंकार और दसों इन्द्रियों के ज़ोर-ओ-शोर के मक़ाम से बिल्कुल अलेहदा हो जावे और ऐसे स्थान पर पहुँचे कि जहाँ सिवाय सच्चे मालिक के प्रेम, और दर्शनों के आनन्द और बिलास

के, और कोई दूसरी ख़्वाहिश या बर्ताव या किसी क़िस्म का व्यवहार (जो कि दुख-सुख का मूल है) क़तई नहीं है।

२६—अब ग़ौर करो कि मनुष्य के लुभाने और दिल बहलाने और उसको मन और इन्द्रियों का रस और स्वाद देने के वास्ते, ब्रह्म और माया ने बे-शुमार भोग और पदार्थ इस देश में पैदा किये हैं। और सब जीव उन्हीं की चाह और आशा बाँध कर, उम्र भर, दिन रात मेहनत और मश-क़्क़त करते हैं। और फिर भी ऐसे जीव बहुत कम हैं कि जिनको सर्व सुख प्राप्त होवें यानी कुल्ल इन्द्रियों के भोग उन की चाह के मुवाफ़िक़ मिल जावें। लेकिन चाहे पूरा सुख मिले या नहीं, सब जीव उसकी आशा में ब-दस्तूर पचते और खपते रहते हैं, और बा-बजूदे कि अकसर उनके जतन ना-कामयाब होते हैं और और तरह से भी दुनिया के हाथ से धक्के और झटके खाते रहते हैं, फिर भी नई २ चाह और आशा उठा कर अपनी कार्रवाई से बाज़ नहीं आते, चाहे वह आशा पूरी होवे या नहीं।

२७—बड़े अफ़सोस का मक़ाम है कि सब जीव अपनी मामूली अक़्ल और अपनी ज़ाहिरी आँखों से देखते और समझते हैं कि बड़े और छोटे आदमी और सब सामान इस दुनिया का गुज़रता चला जाता है, यानी उनका भाव और अभाव (हस्ती और नेस्ती) बराबर जारी है, और

एक दिन अपने को भी इस देश और उसके सामान और ख़ुद अपनी देह को छोड़ कर जाना है, फिर भारी ताज्जुब और अचरज यह होता है कि ज़रा से सफ़र को जब जाते हैं तो हर तरह का बंदोबस्त अपने सुख और आराम का करते हैं और इस भारी सफ़र का, कि जहाँ से फिर लौटना नहीं होगा, कोई जतन अपने आराम के वास्ते दुरुस्ती के साथ नहीं करते। और इस ज़िन्दगी में हर एक शख़्स अमीर और ग़रीब अनेक तरह के रोग और सोग और क्लेश और तकलीफ़ सहते हैं और जो जतन कि उनके दूर करने का करते हैं, उनमें से अकसर कुछ फ़ायदा नहीं देते, यानी उनसे किसी तरह का बचाव दुख और तकलीफ़ का नहीं होता, फिर भी खोज और तलाश नहीं करते कि आया कोई ख़ास जतन ऐसा भी है कि जिससे दुक्खों से पूरा २ या किसी क़दर बचाव और सुखों की आशा और तृष्णा का घटाव या बिलकुल दूर हो जाना मुमकिन होवे।

२८—इन बातों का थोड़ा-बहुत इलाज और जतन और सबब और फ़ायदा हर एक मज़हब में बयान किया है, पर न तो कोई उस जतन को विधि-पूर्वक करता है और न उसकी कारवाई की विधि अच्छी तरह से जानता है, और न कोई उसका समझाने वाला हर एक मज़हब में और हर जगह मिल सक्ता है। बल्कि जो पेशवा और आचार्य

अपने वक़्त के, हर मज़हब में होते आये हैं, वे ख़ुद इन बातों से, जैसा कि चाहिये, वैसे वाक़िफ़कार न थे और न हैं। और जोकि यह बातें अक्सर करके इशारे में बयान की हैं, इस वास्ते सिवाय अभ्यासियों के, आम जीव उनको किताबें पढ़ कर दरियाफ़्त नहीं कर सकते। और पहिले तो ऐसा हाल है कि वह जतन और जुगत कि जो थोड़ा-बहुत असर और फ़ायदा दिखलावे, उसकी विधि किसी मज़हब में पाई नहीं जाती। फिर जीवों को कहाँ से और कैसे मालूम होगा? और दूसरे, सब जीव आम तौर पर मज़हब की तरफ़ से ऐसे बे-परवाह हैं कि न तो किसी के दिल में खोज उन बातों का है, और जो कोई बतावे, तो कोई चित्त देकर सुनना भी नहीं चाहता और न उसके फ़ायदे और असर की परख या जाँच करनी मंजूर है। सिर्फ़ पुरानी रस्म और चाल और सीखों में, जो कि बुजुर्गों के वक़्त से जारी हैं, बग़ैर सोचने और विचारने उनकी असलियत और कैफ़ियत और नफ़ा और नुक़सान के, ज़ाहिरी तौर पर बर्ताव कर रहे हैं। और इसी को परमार्थ समझते हैं यानी इन्हीं कामों से अपनी मुक्ति या उद्धार की, बाद मरने के, आशा बाँध कर बे-फ़िक्र हो रहे हैं। और इतना ग़ौर और ख़्याल आम तौर पर किसी को भी नहीं है कि इस बात की जाँच करें कि आया उन कामों से जीते-जो भी कुछ फ़ायदा,

कि जिससे आइन्दा मुक्ति का सबूत या यकीन होवे, होता है कि नहीं।

२९—अब समझना चाहिये कि असल में शुरूआत मजहबों की किस तरह पर हुई और उनसे क्या मतलब और फ़ायदा मंजूर था। सो संतों के बचनों से ज़ाहिर होता है कि दुनिया में सब जीव आम तौर पर मन और इन्द्रियों के भोग और सुखों की प्राप्ति के लिये, देखा-देखी और सुना-सुनी के मुआफ़िक जतन करने लगे और हर एक मुआमले में ज़्यादा से ज़्यादा आशा और तृष्णा बढ़ाते गये कि जिसके सबब से ज़्यादा मेहनत उनको करनी पड़ी, चाहे वह आसा पूरी हुई या नहीं। और इस सबब से दुख-सुख भोगते रहे और रोग-सोग और तकलीफ़ वग़ैरा के दूर करने के लिये भी जो जतन कि उनको आम तौर पर जीवों की कार्रवाई देख कर मालूम हुये, करने लगे। पर जब उन से कुछ फ़ायदा न हुआ, तब दुखी रहे और कोई उनकी मदद न कर सका। और मौत के वक़्त तो कतई किसी का जतन पेश न गया और वह भारी दुख सब को भोगना पड़ा, और आइन्दा की हालत से सब को बे-खबरी रही कि आया दुख मिलेगा या सुख।

३०—जीवों की ऐसी हालत देख कर, यानी इन तीन क़िस्म के दुक्खों में जिनका जिक्र ऊपर हुआ, उनका

कोई सहाई या मदद्गार न देख कर, वक़्त-वक़्त के महात्मा और बुद्धिमानों ने और कहीं कभी परमेश्वर या ब्रह्म ने आप औतार धर कर या अपनी कला भेज कर, ऐसी समझ सुनाई या जुगत बताई कि जिस से इन तीनों क़िस्म के दुक्खों की हालतों में थोड़ा-बहुत जीवों को सहारा या मदद मिले और यह समझ और जुगत हर एक ने अपनी-अपनी पहुँच और वाक़िफ़कारी और बुद्धि की ताक़त के मुवाफ़िक़ बताई और किताबों में लिखी। लेकिन हर एक समय के लोगों की समझ और कहन में थोड़ा-बहुत फेर और इख़्तिलाफ़ होता गया। और फिर जीवों की समझ के मुवाफ़िक़ (जिनकी हिदायत के वास्ते वे किताबें बनाई गईं) हर वक़्त में कमी-बेशी और इख़्तिलाफ़ बढ़ता गया कि जिसके सबब से हर मज़हब या गिरोह में बहुत से फ़िरक़े होते गये और असली मतलब कि जो उन किताबों के जारी करने का था, दिन २ गुम और गुप्त होता गया।

३१—ख़ुलासा यह कि जिस-किसी ने जो समझ सुनाई या जुगत बताई, वे सब टटोलवाँ चले यानी नतीजे से सबब को ढूंढ़ते गये। और जिस क़द्र कि उनको, बुद्धि की मदद और दुनिया के हाल और क़ुदरत की कार्रवाई को ग़ौर से मुलाहिज़ा और जाँच करने से जो कैफ़ियत मामूली पड़ी, वही उन्होंने ज़ाहिर की और उसी के मुवाफ़िक़

अपने २ देश के जीवों को कर्म और धर्म वग़ैरा की हिदा-यत की। और जब तक कि आम जीव नादान और बे-परवाह रहे, उन्होंने उनके बचन को दुरुस्ती से माना और उस के मुवाफ़िक़ जिस क़दर बन सका, ज़ाहिरी कार्रवाई की। और जब उनमें से बाज़े-बाज़ों की बुद्धि जागी या विद्या पढ़ कर थोड़ी-बहुत समझ आई और विचार उत्पन्न हुआ, तब वे पिछले महात्माओं और बुद्धिवानों और कला-धारियों के बचनों में इख़्तिलाफ़ और हेर-फेर देख कर उनकी जाँच और तौल करने लगे और कसरें निकाल कर उनकी कार्रवाई में अदल-बदल कर दिया या नई समझ और नई कारवाई जारी करी। और इख़्तिलाफ़ के सबब से हर फ़िरक़े में आपस में लड़ाई और झगड़े होने लगे और एक मज़हब वाला दूसरे पर या एक ही मज़हब वाले अपने मुख़्तलिफ़ फ़रीक़ों पर तान और तंज़ करने लगे और ग़लतियाँ और कसरें निकाल कर एक-दूसरे को झूठा या ओछा बताने लगा। और इस तरह से असल मतलब गुम हो गया और ज़ाहिरी और दिखावे और हिर्सा-हिर्सी की कार्रवाई बढ़ती गई।

३२—जो समझौती या मत कि औतारों या कला-धारियों ने जारी किये, उनमें धर्म यानी इख़लाक़ की बातें और रस्में थोड़ी-बहुत यकसाँ थीं। लेकिन जो जुगत कि उन्होंने बताई, वह निहायत कठिन और ख़तरनाक थी कि

जिसकी कार्रवाई आम तौर पर जीवों से बननी ना-मुमकिन मालूम हुई। वह सिर्फ़ लिखने और पढ़ने के वास्ते थी, और अमलदरामद उसका आम तौर पर जारी नहीं हुआ। और बाज़ों ने वह जुगत ऐसे मुअम्मे और इशारों में लिखी कि वह आम जीवों की समझ में न आई और न उसकी कार्रवाई जारी हुई, सिर्फ़ ज़ाहिरी रस्मों और कार्रवाइयों में, कि जिनमें असली मतलब और फ़ायदा बहुत कम था, सब जीव अटक गये और उन्हीं की टेकें बाँध कर, एक दूसरे से ज़िद्द और तकरार करने लगे। और दुक्खों के दूर करने या उन में सहायता और मदद की प्राप्ति का ख़्याल किसी को नहीं रहा और इस सबब से सब जीव अपनी २ बुद्धि और समझ के मुवाफ़िक़ काम करने लगे। और नतीजा उसका यह हुआ कि बहुत कम जीव ऊँचे यानी सुख-स्थान में, जैसे स्वर्ग और बैकुन्ठ या बहिश्त या और ऊँचे लोकों में पहुँचे और बाकी कसरत से नीचे के लोक और नरकों वग़ैरा में यानी चौरासी योनियों में भरमे और कुल्ल और सच्चे मालिक का भेद और पता किसी को नहीं मिला और न उसके प्राप्ति के जतन और जुगत की ख़बर पड़ी।

३३—ऐसी हालत जीवों की देखकर, कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल ने संतों को, जो उनके निज पुत्र या ख़ास मुसाहब हैं, दया करके संसार में भेजा कि पहिले

सत्तपुरुष का भेद और पता और धाम प्रगट करके (जो कि तीन लोक यानी माया के घेर के पार है) जतन और अभ्यास उसके प्राप्ति का, सुरत-शब्द मार्ग की अपने घट में कमाई करके बताया। लेकिन जो कि पुराने मुतफ़र्रिक मज़हब और उनकी शाखों का बहुत ज़ोर और शोर था, इस सबब से संत मत और उसकी जुगती की कार्रवाई बहुत कम जारी हुई। और हरचन्द उस वक़्त से जा-ब-जा साधू संत-मत के, जब-तब प्रगट होते गये और उन सब ने वही सुरत-शब्द मार्ग का उपदेश किया, लेकिन पढ़े-लिखे जीव बहुत कम इस मत में शामिल हुए। और फिर बहुत से जीव जो कि विद्यावान और बुद्धिवान न थे, और जात-पाँत में भी ज़रा कम दर्जे के थे, यानी अहँकारी और अभिमानी न थे, संत-मत में शामिल हो गये। लेकिन इनमें से सुरत-शब्द के अभ्यासी बहुत कम बल्कि थोड़े से ख़ास २ हुये और बाक़ी कोई न कोई ज़ाहिरी पूजा या रस्म में (मुवाफ़िक़ और मतों के, जो कि कसरत से रायज थे) अटक गये, और सिर्फ़ संतों की बानी और बचन के पढ़ने और रस्मी पूजा करने को ही अपने उद्धार का वसीला समझा। और बाज़े वाचक ज्ञानी हो गये, सो इनका हाल भी थोड़ा-बहुत, मुवाफ़िक़ और मतों के जीवों के समझना चाहिये, यानी सच्चे मालिक के धाम में इन में से सिवाय बाज़े ख़ास अभ्यासी और प्रेमियों के कोई न गया।

३४—इसी अर्से में ब-सबब गुम होने असली परमार्थ और रुजू होने आम तौर से कुल्ल जीवों के दुनिया और उसके भोग-बिलास की तरफ़, और भूलने कुल्ल-मालिक और उसके भजन बंदगी के, कर्मों का भार जीवों के सिर पर ज़्यादा से ज़्यादा बढ़ता गया। और नतीजा उसका यह हुआ कि रोग-सोग और निर्धनता और कलह और क्लेश और आपस में लड़ाई और झगड़े बहुत बढ़ते गये और उम्रें भी जीवों की कम हो गईं और ज़मीन की पैदावार और कार्रवाई और आमदनी हर एक पेशे की बहुत घट गई, और अनेक तरह की चिन्ता और फ़िक्र ज़्यादा सताने लगे, और नक़ली और रस्मी परमार्थ की ज़ाहिरी कार्रवाई ज़्यादा होती गई कि जिसमें असली परमार्थ का फ़ायदा बहुत कम और मन और इन्द्रियों के भोग और दिखावे की कार्रवाई ज़्यादा हो गई और इस सबब से जीव कसरत से नीचे दर्जों में उतरने लगे। तब ऐसी हालत परेशानी और मुसीबत जीवों को देख कर, कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल, अति दया करके, आप संत रूप धर कर प्रगट हुये और निहायत आसान जुगत इस माया के देश से निकल कर, निज घर यानी राधास्वामी देश में जाने की, प्रगट की और कुल्ल भेद अपना और अपने धाम का और हाल रास्ते और उसकी मंज़िलों का बयान फ़रमाया। और आम

तौर से जीवों को हेला दिया कि जो कोई देह और दुनिया के दुख-सुख और जन्म-मरन के चक्कर से बचना चाहे, वह उनकी यानी राधास्वामी दयाल की शरण में आवे, और जो सहज जुगत सुरत-शब्द मार्ग की, उन्होंने दया करके जारी फ़रमाई, उसका अभ्यास जिस क़दर बन सके, ग्रहस्थ में रह कर और अपना उद्यम और रोज़गार करते हुये नियम से रोज़मर्रा करे और चरणों में प्रीति और प्रतीत दिन २ बढ़ावे, तो वे अपनी दया से उसका उद्धार फ़रमावेंगे यानी निज घर में पहुँचा कर उसको अमर आनंद बख़्शेंगे।

३४—और जो जीव कि कर्म-धर्म और पिछली टेकों की पक्ष धारण करके, राधास्वामी दयाल के बचनों को नहीं सुनेंगे या नहीं मानेंगे और बे-फ़ायदा हुज्जत और तकरार उठा कर राधास्वामी मत से विरोध जनावेंगे, उनको सिवाय एक दफ़े हाल इस मत का सुनाने के, छेड़ने या उन से बहस करने का हुक्म नहीं है और न किसी को डराने या लालच दिखाने का हुक्म है, क्योंकि यह मत प्रेम का है और जब तक किसी के दिल में सच्चा शौक़ और प्रेम कुल्ल मालिक के चरणों में न आवेगा, तब तक उससे उस सहज जुगत का अभ्यास भी नहीं किया जावेगा। इस वास्ते यह सब जीव काल और माया के घेरे में रहे आवेंगे और वहीं बारम्बार ऊँची-नीची देह धर कर दुख-सुख भोगते रहेंगे।

३६—जो कोई राधास्वामी दयाल की शरण में आवेगा, उसका बचाव तीन क़िस्म के दुक्खों से थोड़ा-बहुत ज़रूर हो जावेगा। और यह हालत अपनी अभ्यास करके वह थोड़ी बहुत इसी ज़िंदगी में देख सक्ता है। और उन तीनों क़िस्मों के दुक्खों का ज़िक्र दफ़ा ३० में हो चुका है और दूसरी तरह उनको तीन ताप करके भी कहा है यानी मानसी दुख और तन का दुख जैसे बीमारी वग़ैरा और उपाधि का दुख जैसे लड़ाई-झगड़ा, क्लेश वग़ैरा और चौथा मौत का दुख जोकि सब में भारी है।

३७—राधास्वामी मत के उसूल ये हैं :—

(१) सच्चा कुल्ल-मालिक एक है और उसका धाम ऊँचे से ऊँचा है और वहाँ सिवाय प्रेम के, और कोई दूसरी वस्तु नहीं है यानी माया की मिलौनी क़तई नहीं है, और उस कुल्ल-मालिक का नाम राधास्वामी है और यह नाम ध्वन्यात्मक है यानी इसकी धुन घट २ में हो रही है, और यह नाम किसी आदमी का धरा हुआ नहीं है।

(२) और उस सच्चे मालिक का तख़्त घट-घट में मौजूद है और उसके मिलने का रास्ता भी घट में है और वह अपनी किरण यानी धारों के वसीले से सब जगह मौजूद है।

(३) जीव यानी सुरत कुल्ल-मालिक की अंश है, जैसे सूरज और उसकी किरण या सिंध और उसकी बूंद।

(४) कुल्ल-मालिक यानी दयाल देश के नीचे से एक धारा श्याम रंग की निकली जिसका नाम निरंजन और काल पुरुष है और मन इसकी अंश है। इसी ने संकल्प उठा कर और सत्त पुरुष से आज्ञा लेकर नीचे के देश में तिरलोकी की रचना करी।

(५) इसी देश में शुद्ध माया का प्रथम ज़हूर हुआ। और निरंजन ने इस माया से मिल कर पहिले ब्रह्मांड की रचना करी और पुरुष-प्रकृति और माया-ब्रह्म और शिव-शक्ति और निरंजन-जोत इन्हीं दोनों के नाम हैं जो कि उतार के वक़्त नीचे के मुक़ामों पर धरे गये और यही निरंजन कुल्ल मतों का परमेश्वर और ख़ुदा है। सत्त पुरुष राधास्वामी का भेद किसी ने नहीं पाया।

(६) फिर निरंजन-जोत ने नीचे के देश में अपनी तीन धारों (यानी ब्रह्मा, विष्णु और महादेव) के वसीले से, देवताओं और मनुष्यों और चारों खानों के जीवों की रचना करी। इस देश में मलीन माया प्रकट हुई और उसकी मिलौनी से सब रचना हुई। इस देश को पिंड देश भी कहते हैं।

(७) इस हिसाब से, राधास्वामी मत के मुवाफ़िक़ कुल्ल रचना के तीन बड़े दर्जे हुये। पहिला प्रेम यानी निर्मल चैतन्य देश, जहाँ सिवाय प्रेम यानी चैतन्य के, और किसी की मिलौनी नहीं है। दूसरा, निर्मल चैतन्य और शुद्ध माया

देश, जहाँ ब्रह्मांडी रचना यानी ब्रह्म-सृष्टि हुई। तीसरा, निर्मल चैतन्य और मलीन माया देश, जहाँ पिंड यानी सूक्ष्म और स्थूल रचना हुई।

(८) मन जो कि निरंजन यानी काल पुरुष की अंश है, संकल्प-विकल्प यानी इच्छा का भंडार है और इन्द्रियाँ, जो कि देह में बतौर औज़ार के हैं, उनके वसीले से पिंडी मन इस लोक में इच्छा अनुसार कार्रवाई यानी कर्म करता है और यह देह और उसके औज़ार (इन्द्रियाँ) माया का कारज है।

(९) रोशनी और रोशन किरणियाँ चैतन्य और दयाल पुरुष की अंश यानी किरणियों का ज़हूरा है और अँधेरा और श्याम किरणियाँ काल पुरुष और माया का ज़हूरा और नमूना है।

(१०) पहिले बड़े दर्जे में, दयाल पुरुष यानी निर्मल चैतन्य का बासा है और दूसरे और तीसरे दर्जे में काल पुरुष और माया प्रधान हैं यानी इन दो दर्जों की रचना माया की हद्द में है।

(११) माया और उसका कारज हमेशा एक हालत में नहीं रहते यानी उसमें तग़ैयुर और तबद्दुल हमेशा जारी रहता है। इस सबब से इसकी हद्द में सुख और दुख व्यापते हैं और भाव और अभाव देहियों का, जो कि बतौर

ग़िलाफ़ के सुरत चैतन्य पर इस देश में चढ़े हुये हैं, होता रहता है, और ग़िलाफ़ या देही, माया के मसाले यानी पाँच तत्व और तीन गुणों से बनी है ।

(१२) ब्रह्म और माया देश यानी रचना के दूसरे और तीसरे दर्जे में पाप और पुण्य का ज़हूर हुआ और इसी देश का नाम कर्म-देश है यानी कर्म का ज़हूर इन्हीं दो देशों में हुआ और यही कर्म, पुण्य और पाप कर्म कहलाये।

(१३) पुण्य और पाप कर्म की दो क़िस्में हैं—एक, असली और दूसरी, ज़ाहिरी और रस्मी ।

(१४) असल पुण्य कर्म यह है कि संतों की जुगत का अभ्यास करके मन के मुक़ाम से वृत्ति यानी धार उठ कर ऊँचे देश यानी सुरत-चैतन्य के निज घर को तरफ़ रुजू होवे ।

(१५) और असली पाप-कर्म यह है कि मन के मुक़ाम से वृत्ति यानी धारा उठ कर इन्द्रियों के घाट पर आवे और वहाँ से बाहर की रचना यानी भोगों और पदार्थों की तरफ़ रुजू करे ।

(१६) असली पुण्य कर्म का यह फ़ायदा है कि मन और सुरत दिन २ ऊँचे देश की तरफ़ चढ़ कर निर्मल होते जावेंगे, और निर्मल आनन्द पाते जावेंगे, और त्रिकुटी के मुक़ाम पर मन ठहर जावेगा, और सुरत उससे न्यारी होकर

दयाल देश में पहुँच कर अमर आनन्द को प्राप्त होगी, और वही जुगत, और जीवों को बता कर या उसकी कार्रवाई में मदद देकर उनको भी परम आनन्द का कराना, यही काम असली और सच्चा परमार्थ है।

(१७) और असली पाप-कर्म का नुक़सान यह है कि मन और सुरत का रुख़ नीचे और बाहर की तरफ़ रहेगा और उनकी धारें इन्द्रियों द्वारे जड़ पदार्थों की तरफ़ बिखरती रहेंगी और देहियों के साथ दुख-सुख सहती रहेंगी और जन्म-मरन का चक्कर नहीं छूटेगा। और, और जीवों को भी ऐसी कार्रवाई की शिक्षा या उसमें मदद देना और असली पुण्य कर्म के करने वालों यानी सच्चे परमार्थी जीवों को उनकी कार्रवाई से रोकना या उसमें विघ्न डालना, पाप कर्म में दाख़िल है।

(१८) रस्मी पुण्य कर्म यह है कि जो सामान क़ुदरती तौर पर या जमाअत के व्यवहार और रस्म के मुवाफ़िक या अपनी ज़ाती मेहनत और मशक़्क़त से हासिल हुआ है, उससे औरों को फ़ायदा और सुख पहुँचाना—मन, बचन और कर्म करके। इसका फ़ायदा यह होगा कि इस शख़्स को आइन्दा विशेष सुख मिलेगा और जो यह कर्म निष्काम बन पड़ेगा तो मालिक के चरणों में प्रेम और भक्ति पैदा होगी।

(१६) और ज़ाहिरी पाप-कर्म यह है कि औरों के सामान पर बद्-नीयती के साथ नज़र डालना या उसको ज़बरदस्ती छीन लेना या और तरकीब से नाहक़, यानी ग़ैर-वाजिब और ना-मुनासिब तौर से ले लेना या उनकी किसी तरह से हक़-तल्फ़ी करना और नुक़सान पहुँचाना, या किसी तरह की तकलीफ़ और कष्ट देना, मन बचन और कर्म करके, और परमार्थी जीवों के साथ उपाधि उठाना और लड़ाई-झगड़ा करना।

(२०) असली पुन्य कर्म में प्रवृत्ति (यानी सुरत और मन को गगन में चढ़ाने का अभ्यास) बग़ैर मदद् और सत-संग सतगुरु के, जो धुर-धाम का भेदी और बासी हैं, क़तई मुमकिन नहीं है और ज़ाहिरी और रस्मी पुण्य कर्म भी बग़ैर सतसंग सतगुरु के और अभ्यास उनकी जुगती के, निष्का-मता के साथ बनना बहुत मुशकिल बल्कि ना-मुमकिन है।

(२१) राधास्वामी अथवा संत मत में महिमा और ज़रूरत सतगुरु की, जो धुर-धाम का भेद् बतावें और जुगत चढ़ाने और चलाने मन और सुरत की उसकी तरफ़ समझावें, बहुत भारी है। बग़ैर उनके उपदेश और द्या और मदद् के, अभ्यास किसी से नहीं बन सक्ता है और न भेद् सच्चे मालिक और उसके धाम और रास्ते का मिल सक्ता है।

(२२) संत सतगुरु,कुल्ल-मालिक का स्वरूप या उसके निज और प्यारे पुत्र हैं और जीवों का सच्चा और पूरा उद्धार जब कभी होगा,उन्हीं के वसीले से होवेगा। और उन्हीं की यह ताक़त है कि जीवों को चारों खानों में से निकाल कर, पहिले नर देही में, और फिर सतसंग और अभ्यास कराके ऊँचे लोकों में, और फिर निज धाम में पहुँचावें।

(२३) संत सतगुरु कुल्ल जीवों के सच्चे हितकारी हैं, और रक्षक और बंदी-छोड़ हैं, और वेही जीवों को सच्चे और कुल्ल-मालिक से मिला सक्ते हैं और उसी स्वरूप में यानी संत सतगुरु रूप में सच्चा और कुल्ल-मालिक जब २ मौज होती है, औतार धारण करता है।

(२४) जो किसी को संत सतगुरु न मिलें पर साध गुरू से मेला हो जावे, तो वे भी उसके उद्धार में पूरी मदद दे सक्ते हैं। और साध गुरू उनको कहते हैं कि जो संत सतगुरु या कुल्ल-मालिक से जब वह औतार धारण करे, मिल कर और उनकी दया से अभ्यास करके आधा रास्ता तै कर चुके हैं, यानी पार-ब्रह्म पद में पहुँचे हैं और निज धाम में पहुँचनहार हैं यानी संत सतगुरु गति को प्राप्त होने वाले हैं।

(२५) जो इन दोनों में से किसी से मेला न होवे, लेकिन इनका कोई सच्चा प्रेमी सतसंगी मिल जावे, तो

उससे भेद और जुगत लेकर खोजी और दर्दी परमार्थी अभ्यास शुरू कर सकता है, लेकिन कारज उसका संत सतगुरु ही बनावेंगे यानी सवेर-अबेर उसको ज़रूर दर्शन देकर दया फ़रमावेंगे।

(२६) हर एक जीव में चाहे औरत होवे या मर्द, तीन शक्तियाँ मौजूद हैं—पहिली, देह और इन्द्रियों की शक्ति, दूसरी, मन और विद्या बुद्धि की शक्ति, और तीसरी, सुरत यानी रूह की शक्ति। बग़ैर मथन यानी अभ्यास और मश्क़ के, इनमें से कोई शक्ति नहीं जाग सक्ती है। पहिली और दूसरी शक्ति के जगाने से संसारी फ़ायदे, जैसे धन और नामवरी और हुकूमत और इन्द्रियों के भोग वग़ैरा हासिल हो सकते हैं, और तीसरी यानी रूह की शक्ति के जगाने से जीव को परमार्थी लाभ प्राप्त हो सकता है यानी उसके मन और सुरत घट में चढ़ कर ऊँचे लोकों में और फिर वहाँ से कुल्ल-मालिक के धाम में पहुँच कर परम और अमर आनंद को प्राप्त हो सकते हैं। सब जीवों पर फ़र्ज़ है कि अपने जीव के कल्याण के वास्ते, थोड़ी-बहुत कोशिश, वास्ते जगाने रूह की शक्ति के, ज़रूर करें, और यह काम सतगुरु से मिल कर और उनकी जुगती की कमाई करके बन सकता है।

(२७) मुक्ति यानी सच्चे उद्धार की ज़रूरत सब जीवों को है। और राधास्वामी मत में सच्ची मुक्ति या उद्धार से

यह मतलब है कि जीव सुरत-शब्द का अभ्यास करके माया के घेर से निकल कर निर्मल चैतन्य देश यानी कुल्ल मालिक के धाम में पहुँच कर, अपने सच्चे मालिक और माता-पिता का दर्शन पावे। और जो कि वही धाम परम आनंद का भंडार है और अजर-अमर है और वहाँ किसी तरह का कष्ट और क्लेश और जन्म-मरन का दुख नहीं है, तो सुरत भी वहाँ पहुँच कर अजर-अमर हो जाती है, और परम आनंद को, जो सदा एक रस रहता है, प्राप्त होती है। इसी को सच्ची मुक्ति और पूरा उद्धार कहते हैं।

(२८) जो कोई ऐसी मुक्ति और उद्धार के हासिल करने के वास्ते जो जतन कि संतों ने बताया है, नहीं करेगा, वह माया के देश में ऊँच-नीच देही धारण करके, हमेशा दुख-सुख भोगता रहेगा और जन्म-मरन का चक्कर उसका नहीं छूटेगा। खुलासा यह कि बारम्बार अपनी वासना और कर्म अनुसार ऊँच-नीच देश और योनि में देह धारण करके दुख-सुख भोगता रहेगा।

(२९) जो कि कुल्ल-मालिक प्रेम का भंडार है, और सब जीव भी जो कि उसकी अंश हैं, प्रेम स्वरूप हैं, और कुल्ल कार्रवाई रचना में प्रेम से ही हो रही है, इस वास्ते जो कोई अपनी रूहानी शक्ति को जगाना चाहे, उसको चाहिये कि प्रेम अंग लेकर अभ्यास करे, और उस प्रेम को

दिन २ संत सतगुरु और कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में बढ़ाता जावे। इस तरक़्क़ी के साथ उस के मन और सुरत की चढ़ाई की भी तरक़्क़ी होती जावेगी और एक दिन पूर्ण प्रेम हासिल करके प्रेम भंडार में पहुँच जावेगा। बग़ैर सच्चे प्रेमी यानी शौक़ के, राधास्वामी मत में सुरत-शब्द अभ्यास की कमाई मुमकिन नहीं है।

३८—जो कोई कि राधास्वामी मत में शामिल हुआ, उसी को बड़ भागी समझना चाहिये, क्योंकि उसी का एक, दो या तीन जन्म में सच्चा उद्धार हो जावेगा और जितने कि परमार्थी प्रश्न और सन्देह जीवों के दिल में निसबत कुल्ल-मालिक और उसकी कुदरत और जीव और माया और रचना वग़ैरा के पैदा होते हैं, उन सब का जवाब जिससे शान्ति हो जावे, सिर्फ़ राधास्वामी मत में मिल सकता है। और किसी मत में बहुत से भारी सवालों के जवाब नहीं हैं और इसी सबब से लोगों को पूरा यक़ीन उस मत का नहीं होता है, और न उसकी जुगती या अभ्यास की कमाई हो सकती है और न सच्ची शान्ति हासिल हो सकती है। अब जीवों को इख़्तियार है कि अपने असली नफ़े या नुक़सान का ख़्याल करके, चाहें संतों के बचन को मानें या नहीं। और मालूम होवे कि यह मत कुल्ल-मालिक का है और इसमें सब जीव सर्व देशों और मतों के, जिनके मन में

सच्चा खोज सच्चे मालिक का है, शामिल होकर उसकी सहज जुगती का अभ्यास, बग़ैर छोड़ने घरबार या रोजगार के, आसानी से करके, अपने जीव का कल्यान कर सकते हैं यानी सच्ची मुक्ति को प्राप्त हो सकते हैं।

३९—जो कि यह बचन तूल-तवील यानी बहुत लंबा है, इस वास्ते इसका ख़ुलासा नीचे लिखा जाता है :—

(१) देह और दुनिया और उसके भोग और जितने पदार्थ और सामान हैं, सब नाशमान और जड़ हैं, और इस वास्ते असत्य हैं।

(२) इस रचना में सत्त और चैतन्य और आनन्द स्वरूप, सुरत मालूम होती है कि जिसके सबब से देह हर एक जानदार की चैतन्य हो रही है। और यहाँ जड़-पदार्थ यानी भोगों से थोड़ा-बहुत रस मिलता है यानी कुल्ल देहियाँ, चाहे चैतन्य हैं या जड़, सुरत के सबब से, जो कि उन में प्रगट या गुप्त मौजूद है, सत्त नज़र आती हैं यानी ठहरी हुई हैं, और जब उसका वियोग होता है तो उसी वक़्त या थोड़े अर्से में उन देहियों का अभाव हो जाता है। इस वास्ते इस लोक में सुरत-चैतन्य ही सत्य है, और बाक़ी सब पसारा असत्य है।

(३) जो कि सुरतें, मुवाफ़िक़ देहियों के, अनेक हैं और देह में आती हैं और उसको छोड़ कर चली जाती हैं, तो

ज़रूर हुआ कि इसका कोई ख़ास मंडल या भंडार है और वही महा सत्य और महा चैतन्य और महा आनन्द स्वरूप है।

(४) देही पाँच तत्व और तीन गुन का (जो कि माया का मसाला है) कारज है और ये सब जड़ हैं और सुरत की चैतन्यता से चैतन्य होते हैं।

(५) इन तत्वों का भी अलेहदा २ मंडल मौजूद है और स्थूल तत्वों का मंडल जुदा २ नज़र आता है।

(६) ऊँचे देश का रचना लतीफ़ और सूक्ष्म नज़र आती है, फिर वहाँ तत्त्व भी सूक्ष्म होंगे और उनके मंडल भी ब-दस्तूर सूक्ष्म होंगे।

(७) यहाँ देखने में आता है कि सुरत की बैठक पाँच तत्वों और तीन गुणों और इन्द्रियों और मन के परे है, इस वास्ते सुरत का मंडल यानी भंडार इन सब, बल्कि सुरत के मक़ाम के परे, ऊँचे से ऊँचे मक़ाम में, होना चाहिये। सबूत इसका यह है कि इस रचना में एक सूरज-मंडल के ऊपर दूसरा सूरज-मंडल और दूसरे पर तीसरा और फिर चौथा और पाँचवा सब का अख़ीर है और वहीं से आदि धार प्रगट होकर इन सब मंडलों को रचना करती चली आई है, फिर वही अख़ीर मक़ाम, सुरत चैतन्य का निज भंडार है और वही कुल्ल-मालिक का धाम है और

बीच के मंडल एक का एक भंडार और मददगार और मालिक है।

(८) ज़ाहिर है कि असत्य यानी नाशमान और जड़ पदार्थों में दिल लगाने और बंधन पैदा करने से जब २ उन की हालत बदलती है और अभाव हो जाता है, तब दुख पैदा हो जाता है। और जब यह देह (जो सुरत के बैठने और चंद रोज़ रहने का इस लोक में मकान है) जरजरी हो जावेगी या क़ाबिल रहने के नहीं रहेगी, तब इसके छोड़ने के वक़्त महा दुख होगा।

(९) इस वास्ते अक़्लमंद और विचारवान आदमी को चाहिये कि जड़ और नाशमान यानी असत्य रचना में ज़रूरत और कार्रवाई के मुवाफ़िक़ दिल लगावे और बंधन पैदा न करे।

(१०) लेकिन जिस क़दर मुमकिन होवे, सत्य से प्रीति करे और उसकी प्राप्ति का मुनासिब जतन, इस ज़िंदगी में थोड़ा-बहुत कर लेवे, ताकि इस असत्य रचना के छोड़ने के वक़्त तकलीफ़ न होवे और महा सत्य से मिल कर अमर आनन्द को प्राप्त हो जावे।

(११) जो कि कुल्ल रचना धारों को है और यह सुरत-चैतन्य, उस महा सत्य यानी कुल्ल-मालिक की एक धार या किरण है (और इसी के सबब से इस लोक में रचना होती

है और ठहरी हुई है) तो मुनासिब है कि इसी सत्य और चैतन्य धार को पकड़ के इस के निज भंडार में पहुँचना चाहिये ।

(१२) यह चैतन्य सुरत की धार, घट में, गुप्त जारी है, पर नज़र नहीं आती, लेकिन शब्द यानी आवाज़ इसका ज़हूरा और निशान है। इस वास्ते शब्द की धुन को पकड़ के चलने से इस धार का, उसके भंडार की तरफ़, उलटना मुमकिन है ।

(१३) जो धुन को पकड़ के यानी आवाज़ को सुनता हुआ चलेगा, वह जहाँ से वह आवाज़ आती है, वहाँ पहुँच जावेगा, चाहे रास्ते में उसके अंधेरा है या उजाला ।

(१४) अब आदि शब्द यानी आदि धार का, और भी रास्ते और मंज़िलों का, जहाँ २ से शब्द प्रगट हुआ है यानी धार जारी हुई है, भेद मिलना चाहिये, ताकि खोजो दर्दी मुक़ाम २ की धुन को पकड़ के रास्ता तय करे और आहिस्ता २ एक दिन धुर धाम में, जहाँ से कि आदि धार प्रगट हुई, पहुँच कर, महा सत्य और अमर आनन्द को प्राप्त होवे ।

(१५) यह भेद और हाल, रास्ते और मंज़िलों का, (जो कि हर एक के घट में मौजूद है) शब्द भेदी और शब्द अभ्यासी से मिलेगा । उससे पूरी हिदायत और मदद

लेकर, कुल्ल-मालिक के चरणों में (जो कि महा सत्य, महा चैतन्य और महा आनन्द स्वरूप है) अपने मन में प्रेम पैदा करके चलना चाहिये, क्योंकि प्रेम से कुल्ल रचना की कार्रवाई हुई है और जारी है और सब काम प्रेम से हो रहे हैं, इस वास्ते बग़ैर प्रेम के यह रास्ता तै होना मुमकिन नहीं है ।

(१६) यह भेद और हाल मंज़िल और रास्ते का, और जुगत पैदा करने और बढ़ाने प्रेम की, उस महा सत्य और महा चैतन्य और महा आनन्द स्वरूप के चरणों में, जिस को कुल्ल और सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल कहते हैं, राधास्वामी मत की बानी और बचन और उनकी संगत से मालूम हो सकता है, और किसी मत में जो इस वक़्त जारी हैं, इस भेद और जुगत वग़ैरा का साफ़ २ और ऐसे क़ायदे और आसानी के साथ कि जिस की कार्रवाई हर कोई कर सके, ज़िक्र भी नहीं है ।

(१७) राधास्वामी मत में सच्चे मालिक की क़ुद्रत का भेद है, यानी जिस तरह कि सुरत, रूह, की धार का धुर मक़ाम से उतार हुआ है, उसी क़ायदे और रास्ते से उसके उलटाव और चढ़ाव का अभ्यास, राधास्वामी मत कहलाता है। इस मत में कोई बात या कोई तरीक़ा मनुष्य का बनाया हुआ या विद्या-बुद्धि से निकाला हुआ नहीं

है। और जो कि सिवाय सुरत चैतन्य को धार के उलटाने के, कोई और रास्ता या तरीक़ा सुरत के निज घर में पहुँ-चने का नहीं है, इस वास्ते सुरत-चैतन्य की धार यानी शब्द की धुन को पकड़ के यानी सुनते हुये चलना, यही सच्चा और पूरा रास्ता है। इसके सिवाय जितने रास्ते अंतर में चलने के हैं, वे सब ख़तरनाक और कठिन और ओछे यानी माया की हद्द में ख़तम होने वाले हैं। इस वास्ते उनसे सच्चा और पूरा उद्धार मुमकिन नहीं है।

४०—और मालूम होवे कि जो मतलब और फ़ायदा परमार्थी कार्रवाई से मंज़ूर है, वह भी इस वक़्त में सिर्फ़ उस जुगत यानी सुरत-शब्द की कमाई से, जो राधास्वामी मत में जारी है, हासिल होना मुमकिन है। यानी संसारी ख़्वाहिशों और तरंगों का पूरा होना या दूर हो जाना और मन और देही के सुक्खों में होशियारी और सम्हाल का रहना और उन के दुक्खों में रिआयत और बचाव, और मौत के महा दुक्ख के वक़्त सहायता, और बजाय तक-लीफ़ के आनन्द की प्राप्ति, राधास्वामी मत के अभ्यासी को हासिल हो सकती है और ज़रूर इस कैफ़ियत का कुछ अर्से के अभ्यास के बाद अभ्यासी आप देख सकता है। और वही कैफ़ियत दिन २ बढ़ती जावेगी और एक दिन कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की दया से पूरी २ हालत (जिस का ज़िक्र ऊपर हुआ) पैदा होनी मुमकिन है।

बचन १५

परमार्थियों को तीन क़ायदों पर ख़्याल रखने से अभ्यास में विघ्न कम वाक़ै होंगे, और परमार्थ की तरक़्क़ी दिन २ होती जावेगी।

१—जो लोग कि राधास्वामी मत में शामिल हैं, और सच्ची चाह अपने जीव के सच्चे उद्धार और सच्चे मालिक के दर्शनों की, उसके निज धाम में पहुँच कर, रखते हैं, उनको मुनासिब है कि वास्ते तरक़्क़ी अपने अभ्यास के, और दुरुस्ती चाल-चलन परमार्थी और भी संसारी व्यवहार के, नीचे के लिखे हुए क़ायदों के मुवाफ़िक़, जिस क़द्र बन सके, कार्रवाई करते रहें। और जो वे इन क़ायदों को अच्छी तरह समझ कर उन पर नज़र रक्खेंगे तो उम्मेद है कि उनको अपनी कसरें और भूल-चूक मालूम हो जावेंगी और फिर उनकी सम्हाल का जतन भी वे दुरुस्ती से कर सकेंगे।

२—और वे क़ायदे ये हैं :—

पहिला—जो कि सुरत ऊँचे मक़ाम यानी राधास्वामी दयाल के चरणों से उतर कर, पिंड में, आँखों के मक़ाम पर ठहरी है और वहीं बैठ कर इन्द्रियों के द्वारे कार्रवाई देह और दुनिया की कर रही है, सो इसको, राधास्वामी

मत की जुगत के मुवाफ़िक़, अपने निज घर की तरफ़ उल्टाना ।

दूसरा—गुरु स्वरूप या मक़ामी स्वरूप का ध्यान करके मन और सुरत को ऊँचे देश में चलाना और ठहराना ।

तीसरा—परमार्थ और स्वार्थ में जीवों के साथ इस तरह बरताव करना जैसा कि यह शख़्स, अपने साथ, औरों से बर्ताव चाहता है ।

३—इन क़ायदों के मुवाफ़िक़ बर्ताव में जो विघ्न या दिक़्क़तें वाक़ै होती हैं, उनका थोड़ा सा ज़िक्र और हटाने का जतन आगे लिखा जाता है । उसका ख़्याल हर एक सच्चे परमार्थी को, जिस क़द्र बन सके, रखना, और उस जतन को काम में लाना मुनासिब है, क्योंकि जो इस क़द्र अहतियात और होशियारी नहीं की जावेगी, तो उन क़ायदों के मुवाफ़िक़ बर्ताव कम बनेगा और इस सबब से परमार्थी तरक़्क़ी में भी किसी क़द्र कसर पड़ेगी ।

४—पहले क़ायदे के मुवाफ़िक़ बर्ताव करने में यानी सुरत और मन की चढ़ाई में संसारी चाहें और तरंगें और इन्द्रियाँ विघ्न डालती हैं, यानी ये सुरत की धार को सिमटने और ऊपर की तरफ़ को चढ़ने से रोकती हैं, क्योंकि जब धार का रुख़ इन्द्रियों के द्वारे बाहर पदार्थों में या देह में नीचे की तरफ़ हुआ, तब उस का मुख ऊपर की तरफ़

मोड़ना और चढ़ाना मुश्किल होगा। इस वास्ते अभ्यासी को मुनासिब है कि आम तौर पर ज़रूरत के मुवाफ़िक़ बाहरमुख कामों और पदार्थों में बर्ताव करे और ख़ास तौर पर वक़्त अभ्यास के, मन और इन्द्रियों को रोक कर और सुरत की धार को समेट कर, अपने अन्तर में ऊँचे की तरफ़ आहिस्ता २ चलाने की आदत करे। जो इस तौर पर कार्रवाई की जावेगी, तो थोड़ा-बहुत रस और आनन्द सिमटाव और चढ़ाई का, मिलेगा और फिर इसी तरह कार्रवाई जारी रखने और उसको आहिस्ता २ बढ़ाने से ज़्यादा रस मिलेगा और देह और दुनिया की तरफ़ से किसी क़दर हटाव होता जावेगा।

५—और जो इस कार्रवाई में मन और इन्द्रियाँ संसारी तरंगें उठा कर ख़लल डालेंगी तो यकसाँ रस नहीं मिलेगा, यानी अभ्यास में कभी आनन्द और कभी रूखा-फीकापन रहेगा और उसी क़दर सुरत की चाल भी निज घर की तरफ़ सुस्त रहेगी।

६—जो कोई अपने मन और इन्द्रियों की हर वक़्त निगहबानी और चौकीदारी करता रहेगा और फ़िज़ूल तरंगों और ख़्वाहिशों को उठने से रोकता रहेगा, तो वह अभ्यास के समय भी उनकी थोड़ी-बहुत सम्हाल कर सकेगा, नहीं तो अभ्यास के वक़्त अनेक तरह के ख़्याल और

गुनावन पैदा होंगे और अभ्यासी को उनकी ख़बर भी नहीं होगी, यानी मन उसका बजाय भजन और ध्यान के, अनेक ख़्यालों में बहता रहेगा। इस वास्ते मुनासिब और लाज़िम है कि जिस क़द्र बन सके, अभ्यास के वक़्त मन और इन्द्रियों की रोक और सम्हाल ज़रूर की जावे, ताकि थोड़ा-बहुत रस भजन और ध्यान का मिलता रहे और फिर उस में आहिस्ता २ तरक़्क़ी भी होती जावे।

७—दूसरे क़ायदे के बर्ताव में इस क़द्र अहतियात चाहिये कि वक़्त ध्यान और भजन के, पहले स्वरूप का ख़्याल करके उसको अपने सनमुख रक्खे, तो मन और इन्द्रिय जो कि स्वरूप में लगने की आदत रखते हैं, किसी क़द्र निश्चल होकर स्थान पर ठहरेंगे या शब्द में लग जावेंगे, और उस वक़्त दूसरी सूरतों का ख़्याल कम आवेगा और शब्द भी साफ़ सुनाई देगा। और जो स्वरूप को संग नहीं लिया जावेगा तो अपने स्वभाव के मुवाफ़िक़ मन और इन्द्रिय अनेक ख़्याल यानी गुनावन में अक्सर चंचल रहेंगे।

८—जब कि ध्यान के वक़्त थोड़ा-बहुत स्वरूप नज़र आ जावेगा या भजन के वक़्त शब्द साफ़ सुनाई देगा तो मन और सुरत उसमें बे-तकल्लुफ़ लग जावेंगे, और दूसरा ख़्याल नहीं उठावेंगे। लेकिन जिस वक़्त कि गुनावन का ज़ोर होगा, उस वक़्त स्वरूप को थोड़ा ज़ोर देकर

ख़्याल से सन्मुख रखने में गुनावन हट जावेगी । और जो गुनावन कम न होवे, तो किसी शब्द के प्रेम की भरी हुई कड़ियों के स्वरूप के सन्मुख गाने या बतौर आरती के पाठ करने से बहुत फ़ायदा होगा ।

९—गुरु स्वरूप के ध्यान की और उसको सन्मुख रखने की महिमा इस सबब से ज़्यादा है कि उसका ख़्याल करते ही मन और इन्द्रिय परमार्थी यानी प्रेम के घाट पर आ जावेंगे, और तब भजन और ध्यान का रस ज़्यादा मिलेगा और गुनावन बहुत कम पैदा होगी । लेकिन यह बात जब दुरुस्त बनेगी जब कि अभ्यासी को गुरु स्वरूप में गहरा परमार्थी भाव और प्यार होगा । इसी सबब से राधास्वामी दयाल ने अपनी बानी और बचन में गुरु भक्ति पर ज़्यादा ज़ोर दिया है यानी प्रथम गुरु चरणन में प्रेम पैदा करने के वास्ते ज़ोर देकर हिदायत की है ।

१०—मालूम होवे कि बग़ैर तीव्र बैराग के, संसार और भोगों की तरफ़ से, और बग़ैर गहरे प्रेम और अनुराग के, राधास्वामी दयाल के चरणों में मन और सुरत, शब्द में, जैसा कि चाहिये, नहीं लग सकते, और वक़्त भजन के गुनावन और तरंगें बहुत उठती रहेंगी । लेकिन जो अभ्यासी को गुरु स्वरूप में भाव और प्यार है तो उसको अगुवा यानी ख़्याल से सन्मुख रखने से, मन किसी क़दर निश्चल हो

सकता है, क्योंकि साकार स्वरूप में प्यार करने की उसको आदत है और गुरु स्वरूप के सन्मुख होने पर उसके मन और इन्द्रिय, दर्शन और बचन में लग कर फ़ौरन परमार्थी घाट पर आ जाते हैं और संसारी ख़्याल हट जाते हैं, और दूसरा फ़ायदा यह है कि गुरु स्वरूप को संग लेने में अभ्यासी को, मिस्ल मक़ामी स्वरूप के, स्थान २ पर उसको बदलने की ज़रूरत न होगी यानी वही गुरु स्वरूप उसको सत्तलोक तक (जहाँ तक कि साकार रचना है) दर्जे-ब-दर्जे सूक्ष्म होता हुआ पहुँचा देगा, और अभ्यासी का भी स्वरूप इसी तरह बदलता जावेगा ।

११–जो कोई मक़ामी स्वरूप के आसरे चलेगा तो उसको भी यही फ़ायदा हासिल हो सकता है, बशर्ते कि वह स्थान स्थान पर थोड़ा-बहुत प्रगट होता जावे और जो प्रगट होने में कुछ देरी हुई या कसर रही, तो उस रूप में ख़्याल से ध्यान करने में वैसा प्यार नहीं आवेगा, जैसा कि गुरु स्वरूप में आ सकता है, और इस सबब से गुनावन यानी मन की चंचलता जल्दी कम या दूर न होवेगी और रस भी कम आवेगा । अब अभ्यासी को चाहिए कि अपने शौक़ और हालत को परख कर, जिस तरह उसको फ़ायदा ज़्यादा मालूम पड़े, उसी तरह अपने ध्यान की सम्हाल करे, क्यों-कि बग़ैर ध्यान के, मन और सुरत का सिमटाव, जैसा कि

चाहिये, जल्दी न होवेगा। अलबत्ता जिस किसी को शब्द खुल जावे, उसको इस क़द्र ज़रूरत ध्यान पर ज़ोर देने की नहीं होगी। लेकिन ऐसा हाल कुल्ल अभ्यासियों का नहीं हो सकता, किसी बिरले उत्तम अधिकारी की ऐसी हालत होवेगी। इस वास्ते कुल्ल अभ्यासियों को, अव्वल, ध्यान पर ज़्यादा ज़ोर देना मुनासिब और ज़रूर है।

१२—मालूम होवे कि गुरु स्वरूप का दर्शन ऊँचे के मक़ाम पर खिंच कर होता है और मुवाफ़िक़ और दुनिया की सूरतों के जब ख़्याल करो उस वक़्त यह स्वरूप प्रगट नहीं हो सकता। यह स्वरूप, अंतरजामी पुरुष, आप दया करके, अपने भक्त की प्रीति और प्रतीत बढ़ाने के वास्ते धारण करता है और ऊँचे देश में प्रगट होकर दर्शन देता है। इसी सबब से अक्सर इस स्वरूप का दर्शन स्वप्न-अवस्था में जबकि मन और सुरत का ज़्यादा खिंचाव हो जाता है, होता है, और अभ्यास के वक़्त कभी २ ऐसी दया होती है। इस वास्ते अभ्यासी को जब कभी गुरू स्वरूप का दर्शन अभ्यास के वक़्त या स्वप्न-अवस्था में होवे, तो उसको ख़ास मालिक की समझना चाहिये और उसी स्वरूप को चित्त में धारण करके अभ्यास के वक़्त उस का ध्यान करना चाहिये।

१३—तीसरे क़ायदे के मुवाफ़िक़ बर्ताव करने से अभ्यासी प्रेमी को, उसकी परमार्थी कार्रवाई और संसारी

व्यवहार में बहुत फ़ायदा हासिल होवेगा, यानी उसके हाथ से किसी को किसी क़िस्म की तकलीफ़ या दुख नहीं पहुँचेगा। और जो कि परमार्थियों को हिदायत है कि जहाँ तक बन सके या मुनासिब होवे, परमार्थी जीवों के साथ दीनता और प्यार और दया भाव के साथ बर्ताव करें। और आम जीवों के साथ दया भाव रक्खें, तो इस तरह बर्ताव करने से, सब की प्रसन्नता हासिल होगी, और मालिक भी प्रसन्न होकर भक्ति और प्रेम की बख़्शायश करेगा और दिन २ हालत बदलती जावेगी और झगड़े-रगड़े और ईर्षा और विरोध वग़ैरा परमार्थी की कार्रवाई में विघ्न नहीं डालेंगे, और हृदय उस का दिन २ शुद्ध और कोमल होता जावेगा और मालिक के चरणों के प्रेम से भरता जावेगा।

१४—जो परमार्थी का धन का भी थोड़ा नुक़सान हो जावे और झगड़ा-रगड़ा और विरोध हट जावे तो ऐसे नुकसान की बरदाश्त करना मुनासिब है और सख़्त-सुस्त और तान के बचन को सहना और क्षमा कर के एवज़ न लेने में परमार्थी का ज़्यादा फ़ायदा है, ब-निस्बत इसके कि ओछे और क्रोधी आदमियों से मुक़ाबिला करना और तकरार बढ़ाना। ख़ुलासा यह कि परमार्थी को इस बात की अहतियात ज़रूर चाहिये कि उसका मन संसारी मुआमलों के सबब से चिन्ता में न पड़े और गदला और

मैला न होवे, और भजन में इस क़िस्म के ख़्याल विघ्न न डालें, नहीं तो उसके रस और आनन्द में भी फ़र्क पड़ेगा और यह हर्जा ब-निस्बत और छोटे नुकसान या ज़रा सी मन की तकलीफ़ के, बहुत भारी है। और उसका बचाव हर हालत में जहाँ तक मुमकिन होवे और मुनासिब मालूम पड़े, ज़रूर करना चाहिये।

बचन १६

सतसंगियों को मौज और रज़ा पर क़ायम होना चाहिये और दुख-सुख की हालत में भरोसा दया का रख कर परमार्थ में ढीले और रूखे-फीके नहीं होना चाहिये।

१—कुल्ल मतों में जो संसार में जारी हैं और राधास्वामी मत में खास कर, हुक्म है कि जहाँ तक मुमकिन होवे, सच्चे परमार्थी को मुनासिब और लाज़िम है कि अपने प्रीतम कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की मौज के साथ हर काम में मुआफ़िकत करे, यानी जो वे अपनी मौज से करें, चाहे उस में सुख होवे या दुख, उस को मंज़ूर और क़ुबूल करे और सुख के वक़्त मन में फूले नहीं, और अपने मालिक को भूल न जाय, और दुख के वक़्त दुख का रूप न बन जावे, और अपने मालिक से नाराज़ या रूखा-

फीका न हो जावे। दोनों हालतों में ऐसी समझ क़ायम रक्खे कि जो कुछ होता है, वह मालिक की मौज से होता है और उसमें मसलहत और फ़ायदा है, क्योंकि जब मालिक को अपना सच्चा पिता और हितकारी और सर्व-समर्थ माना, तब बग़ैर उनकी मौज के कुछ नहीं हो सकता और जो मौज कि वे करेंगे, वह अपने बालक के वास्ते ज़रूर फ़ायदेमंद होगी, चाहे उसका नतीजा जल्द मालूम पड़े या देर से, और उस में, पहिले, परमार्थी फ़ायदे पर नज़र होगी, और फिर दुनिया के फ़ायदे पर।

२—जिस किसी से कि मौज के साथ मुआफ़िक़त बिल्कुल नहीं की जा सकती है, तो जानना चाहिये कि वह शख़्स निपट दुनियादार और कर्मी है और उस का मन अपने तन और इन्द्रियों में, और भी कुटुम्ब-परिवार और दुनिया के सामान और भोग-बिलास में, बँधा और फँसा हुआ है और जब किसी तरह का हर्ज या तकलीफ़ या नुक़सान इन में होता नज़र आता है, तब फ़ौरन बे-कली और घबराहट के साथ (उसकी बरदाश्त न कर के) पुकारने लगता है, और निहायत रंज मान कर और दुखी होकर उस का चित्त बिगड़ जाता है, और जिस-किसी के ताल्लुक़ का वह काम होवे, उसकी शिकायत करता है और भी मालिक से आज़ुर्दा-ख़ातिर होकर, उस की कार्रवाई

पर तान और तंज़ के बचन कहता है और कितने ही अर्से तक दुखी रह कर आख़िर को लाचारी के साथ सब्र करता है

३—लेकिन जो कि थोड़े-बहुत परमार्थी हैं और सच्चे मन से मालिक की भक्ति में शामिल हुए हैं और उसकी दया और मेहर हर दम माँगते रहते हैं और जो अंतर अभ्यास कि उनको संत अथवा राधास्वामी मत के मुआफ़िक़ बताया गया है, उस को भी नियम से करते हैं और कुछ २ आनन्द और रस भी अंतर में पाते हैं, पर अभी उनके मन में दुनिया और उस के भोगों और पदार्थों की क़द्र और चाह बनी हुई है, तो वे भी मौज के साथ जैसा चाहिये मुआफ़िक़त नहीं कर सकेंगे, और हरचंद वक़्त तकलीफ़ और रंज और नुक़सान के, चित्त उन का दुखी होवेगा और मालिक की तरफ़ से भी किसी क़द्र रूखा-फीका हो जावेगा, पर सतसंग के बचन याद करके और संतों की बानी पढ़ कर, थोड़ी-बहुत होशियारी आ जावेगी, और ऐसी समझ धारण करके कि मालिक सर्व समर्थ है और बग़ैर उसके हुक्म के, कुछ नहीं हो सकता, संतोष के घाट पर आजावेंगे और ज़्यादा पुकार और फ़रियाद और शिकवा और शिकायत और किसी को बुरा-भला कहना और मालिक से बेज़ार हो जाना, दुनियादारों की तरह से नहीं करेंगे ।

४—दूसरे दर्जे के परमार्थी जीव, सख़्ती और सुस्ती के वक़्त यानी तकलीफ़ और नुक़सान की हालत में, थोड़े दुखी हो कर, जल्द सतसंग के परमार्थी बचन याद लाकर और अपने अभ्यास में थोड़ा-बहुत मशग़ूल होकर शुकराने के घाट पर आजावेंगे, यानी ऐसी समझ धारण करके कि जो रंज और तकलीफ़ या हर्ज और नुक़सान वाक़े हुआ, वह न मालूम किस क़दर भारी था, सो मालिक की दया से बहुत कम यानी मन भर का सेर भर रह कर उन पर गुज़रा, और वह फल उनके पिछले कर्मों का था, सो उस दया का शुकराना अपने मालिक के चरणों में बजा लाकर, ब-दस्तूर अपनी भक्ति यानी प्रीति और प्रतीत चरणों में क़ायम रक्खेंगे और ज़्यादा तर तवज्जह भजन में करके और मालिक की दया और रक्षा की परख अपने अंतर में करके, सुखी हो जावेंगे और सुख के वक़्त भी होशियार रह कर मालिक का शुकराना करके, अभ्यास में ज़्यादा तवज्जह करेंगे।

५—इन जीवों के चित्त का बंधन संसार और उसके भोगों और पदार्थों में, ब-निस्बत ऊपर की क़िस्म के जीवों के, किसी क़दर हलका और ढीला होगा और उनकी क़दर भी ब-निस्बत परमार्थ के किसी क़दर कम होगी, यानी परमार्थ का भाव उनके दिल में ज़्यादा होगा।

६—अव्वल दर्जे के परमार्थी जीवों की प्रेम की हालत बहुत ज़बर होगी और उनके चित्त में संसार और उसके पदार्थों का बंधन भी बहुत कम होगा और उसके तरक़्क़ी की चाह भी बहुत कम होगी, सिर्फ़ इस क़दर कि जिस में औसत दरजे पर संसार में गुज़ारा हो जावे और परमार्थ का काम भी जारी रहे। और उनको शरण और भरोसा सच्चे मालिक की दया का बहुत मज़बूत होगा और उसकी मौज को अपने मन की चाह पर, जहाँ तक मुमकिन होगा, हमेशा मुक़द्दम रक्खेंगे यानी उनके चित्त में मालिक की मौज के साथ मुआफ़िक़त करने की मुख्यता रहेगी और उसके मुक़ाबिले में अपने मन की चाह को ज़बर नहीं क़रार देंगे और हर हालत में, चाहे दुख होवे या सुख, मालिक की दया के आसरे और भरोसे रह कर उस की बरदाश्त करेंगे। और वे किसी भी वक़्त मालिक की तरफ़ से बे-मुख नहीं होंगे यानी जो मौज होगी, उसको अपने हक़ में मुफ़ीद समझ कर शुक्र करते रहेंगे और ऐसी समझ अपने मन में रक्खेंगे कि जो कुछ कि तकलीफ़ या दुख होता है, वह अपने कर्मों का फल है, मगर उसके साथ मालिक की सहायता बराबर जारी है और उस दुख या तकलीफ़ का नतीजा भी उनके हक़ में बेहतर होगा यानी उस में कर्मों की सफ़ाई और मन और इन्द्रियों की गढ़त

और भजन की तरक़्क़ी होवेगी। यह हालत सच्ची और पूरी शरण वालों की है। जब किसी वक़्त किसी हालत की बरदाश्त कम होवेगी, तो वे उस वक़्त मालिक के चरणों में प्रार्थना, वास्ते हासिल होने ताक़त बरदाश्त के, करेंगे और ऐसी सूरत में उनकी दुआ भी जल्द मंज़ूर होगी यानी अन्तर में किसी क़दर सहायता और शान्ति मालूम होवेगी।

७—इससे ज़्यादा दर्जे के जो परमार्थी हैं, वे साध होंगे जिनकी पहुँच दसवें द्वार तक है। और जो कि वे पिंड और ब्रह्मांड के ऊपर पहुँचे हैं, उनको कोई दुख-सुख देह और दुनिया का नहीं छू सक़ता है। वे हर हाल में रज़ा के दर्जे पर बर्तेंगे यानी सर्व अंग करके मालिक की मौज के साथ मुआफ़िक़त करेंगे। उन के कर्मों का हिसाब कुछ नहीं रहा और पिंडी और ब्रह्मांडी मन और माया भी नीचे रह गये। उन की रहनी और कुल्ल बर्ताव मौज के अनुसार समझना चाहिये। सिवाय जीवों के हित और उपकार के, और कार्रवाई दुनिया की, उन से कम या बिल्कुल नहीं बन पड़ेगा।

८—अब मालूम होवे कि जो कुछ सख़्ती या तकलीफ़ सच्चे परमार्थियों पर गुज़रती है, वह बग़ैर हुकम और मौज सच्चे मालिक के नहीं आती। और सच्चे परमार्थी से

मतलब यह है कि जिसके हृदय में सच्ची चाह सच्चे मालिक के धाम में पहुँचने को है और जिसने सच्ची शरण राधास्वामी दयाल की धारण की है। सो ऐसी सख़्ती और तकलीफ़ के भेजने में, इन में से कोई न कोई मतलब ज़रूर होगा।—(१) पिछले बाक़ी-माँदा यानी शेष कर्मों का काटना, (२) तन मन और इन्द्रियों को गढ़त करना कि जिससे सुरत की चढ़ाई आसान और तेज़ होवे, (३) झीना मान और अहंकार दूर करना, (४) मन की कसरें और भूल-चूक का दूर करना, (५) भोगों से हटाना और उन में स्वाभाविक झुकाव और प्यार का दूर करना, (६) संसार और उस के पदार्थों की तरफ़ से चित्त में उदासीनता लाना, (७) हर तरह से और हर हालत में आसरा और भरोसा मालिक की दया का मज़बूत करना, और उसी तरफ़ से सहायता की आस रखनी और माँगनी, (८) बढ़ाना प्रीति और प्रतीत का मालिक के चरणों में और तरक़्क़ी देना शौक़ का, वास्ते प्राप्ति दर्शन और पहुँचने निज धाम के, (९) तोड़ना कुल्ल संसारी आसरे और भरोसे और बल का, अन्तर में, (१०) ढीला करना प्रीति और बन्धन का कुटम्ब-परिवार और संसारी लोगों में।

९—अब ख़्याल करो कि ऐसी सख़्ती या तकलीफ़ या कुछ दुनिया के नुक़सान को, कि जिस में ऊपर के लिखे

हुए फ़ायदे हासिल होवें, ऐन दया मालिक की समझना चाहिये, न कि उस की तरफ़ बे-रहमी (निरदईपन) और सख़्त-गीरी (कठोरता) का इल्ज़ाम लगा कर उसके चरणों से बे-मुख होना और अपनी शरण और प्रीति-प्रतीत में ख़लल और विघ्न डाल कर रूखे-फीके हो जाना।

१०—सच्चे परमार्थी को मुनासिब नहीं है कि मालिक को सर्व समर्थ जान कर ऐसी आशा बाँधे कि जितने काम और चाहें दुनिया की उस के दिल में होवें, वे सब मुवाफ़िक़ उसकी ख़्वाहिश के पूरे हो जावें, और नहीं तो मालिक की दयालुता और समर्थता में कसर है। ऐसी समझ निहायत मूर्खता और नादानी, भक्ति के क़ायदे की, ज़ाहिर करती है।

११—सच्चे परमार्थी को जानना चाहिये कि जब वह सच्चे मालिक की शरण में आया और असली मतलब उस का यह है कि जैसे बने तैसे अपने मालिक के धाम में पहुँच कर और उसका दर्शन हासिल कर के, परम आनन्द को प्राप्त होवे तो वह मालिक उस की दरख़्वास्त को वास्ते प्राप्ति ऐसे सामान और तरक़्क़ी दुनिया और उसके भोग-बिलास के, कि जो उसके चलने और रास्ता तै करने में विघ्न डाले और रोक लगावे, कैसे मंज़ूर कर सक्ता है? क्योंकि ऐसा सामान उस को देना उसके साथ दुश्मनी

करना है यानी उसके परमार्थी काम में ख़लल डालना है। मालिक का दर्शन बग़ैर हटने के, दुनिया और उसके भोगों से, किसी तरह नहीं मिल सकता। तो जबकि मालिक सच्चे परमार्थी पर दया करेगा, तो उसके मन को आहिस्ता २ दुनिया और उसके सामान से हटावेगा, न कि और ज़्यादा सामान देकर उसमें फँसावे और उसकी ख़लासी और ज़्यादा मुश्किल कर देवे।

१२—इस वास्ते सच्चे परमार्थियों को चाहिए कि सिवाय ज़रूरी सामान के, जो लायक़ औसत दर्जे के गुज़ारे के होवे, और कुछ मालिक से न माँगें और उससे उसी को चाहें, यानी दर्शन और निज धाम के प्राप्ति की चाह हर हालत में ज़बर और मुक़द्दम रक्खें। और जब कोई हालत इस क़िस्म की आवे कि जो उनके मन के बरख़िलाफ़ होवे, उसको मालिक की दया का आसरा और भरोसा रख कर जहाँ तक बने, बरदाश्त करें। और जो उस में ज़्यादा घबराहट या बे-कली पैदा होवे, तो अपने अंतर में चरणों की तरफ़ तवज्जह कर के, सहायता और ताक़त बरदाश्त की, माँगें और शिकवा और शिकायत न करें।

१३—यह क़ायदा सच्ची भक्ति का है। यानी भक्त को जहाँ तक बन सके, अपने भगवंत की मर्ज़ी और मौज पर क़ायम रहना चाहिए और जो वह इसके वास्ते पसंद करे,

वही इसको भी पसंद करना चाहिए और अपनी ख़्वाहिश बर-ख़िलाफ़ उसकी मौज के पेश नहीं करना चाहिए। लेकिन जो मन न माने तो अपने हाल और ख़्वाहिश को वक़्त अभ्यास के, चरणों में अर्ज़ कर देना मुनासिब है। आइन्दा भगवंत यानी मालिक की मौज है कि जो मुनासिब होवे, तो मंज़ूर करे, और जो ना-मुनासिब समझ कर मंज़ूर न करे, तो भक्त को चाहिए कि मौज के साथ, जैसे बने, तैसे मुआफ़िक़त करे।

१४—अब मालूम होवे कि परमेश्वर यानी त्रिलोकी-नाथ ने भी कहा है कि जो कोई मेरी भक्ति करता है, उसको मैं तीन चीज़ें देकर दुनिया और उसके भोग और उसकी मुहब्बत से बचाता हूँ। और वे तीन चीज़ें ये हैं—(१) थोड़ी बीमारी, (२) निंदा और निरादर संसारियों की तरफ़ से, (३) निर्धनता यानी सिर्फ़ गुज़ारे के मुआफ़िक़ धन और सामान देना। और उन भक्तों ने इन चीज़ों को परमेश्वर की दात और दया समझ कर ख़ुशी से मंज़ूर और क़ुबूल किया।

१५—पिछले वक़्तों में जो गुरू हुए, वे अक्सर गृहस्थियों को उपदेश नहीं देते थे और पहिली शर्त उन की यही होती थी कि घर और कार-बार छोड़ कर उन के पास आवे और नज़दीक रह कर सेवा करे। और औरतों को बिल्कुल उपदेश नहीं देते थे और अभ्यास भी उनका ऐसा कठिन और

ख़तरनाक था कि हर एक जीव से उसका बन पड़ना मुशकिल, बल्कि ना-मुमकिन था ।

१६—बर-ख़िलाफ़ इस के, अब इस ज़माने में कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल ने ऐसी दया फ़रमाई कि गृहस्थियों को, चाहे औरत होवे या मर्द, बिला छुड़ाने घर-बार और रोज़गार के, सहज जुगत, वास्ते उन के सच्चे उद्धार के, समझाते हैं और गृस्थ में ही उन से अभ्यास करा के, उन के जीव का कल्यान करते हैं और सब तरह से अपने सेवकों की परमार्थ और स्वार्थ में रक्षा करते हैं ।

१७—अब बा-वजूद ऐसी मेहर और दया के, जिससे परमार्थ की सच्ची कार्रवाई बहुत आसान हो गई है, जो जीव संसार के सामान की ज़्यादा तलबी करें और उस के न मिलने या थोड़ी सी सख़्ती और तकलीफ़ या नुक़सान में घबराकर, मालिक की तरफ़ से रूखे-फीके हो जावें या परमार्थ के छोड़ने को तैयार होवें, तो किस क़दर अफ़सोस का मक़ाम है और कैसी उनकी नादानी और ग़फ़लत और अभागता है और परमार्थ की क़दर और चाह की किस क़दर कमी उनके दिल में मालूम होती है ?

१८—अब राधास्वामी दयाल की ख़ास और विशेष दया का हाल बयान किया जाता है कि इस ज़माने में जीवों को निहायत निबल और दुखी देख कर, बजाय सेवक-स्वामी

के, पिता-पुत्र का भाव परमार्थ में जारी फ़रमाया, और जीवों को हुक्म दिया कि जैसे बने तैसे थोड़ी-बहुत लगन और प्रीति चरणों में लगाओ और सतसंग करके और बानी और बचन पढ़ कर, जैसे बने, तैसे, प्रतीत, कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और उनके सुरत-शब्द मार्ग की, हृदय में बसा कर, जिस क़दर बन सके नियम के साथ दो बार, जितनी देर मुमकिन होवे, अभ्यास करो और अपनी उमंग के मुआफ़िक़ जिस क़दर आसानी से बन सके तन-मन-धन की कुछ सेवा करो और जैसी-तैसी शरण लेकर राधास्वमी दयाल की दया का भरोसा, वास्ते अपने जीव के उद्धार के, मन में रक्खो और जहाँ तक बन सके जीवों को मन, बचन और कर्म करके सुख पहुँचाओ, और नहीं तो अपने मतलब के वास्ते किसी को दुख मत दो। जो इस हुक्म के मुआफ़िक़ कार्रवाई करेगा तो राधास्वामी दयाल अपनी मेहर से उस के जीव का कारज आप बनावेंगे और तीन या चार जन्म में उसको दयाल देश में पहुँचा देंगे और उसकी भूल-चूक और कसरों को दया करके पिता की तरह माफ़ करेंगे और उस के पिछले-अगले कर्मों को सहज २ काट कर, काल और कर्म के घेरे से निकाल लेवेंगे। और कर्मों के काटते वक़्त भी दया और सहायता बराबर जारी रहती है।

१६—इस ज़माने के जीवों से, सिवाय उत्तम अधिकारी यानी अव्वल दर्जे के भक्तों के, भक्ति के क़ायदे के मुवाफ़िक़ बर्ताव करना और रहनी दुरुस्ती के साथ रहना, मुश्किल है। इस वास्ते राधास्वामी दयाल, जहाँ तक मुमकिन होता है, बहुत सख़्त तकलीफ़ या मुसीबत अपने सच्चे और प्रेमी भक्तों पर नहीं आने देते हैं, और जो उनके कर्म या करनी ज़्यादा नाक़िस हैं और उनके फल का भोग भी ज़्यादा सख़्त है, तो भी थोड़ी-बहुत ख़ास दया और सहायता फ़रमाते हैं यानी या तो किसी न किसी तरह उस कर्म भोग की सख़्ती कम कर देते हैं या ताक़त और सामान उसके बरदाश्त का बख़्शते हैं, और जब २ जो कोई दर्द की हालत में सच्ची पुकार करे, उसकी थोड़ी-बहुत सुनवाई भी होती है। ख़ुलासा यह है कि इस समय में हर तरह से दया और प्यार करना जीवों पर मंज़ूर है, बशर्ते कि वे चरणों में थोड़ी-बहुत प्रीति व प्रतीत लावें और दिन २ अपने परमार्थ के बढ़ाने की थोड़ी-बहुत चाह रखते होवें और दुनिया के लोगों की निंदा-स्तुति पर ख़्याल न करके, अपना रिश्ता राधास्वामी दयाल और उनकी संगत से जोड़े रहें, और चाहे कभी रूखे-फीके या ढीले हो जावें, लेकिन अपना नाता न तोड़ें यानी परमार्थी कार्रवाई, मिस्ल अभ्यास वग़ैरा के, छोड़ न देवें और सतसंग से मेल ब-दस्तूर जारी

रक्खें। ऐसे जीवों का जो पूरा २ बर्ताव मुआफ़िक़ भक्ति के क़ायदों के नहीं भी होगा यानी उसमें कुछ २ कसर रहेगी तो भी राधास्वामी दयाल उनकी सहायता करेंगे और अपनी दया का बल देकर जिस क़दर कार्रवाई ज़रूरी और मुनासिब होगी, उन से करावेंगे और भूल-चूक और कसरों पर नज़र नहीं करेंगे।

२०—अब कुल्ल जीवों को चाहिए कि ऐसी दया और मेहर का शुकराना अपने मन में लाकर, जैसे बने तैसे, राधास्वामी दयाल की शरण में आवें और सुरत-शब्द मार्ग का उपदेश लेकर और राधास्वामी मत के उसूल और क़ायदों को अच्छी तरह समझ कर, जिस क़दर बन सके, अभ्यास नियम से हर रोज़ करें, तो चन्द रोज़ में दया और मेहर की परख उनको आती जावेगी और अपने सच्चे उद्धार का सबूत अपने अन्तर में उनको इसी ज़िन्दगी में थोड़ा-बहुत मिलता जावेगा कि जिससे उनकी प्रीति और प्रतीत चरणों में दिन २ बढ़ती जावेगी और रफ़्ता २ एक दिन उनके जीव का पूरा कारज बन जावेगा।

बचन १७

वर्णन सच्चे प्रेमी और परमार्थियों की हालत और रहनी और पकड़ और व्यवहार का, और यह कि ऐसी हालत और रहनी कैसे आवे।

पहला भाग

वर्णन हाल और रहनी वग़ैरा सच्चे प्रेमियों की

१—जो सच्चे प्रेमी राधास्वामी मत में शामिल हैं, उनकी हालत ऐसी होनी चाहिए कि हमेशा चित्त में अपने प्रीतम राधास्वामी दयाल के चरणों का, और भी सतगुरु के स्वरूप का, ख़्याल बना रहे और मन में उमंग, वास्ते दर्शनों के, अकसर उठती रहे और दर्शनों के न मिलने से किसी क़दर बे-कली रहे।

२—जब मौज से दर्शन प्राप्त होवें तो सर्व-अंग कर के मन और चित्त मगन हो जावें और किसी दूसरे काम और बात की उस वक़्त सुध न रहे, और यही चित्त चाहता रहे कि बराबर दर्शन करते रहें और बचन सुन कर खिलते रहें और उस वक़्त देही के कारज का भी ख़्याल बहुत कम, बल्कि बिल्कुल न रहे और प्यार और भाव चरणों में बढ़ता रहे।

३—ऐसे प्रेमी दूसरे सच्चे प्रेमियों को देख कर और उनसे मिल कर बहुत खुश होंगे और आपस में उन के प्यार भाव ऐसा ही होगा कि जैसे निज कुटुम्बियों में होता है ।

४—और कुल्ल परमार्थी जो सतसंग और अभ्यास में शामिल होवें, उन प्रेमियों को प्यारे लगेंगे और उन सब के साथ उनका बर्ताव ऐसा होगा, जैसे कि कोई अपने बिरादरी के लोगों के साथ बर्तता है ।

५—और जो लोग कि थोड़ी बहुत परमार्थ की चाह लेकर या खोज की नज़र से सतसंग में आवें, उनको भी देख कर सच्चे प्रेमी खुश होंगे और जिस क़दर मुमकिन होगा, उनको उनकी परमार्थी कार्रवाई में मदद देने को तैयार रहेंगे ।

६—लेकिन जो कोई चतुराई या कपट की बातें सतसंग में आकर बनावेंगे या परख और जाँच सतगुरु और उनके मार्ग की करेंगे या अपनी समझ या अपना जुदा मत समझाने और पेश करने की नज़र से चर्चा करेंगे, या संत मत को ओछा साबित करने के इरादे से वाद-विवाद करेंगे, वे लोग सच्चे प्रेमियों को प्यारे नहीं लगेंगे, क्योंकि वे सच्चे ग्राहक परमार्थ के नहीं हैं, बल्कि वे सच्चे और पूरे परमार्थ के निन्दक और विरोधी हैं, और बजाय

सतसंग में प्रेम की चर्चा करने और सुनने के, अपनी ओछी समझ और चतुरई की बातें पक्षपात की नज़र से पेश करके सतसंग में विघ्न डालेंगे। सच्चे प्रेमी ऐसे लोगों को अभागी समझ कर उनसे मेल नहीं करेंगे और न उनका सतसंग में बार २ आना पसन्द करेंगे।

७—सच्चे प्रेमी आम तौर पर कुल्ल जीवों से दीनता और दया भाव के साथ बर्ताव करेंगे, लेकिन उन लोगों से जो कि निपट संसारी हैं या सच्चे परमार्थ के निन्दक और विरोधी हैं, दिल से मेल नहीं करेंगे, बल्कि उनसे दूर रहना चाहेंगे।

८—सच्चे प्रेमी ज़रूरी कारोबार अपने ग्रहस्थ और रोज़गार के करके, बाक़ी वक़्त अपना परमार्थी कार्रवाई यानी सतसंग और अभ्यास वग़ैरा में लगावेंगे और अपने प्रीयतम की याद और चिंतवन में लौलीन और मगन रहेंगे और जो किसी से बात-चीत भी करेंगे तो ख़ास कर परमार्थी, या उसमें परमार्थ की तरफ़ को झुकाव रहेगा।

९—संसारी व्यवहार में भी परमार्थी क़ायदे का उन को ख़्याल ज़्यादा रहेगा यानी जहाँ तक मुमकिन होगा, अपने मतलब के वास्ते किसी को तकलीफ़ या नुक़सान नहीं पहुँचावेंगे और जहाँ तक मुमकिन होगा, आप दूसरे के हाथ से थोड़े नुकसान की बरदाश्त करने को तैयार रहेंगे।

१०—सच्चे प्रेमी जहाँ तक मुमकिन होगा, किसी को तान या तंज़ का बचन नहीं कहेंगे, बल्कि आप ऐसे बचन दूसरों की ज़बान से सुन कर चुप्प हो रहेंगे।

११—निन्दकों की मलामत और बुराइयों पर उन को अजान और मूर्ख समझ कर नाराज़ नहीं होंगे और न उनको किसी किस्म की तकलीफ़ पहुँचाने का, निंदा को एवज़ में, इरादा करेंगे, बल्कि जो मुमकिन होगा, उनको सच्ची समझौती देकर निंदा करने से बचावेंगे, और जो वे बचन नहीं मानेंगे तो उनके साथ हठ नहीं करेंगे।

१२—सच्चे प्रेमी हमेशा दीनता और ग़रीबी के साथ गुज़रान करेंगे और किसी के झगड़े और बखेड़े के कामों में, बे-ज़रूरत ख़ास, नहीं शामिल होंगे और न किसी की बे-सबब और बिला ज़रूरत बुराई-भलाई करेंगे और जो किसी दो शख़्सों में तकरार या झगड़ा होगा तो जहाँ तक बनेगा, उनका आपस में तसफ़िया और मेल करावेंगे, और न तो किसी दो आदमियों को लड़ावेंगे और न उनकी लड़ाई में दख़ल और मदद देंगे।

१३—सच्चे प्रेमी, ग़रीब और मुहताज और दुखिया जीवों पर रहम करेंगे और जो मुमकिन होगा, तो उनकी थोड़ी-बहुत मदद करेंगे।

१४—दुनिया के व्यवहार और कामों में मन से लिप्त नहीं होंगे और न बहुत उनकी अपने मन में गुनावन करेंगे, बल्कि अपने मालिक की मौज और दया के आसरे, जैसा मुनासिब नज़र आवेगा, उस मुआफ़िक़ उन कामों को जल्द कर के फ़ारिग़ होने का इरादा रक्खेंगे।

१५—खान-पान और पहनने-ओढ़ने वग़ैरा में जहाँ तक मुमकिन होगा, अपनी इच्छा और पसन्द को दख़ल नहीं देंगे, बल्कि औरों की पसन्द और इच्छा के मुआ-फ़िक़ जो सामान बन जावेगा, उसी में राज़ी रहेंगे।

१६—अपने दिल से दुनिया की तरक़्क़ी और नाम-वरी और मान-बड़ाई की चाह नहीं उठावेंगे, लेकिन जो मालिक अपनी मौज से उन को सामान बख़्शेगा, उस में दीनता और डर के साथ, कि कहीं उन के परमार्थ में ख़लल न पड़े, बर्ताव करेंगे।

१७—उनके दिल में मज़बूत बन्धन किसी के साथ नहीं होगा, सिर्फ़ अपने प्रीयतम मालिक के चरणों की गहरी और मज़बूत पकड़ होगी, और भक्ति की रीति और क़ायदों की सम्हाल हर वक़्त तहे-दिल से करते रहेंगे, और आस और विश्वास अपने मालिक के चरणों में दृढ़ और मज़बूत रक्खेंगे।

१८—जहाँ तक मुमकिन होगा, किसी मुआमले में अपनी चाह को मुक़द्दम नहीं रक्खेंगे, बल्कि अपने प्रीयतम

कुल्ल-मालिक की मौज और दया को हर काम में ज़बर और अगुवा रक्खेंगे ।

१६—परमार्थ की तरक़्क़ी और और दर्शनों की प्राप्ति के वास्ते अलबत्ता बारम्बार बिन्ती और प्रार्थना करेंगे, पर इस में भी मौज और दया का आसरा मुक़द्दम रक्खेंगे और चाहे जैसी हालत बेकली और घबराहट और तड़प की, कभी २ उस पर गुज़रे, पर धीरज और विश्वास दृढ़ रख कर अपने प्रीयतम से कभी रूखे-फीके या आज़ुर्दा-ख़ातिर नहीं होंगे, और देर-अबेर में उसकी मौज की मसहलत को समझ कर, ज़्यादा और फ़िज़ूल घबराहट और जल्दी नहीं मचावेंगे ।

२०—सख़्ती और सुस्ती और संसारी रंज और दुख की, जहाँ तक बनेगा, अपने प्रीयतम की मौज और दया के आसरे बरदाश्त करेंगे, और हमेशा शुक्र के घाट पर क़ायम रहेंगे, और रज़ा के दर्जे के मुआफ़िक़ बर्तने के वास्ते कोशिश करते रहेंगे ।

२१—ऐसे सच्चे प्रेमियों की कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल, और भी सतगुरु को, ज़्यादा ख़ातिरदारी मंज़ूर रहती है, और सिवाय ऐसी हालत के, कि जिसमें उन का कोई ख़ास और भारी फ़ायदा परमार्थी मुतसव्वर होवे, वह कुल्ल-मालिक दयाल उनकी तकलीफ़ या दुख या रंज की बरदाश्त नहीं कर सकता है, और ऐसी ख़ास हालत में

भी फ़ौरन अन्तरी दया और सहायता उन पर फ़रमाता है कि जिससे वह दुख और तकलीफ़ उनको ज़्यादा न व्यापे, यानी हर तरह से उनकी दिलदारी, हर वक़्त, उनके सच्चे पिता कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल को मंज़ूर रहती है, जैसा कि इन कड़ियों में कहा है :—

दोहा

जीवत मितक हो रहो, तजो खलक की आस ।
रक्षक समरथ सतगुरू, मत दुख पावे दास ॥ १ ॥

मैं सेवक समरत्थ का, कभी न होय अकाज ।
पतिवर्ता नाँगी रहे, तो वाही पति को लाज ॥ २ ॥

२२—जिस किसी की ऐसी सच्ची और पूरी भक्ति है, उसको कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और सतगुरु का ख़ास प्यारा समझना चाहिये, क्योंकि मालिक को भक्ति प्यारी है और सिवाय निज भक्तों के, और कोई उसके महल में दख़ल नहीं पा सकता ।

२३—परमेश्वर यानी त्रिलोकी नाथ ने भी औतार स्वरूप से भक्ति और भक्त की निसबत अपना गहरा प्यार ज़ाहिर किया है, जैसा कि इन कड़ियों में लिखा है :—

चौपाई

भक्ति हीन बिरंच क्यों न होई।
सब जीवन सम प्रिय मम सोई ॥
भक्तिवंत जो नीचहु प्राणी।
प्राण से अधिक सो प्रिय मम जानी ॥

इसका अर्थ यह है कि जो ब्रह्मा भी है और उस में भक्ति यानी चरणों का प्रेम नहीं है, तो सब जीवों के समान मुझको प्यारा है, लेकिन जो कोई कैसा ही नीच हो और उसके मन में भक्ति यानी चरणों का प्रेम है, वह मुझ को अपने प्राणों से भी ज़्यादा प्यारा है।

२४—जो ग़ौर की नज़र से देखा जावे तो भक्ति (यानी दीनता, प्यार और सेवा) रचना में कुल्ल जीवों को, बल्कि जानवरों को भी और उन में खूंख्वार जानवरों तक, निहायत प्यारी है, और इन सब में वही सुरत कुल्ल-मालिक की अंश मौजूद है, तो फिर कुल्ल-मालिक को भी भक्ति प्यारी है। और हरचन्द वह किसी की दीनता और सेवाका मुहताज नहीं है, पर कोई जीव, बिना भक्ति यानी प्रेम के, उसके पास नहीं पहुँच सकता है और न बग़ैर प्रेम के उससे अभ्यास, रास्ता तै करने का, बन सकता है। इस वास्ते सिर्फ़ जीवों के कल्यान और फ़ायदे के लिये, भक्ति और प्रेम मार्ग, उस सच्चे कुल्ल-मालिक ने, निहायत दया

और प्यार से जारी फ़रमाया, कि जिस से जीव आसानी के साथ माया और काल के जाल से निकल कर, उसके निज धाम और चरणों में बासा पावें, और काल-क्लेश और जन्म-मरन के दुक्खों से बच कर, अमर और परम आनन्द को प्राप्त होवें।

२५–अब कुल्ल जीवों को जो कि सच्चा कल्याण और आनन्द चाहते हैं, लाज़िम है कि सच्चे कुल्ल-मालिक के चरणों में प्रेम प्रीति करें और सच्ची दीनता, वास्ते प्राप्ति उस के दर्शन के, चित्त में धारण करें, तो उन के जीव का कारज बनना मुमकिन है। किसी और तरह से हरगिज़ २ वे सच्चे मालिक के दरबार में नहीं पहुँच सक्ते।

२६—और भक्ति कुल्ल-मालिक सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल के चरणों में करना चाहिये, तब पूरा काम बनेगा। और जो और किसी की भक्ति करेंगे तो भी कार्रवाई वैसी ही करनी पड़ेगी, लेकिन सच्चा और पूरा कारज नहीं बनेगा, यानी काल और माया के घेरे से बाहर नहीं जावेंगे और इस वास्ते जन्म-मरन की फाँसी नहीं कटेगी, और बारम्बार देह धारण करके, दुख-सुख सहना पड़ेगा।

भाग दूसरा

वर्णन उस जुगत का कि जिससे ऊपर की लिखी हुई हालत और रहनी वग़ैरा हासिल होवे

२७—जो कोई दरियाफ़्त करे कि ऐसी हालत और रहनी जिसका ऊपर ज़िक्र हुआ, कैसे आवे, तो कहा जाता है कि पहिले तो जौहर यानी सच्चा शौक़ कुल्ल-मालिक से मिलने का जीव के दिल में पैदा होना चाहिये। और यह शौक़, सच्चे प्रेमी और सतगुरु के संग से पैदा हो सकता है। और इसी शौक़ की तरक़्क़ी जतन करके पूरा होने का नाम, सच्चा और पूरा परमार्थ है।

२८—अब मालूम होवे कि कुल्ल जीव भक्ति और प्रेम के क़ायदे और बर्ताव से बे-ख़बर हैं, यानी बालकपन से संसारी और ख़ुद-मतलबी यानी स्वार्थी लोगों का संग करके, उनकी तबिअत और स्वभाव और रहनी दुनियादारों के मुवाफ़िक होती है, और मालिक का भाव और प्यार और डर, और भी जीवों का हित, उनके मन में बहुत कम होता है। और जो कि परमार्थी रहनी और स्वभाव दुनियादारों के चाल-चलन के बर-ख़िलाफ़ है, इस वास्ते सच्चे परमार्थी का कुछ अर्सा चाहिये कि सतगुरु और प्रेमियों का संग और अंतर अभ्यास करके, अपनी

पुरानी आदत यानी संसारी स्वाभाव और चाल-चलन को बदले। और इसके वास्ते जो जतन कि संतों ने दया करके फ़रमाये हैं, वे आगे लिखे जाते हैं :—

(१) सतगुरु और प्रेमी जन का संग और उनके बचनों को होशियारी से सुनना और समझना, और जो २ अपने लायक़ होवें, उनकी कार्रवाई शुरू करना।

(२) कुल्ल-मालिक और सतगुरु और प्रेमियों में सच्चा प्यार मन में पैदा होना, और उनका सतसंग करके कुल्ल-मालिक के दर्शनों का शौक़, दिल में बढ़ते जाना।

(३) उपदेश लेकर अंतर में शौक़ के साथ स्वरूप का ध्यान और भजन यानी शब्द का अभ्यास करना और उसका थोड़ा-बहुत रस और आनन्द लेना।

(४) सतसंग के वचन सुन कर और बानी का पाठ करके, अपने मन की हालत और कसरों को जाँचना, और शरमाना और उनकी दुरस्ती और सम्हाल के वास्ते सच्चा इरादा और कोशिश करना।

(५) सच्चे प्रेमियों की रहनी और उनका हाल सुन कर और पढ़ कर और सतसंग में अपनी आँख से देख कर अपनी हालत और रहनी को, उसी के मुआफ़िक़, बदलने का सच्चा इरादा और कोशिश करना।

(६) जो २ नाक़िस और संसारी समझ और पकड़, अपने मन में, संसारियों के संग से बस गई हैं, उसको सतसंग के बचन विचार कर छोड़ना, और परमार्थी रीति और व्यवहार की समझ दृढ़ करना और उसके मुआफ़िक़ अपना बर्ताव दुरुस्त करना।

(७) जो २ आदत और स्वभाव, संसारियों के संग से, मन और इन्द्रियों के, पड़ गये हैं, उनको आहिस्ता आहिस्ता छोड़ना।

(८) जो २ फ़िज़ूल ख़्वाहिशें और तरंगें, दुनिया की तरक़्क़ी और ऐश और आराम की, मन में समा रही हैं, उनको सतसंग के बचन सुन कर और समझ कर मन से निकालना और आइन्दा वैसी तरंगों को न उठने देना।

(९) दूसरों के स्वभाव और बर्ताव और चाल, जो अपने तईं परमार्थी समझ लेकर बुरे और नाक़िस मालूम होवें, उनको अपने मन में परखना, और जो वैसी ही हालत या उसका बीजा अपने में मालूम पड़े तो उसको वैसा ही बुरा और नाक़िस समझ कर शरमाना और उसके दूर करने की कोशिश करना।

(१०) जब किसी से व्यवहार या काम पड़े तो पहिले मन में सोचना कि ऐसे काम में अपना मन दूसरे की तरफ़

से कैसा बर्ताव चाहता है और फिर जहाँ तक बने, दूसरों के साथ वैसा ही बर्ताव करना।

(११) जो बचन कि अपने तईं कड़वे और कठोर और तान और ईर्षा वग़ैरा के मालूम पड़ें, तो अहतियात करना कि उस क़िस्म के बचन आप दूसरे से न बोले, क्योंकि उसको भी, वे बचन वैसे ही कड़वे और कठोर और तान के मालूम होकर, उसका भी चित्त दुखी करेंगे।

(१२) किसी की ग़ीबत में यानी पीठ पीछे, बुराई न करना और न किसी दूसरे से सुनना और जो किसी अपने प्यारे को समझाना या सम्हालना मंजूर है, तो उसके सामने जो सच्चा हाल किसी की बुराई-भलाई का होवे (और उस शख़्स से अपने प्यारे को बचाना मुनासिब है) तो ऐसे हाल के कहने में दोष नहीं है।

(१३) किसी से ईर्षा या विरोध मन में न लाना, और जो कोई अपने साथ कुछ सख़्ती भी करे, तो उसको मालिक की मौज समझ कर, जहाँ तक बने, बरदाश्त करना, और उससे एवज़ लेने का इरादा न करना।

(१४) अपने मन और इन्द्रियों की, जहाँ तक बने, ऐसी सम्हाल रखने की कोशिश करना कि फ़िज़ूल जगह और भोगों और पदार्थों में न दौड़ें, और न पीछे उनकी ग़ुनावन और ख़्याल उठाना, नहीं तो अभ्यास में ख़लल पड़ेगा।

(१५) खान-पान वग़ैरा में अहतियात मुनासिब रखनी, और जहाँ तक मुमकिन होवे, भोगों की इच्छा न उठानी। अनिच्छित और मौज से जो प्राप्त होवे, उस में भी ना-मुनासिब और ना-जायज़ का विचार करके बर्तना।

(१६) दुनिया और उसके कुल्ल सामान को नाशमान और सच्चा संगी न समझ कर उसकी फ़िज़ूल चाह न उठानी, और जो सामान मौज से मुयस्सर आवे, उसका अपने मन में अहंकार न लाना, और दीनता और ग़रीबी हमेशा चित्त में रखनी।

(१७) दुनिया के अमीर और बड़े आदमियों से बे-ज़रूरत मिलने की आदत न करे।

(१८) ख़ुशामदी और स्तुति करने वालों की बातें चित्त देकर न सुने, और उनकी झूठी तारीफ़ पर अपने मन में न फूले, बल्कि उनको फ़ौरन ख़ुशामद और तारीफ़ की बातें बनाने से मना कर दे।

(१९) दुनियादारों और कपटी भक्तों से मेल कम करना, नहीं तो ये धोखा देकर भक्ति की रीति और उसके कामों में बर्ताव करने में कुछ न कुछ विघ्न डालेंगे।

(२०) भक्ति की कार्रवाई में नुमायश और दिखावे और अपनी तारीफ़ कराने की नज़र से कोई काम न करना, क्योंकि उसका फल बहुत ओछा है। मुनासिब यह

है कि जो काम करे, वह मालिक और सतगुरु की प्रसन्नता के लिये करे, कि उसमें भक्ति और प्रेम की तरक़्क़ी होगी ।

(२१) मन और माया के छल और लुभाव से राधास्वामी दयाल और सतगुरु का बल लेकर, जहाँ तक बने, होशियार रहना, क्योंकि साधना की अवस्था में यह अकसर विघ्न डालते हैं और कनक-कामिनी की चाट दिखा कर सच्चे अभ्यासी को रास्ते में रोकते हैं ।

(२२) जिस क़दर अपने से, बिला दिक़्क़त, बन सके, जीवों के हित और उपकार में मदद देना, लेकिन सतगुरु और प्रेमी जन की सेवा मुक़द्दम समझना यानी उसकी मुख्यता चित्त में रखना ।

(२३) प्रेमी और भक्त जन का, भक्ति के क़ायदों के मुआफ़िक़, कार्रवाई और सेवा वग़ैरा में, उमंग के साथ, संग देना और आप भी भक्ति की रीति में बर्तना ।

(२४) संसारी लोगों का डर और शर्म करके भक्ति की कार्रवाई नहीं छोड़ना ।

(२५) सतगुरु और प्रेमियों से, अन्तर और बाहर, सफ़ाई से बर्तना और कपट न करना ।

(२६) अपने परमार्थी की तरक़्क़ी की चिन्ता और फ़िक्र दिल में हमेशा रखना, और जिस कार्रवाई में फ़ायदा मालूम होवे, वही काम करना ।

(२७) मालिक की याद् दिल में, जिस क़द्र बन सके, बढ़ाना ।

(२८) कुल्ल-मालिक और सतगुरु की प्रसन्नता, जैसे मुमकिन होवे, हासिल करना और इस बात का दिल में ख़ौफ़ और ख़्याल रखना कि कोई काम ऐसा न बने कि जो उनकी मौज और मरज़ी और पसन्द् के बर-ख़िलाफ़ होवे ।

(२९) अभ्यास के वक़्त, जहाँ तक बने, कुल्ल-मालिक राधास्वामी द्याल और सतगुरु की द्या का बल लेकर संसारी ख़्यालों को मन में न आने द्ेना, और जो आवें तो उन को हटाना ।

(३०) वक़्तन-फ़वक़्तन, चरण-रस लेते रहना और अभ्यास, जितनी द्फ़े (चाहे थोड़ी देर हो) दिन-रात में बन सके, दुरुस्ती से करते रहना, यहाँ तक कि उसका किसी क़द्र आधार हो जावे ।

२९—इस दुनिया में भूल और भ्रम और ग़फ़लत का बड़ा ज़ोर है । इस सबब से ये जितने अंग कि ऊपर वर्णन किये गये, पढ़ कर या सुन कर किसी शख़्स में आसानी से नहीं आ सकते हैं, जब तक कि (१) चेत कर, अन्तर और बाहर, सतसंग न किया जावेगा और (२) जन्म-मरन और देहियों के साथ दुख-सुख भोगने का ख़ौफ़

मन में न आवेगा और (३) दुनिया और उसके सामान को नाशमान और मालिक यानी कुल्ल करतार की क़ुद्रत और कारीगरी को प्रगट देख कर, उसका खोज और उसके धाम में पहुँच कर उसके दर्शनों का शौक़ पैदा न होवेगा।

२०—जब ऐसा ख़ौफ़ और शौक़ पैदा होगा, तब सतगुरु और सतसंग की तलाश करके उसमें शामिल होगा, और बचनों को, चित्त से सुन कर और विचार कर, उनके मुआफ़िक़ कार्रवाई करने की हिम्मत और इरादा मज़बूत करेगा, तब अलबत्ता ये शुभ अंग आहिस्ता २ आते जावेंगे और विकारी और नाक़िस अंग, जो सच्चे परमार्थ के हासिल होने में विघ्न-कारक हैं, दूर होते जावेंगे।

२१—अब मालूम करना चाहिये कि बिन मेहर और दया कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के, ऐसा ख़ौफ़ और शौक़, जिसका ऊपर ज़िक्र लिखा गया, और खोज सतगुरु और सतसंग का, किसी के दिल में पैदा नहीं हो सकता। और जिसके दिल में ऐसा ख़ौफ़ और शौक और खोज, दुनिया के हालात और कारोबार पर नज़र करके और मौत का ख़्याल लाकर पैदा हुआ उसी को मेहरी और संस्कारी और अधिकारी समझना चाहिये, और उसी से सच्चे परमार्थ की कार्रवाई दुरुस्ती से बन पड़ेगी, और वही शख़्स दुनिया के रस्मी और झूठे परमार्थ से सच्ची नफ़रत करेगा।

३२—जिस मेहर और दया का ज़िक्र ऊपर हुआ, यह प्रथम दर्जे यानी शुरू की समझना चाहिये। और वही मेहर और दया ऐसे शौक़ीन जीव को सतगुरु और सतसंग से मिला देगी, और वही मेहर और दया उसकी परमार्थी कार्रवाई के साथ दिन २ बढ़ती जावेगी, यानी वह शख़्स दया के बल से शुभ अंगों को ग्रहण करता जावेगा और नाक़िस और विकारी अंगों को आहिस्ता २ छोड़ता जावेगा, और अन्तर में अभ्यास करके उसको रस और आनन्द मिलता जावेगा, और इस तरह उसकी ताक़त और परमार्थी शौक़ और भक्ति की कार्रवाई दिन २ बढ़ती जावेगी, और फिर उसी का नाम सच्चा प्रेमी समझना चाहिये।

३३—ऐसे पूरे अधिकारी और प्रेमी जीव के दिल में, तेज़ खटक, अपने सच्चे उद्धार और प्राप्ति दर्शन कुल्ल-मालिक की, पैदा होगी और दिन २ ज़्यादा तेज़ होती जावेगी। और उसके साथ वैराग और अनुराग भी उसके चित्त में बढ़ते और पकते जावेंगे और राधास्वामी दयाल के चरणों की शरण भी गहरी और मज़बूत होती जावेगी। और फिर ऐसे प्रेमी पर राधास्वामी दयाल ख़ास दया फ़रमा कर उसकी सुरत को अन्तर में चढ़ावेंगे और माया और काल के घेर से निकाल कर, रफ़्ता २ एक दिन धुर मक़ाम में पहुँचा कर, उसका कारज पूरा कर

देंगे यानी अपने दर्शनों का परम आनन्द और विलास बख़्शेंगे।

३४—मालूम होवे कि जो कोई इस बचन को पढ़ कर या सुन कर ऐसा ख़्याल करेगा कि बग़ैर दया के कुछ नहीं हो सकता है और इस वास्ते मुझ को कुछ करना ज़रूर नहीं है, जो कुछ करनी दरकार होगी वह दया आप करा लेगी, तो ऐसी समझ धारण करने वाले पर, दया किसी तरह से नहीं आवेगी, और वह आलसियों और काहिलों में शुमार किया जावेगा।

३५—इस वास्ते सब जीवों को मुनासिब और लाज़िम है कि दुनिया का हाल ग़ौर से देख कर, थोड़ा-बहुत ख़ौफ़ और शौक़ मन में लाकर, तलाश सतगुरु और सतसंग की, इस नज़र से कि उनको पता और भेद कुल्ल-मालिक और उसके निज धाम का, जहाँ हमेशा का सुख और आनन्द प्राप्त होवे और दुक्खों से क़तई बचाव हो जावे, करें। और जब वे मिल जावें तब उन के बचन सुनकर और उपदेश लेकर, उनकी हिदायत के मुआफ़िक़, शौक़ और मेहनत के साथ कार्रवाई शुरू करें, और विकारी अंगों से डर कर और शुभ अंगों की प्राप्ति की चाह उठा कर, जो जतन कि बताया जावे, उस की कार्रवाई, जहाँ तक मुमकिन होवे, दुरुस्ती से करने का सच्चा इरादा और

कोशिश करें । तब राधास्वामी दयाल अपनी दया का बल देकर, जिस क़दर कार्रवाई ज़रूरी और मुनासिब है, कराते जावेंगे और आहिस्ता २ एक दिन उसका पूरा काम बनावेंगे, जैसा कि इन कड़ियों में लिखा है :—

॥ कड़ी ॥

मेहर दया करनी करवाई ।
करनी कर बहु मेहर बढ़ाई ॥
करनी मेहर संग दोउ चलते ।
तब फल पूरा चढ़ चढ़ लेते ॥

३६—और जो कोई ऊपर के लिखे के मुआफ़िक, हिम्मत और इरादा मज़बूत करके, कार्रवाई परमार्थ की, अपने जीव के कल्याण के वास्ते शुरू नहीं करेंगे, वे ख़ास मेहर और दया से ख़ाली रहेंगे, और फिर उनका काम भी जैसा कि चाहिये, दुरुस्ती से पूरा नहीं बनेगा ।

बचन १८

राधास्वामी मत और सुरत-शब्द अभ्यास की महिमा, और वर्णन बड़भागता उन जीवों की, जो प्रीति और प्रतीत सहित अभ्यास कर रहे हैं ॥

१—राधास्वामी मत सब से ऊँचा और गहरा है, और उसका अभ्यास सुरत-शब्द योग का, सीधा और

सहज और धुर पहुँचाने वाला है। इससे बढ़ कर कोई जुगत और अभ्यास रचना भर में नहीं है, और इस को कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल ने इस समय में जीवों पर अति दया कर के आप प्रकट किया।

२—राधास्वामी मत में सच्चे कुल्ल-मालिक राधास्वामी का भेद वर्णन किया है। और उनका निज धाम ऊँचे से ऊँचे देश में समझाया है। और अपनी धारों यानी किरनियों के द्वारे या वसीले से वे सब जगह मौजूद हैं, पर उनका सिंहासन यानी तख़्त ऊँचे से ऊँचे धाम में है, जो कि अपार और अनन्त और अगाध और अथाह और अकह है।

३—रचना में सामान्य और विशेष चैतन्य का भेद, ब-सबब हायल होने माया के पर्दों के साफ़ नज़र आता है। फिर राधास्वामी धाम तो महा विशेष चैतन्य का मक़ाम है, जो कि महा निर्मल और महा आनन्द और महा प्रेम स्वरूप है जहाँ माया का नाम और निशान भी नहीं है, क्योंकि यह वहाँ से नीचे के देश में प्रगट हुई और उस देश में रचना के होने से पहिले चैतन्य का ग़िलाफ़ हो रही थी, यानी बतौर तह के उसको ढके हुई थी।

४—जितने मत कि दुनिया में जारी हैं, वे माया के घेर यानी हद्द में ख़तम हो गये, मगर राधास्वामी मत

का सिद्धान्त निर्मल-चैतन्य यानी दयाल देश में जाता है, जो कि सच्चे कुल्ल-मालिक का निज धाम है, और वहीं पहुँच कर सुरत का सच्चा और पूरा उद्धार यानी माया के जाल से निरवार और जन्म-मरण से छुटकारा हो सकता है। और बाक़ी माया के देश में चाहे जैसे बढ़ से बढ़ कर सुख प्राप्त हो जावें, पर जन्म-मरण का चक्कर हमेशा जारी रहेगा।

५—सुरत-शब्द मार्ग से मतलब यह है, कि सुरत यानी रूह को, जो कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की अंश है और जो प्रथम धार और धुन रूप हो कर राधास्वामी धाम से निकली, और जगह २ मंडल बाँध कर रचना करती हुई पिंड में उतर कर ठहरी है, शब्द यानी धुन की धार के साथ मिला कर उलटाना, और कुल्ल मंडलों के पार निज धाम में पहुँचा कर विश्राम देना।

६—शब्द या धुन से मतलब चैतन्य की धार से है जो असल में कुल्ल रचना की कर्ता है और वही धार जब पिंड में आकर ठहरी, उस का नाम सुरत हुआ, और बसबब उलट जाने इस की तवज्जह के, बाहर की तरफ़ भोगों और पदार्थों में, और नीचे की तरफ़ पिंड में, इसका बंधन देह और दुनिया में हो गया है। जो कोई भेद समझ कर और जुक्ति का उपदेश लेकर, सुरत का रुख़ इन तरफ़ों से मोड़ कर ऊपर यानी इसके निज घर की तरफ़, धुन की

डोर पकड़ कर यानी शब्द को चित्त लगा कर सुनते हुए, प्रेम और शौक़ के साथ चलाना शुरू करे, तो वह राधास्वामी दयाल की दया और सतगुरु की मदद और कृपा से आहिस्ता २ एक दिन माया की हद्द के पार, अपने निज घर में पहुँच सकता है, और जन्म-मरण और देहियों के दुख-सुख से बच कर परम और अमर आनन्द को प्राप्त हो सकता है। यह फल सुरत-शब्द योग के अभ्यास का है।

७—और कोई जुगत या अभ्यास कर के सुरत, निज घर यानी धुर धाम में नहीं पहुँच सकती, क्योंकि आदि ज़हूर चैतन्य का, शब्द है और यही कुल्ल रचना का कर्ता और उसकी जान है। फिर इस धार को पकड़ के धुर धाम में पहुँचना मुमकिन है। और जितनी धारें हैं, वे माया के घेर से निकलीं और वहीं ख़त्म हो गईं। उन में से कोई माया की हद्द के पार नहीं जा सकती है। और जो कि शब्द ही की धार चैतन्य और जान की धार और कुल्ल रचना की कर्तार है, इस वास्ते सुरत-शब्द मार्ग से बढ़ कर कोई अभ्यास रचना भर में नहीं है।

८—और जो कि सुरत-शब्द अभ्यास में प्राणों के रोकने या खींचने की कुछ ज़रूरत नहीं है, इस सबब से वह अब ऐसा आसान कर दिया गया है कि जो सच्चा शौक़ होवे तो स्त्री और पुरुष लड़का और जवान और

बूढ़ा सब उसको, जो थोड़ा-बहुत शौक़ और प्रेम होवे, तो बग़ैर तकलीफ़ और ख़तरे के, कमा सकते हैं और थोड़े दिनों में उसका फल और फ़ायदा देख कर और नित अभ्यास जारी रख कर, अपना परमार्थी भाग जगा और बढ़ा सकते हैं।

६—जो भेद कुल्ल-मालिक और रास्ते के मक़ामों के मालिकों का, और भी सुरत यानी जीव का, और तरीक़ा उस को उल्टा कर फिर निज धाम में पहुँचाने का, शब्द को सुन कर, राधास्वामी मत में खोल कर कहा है, वह किसी मत में जो कि आज-कल जारी हैं, पाया नहीं जाता, और न बहुत से सवालों के जवाब जिन से पूरी तसल्ली हो जावे, सिवाय राधास्वामी मत के, और किसी मत में मिल सकते हैं। इस वास्ते जो कोई कि इस मत के भेद और हाल को अच्छी तरह निर्णय करके समझ लेवे, उसकी गति कुल्ल जीवों से बढ़ कर हो जावेगी, यानी कुल्ल विद्यावान और चतुरे और सर्व मतों के आचार्य्य और पेशवा, उसको असल परमार्थ से बे-ख़बर और नादान नज़र आवेंगे। और जबकि वह, अभ्यास सुरत-शब्द योग का, प्रेम और शौक़ के साथ शुरू करेगा, तो उसके फ़ायदे का कुछ बयान नहीं हो सकता है यानी वह राधास्वामी दयाल की मेहर से एक दिन कुल्ल रचना को पार करके, महा प्रेम और महा आनन्द के धाम में पहुँच कर, जन्म-मरण के कष्ट और क्लेश से रहित हो जावेगा।

१०—बड़ी ख़ूबी और बड़ाई राधास्वामी मत और उसके अभ्यास की यह है कि इस में सब जीव किसी देश और किसी हालत और किसी पेशे और किसी मज़हब में होवें और चाहे गृहस्थ में रह कर रोज़गार करते होवें या विरक्त या आज़ाद होवें, इस मत में शामिल होकर उसका अभ्यास, जो थोड़ा भी शौक़ और प्रेम रखते हैं, आसानी के साथ कर सकते हैं, और कोई दिन में थोड़ा-बहुत उसका रस और आनन्द अपने अन्तर में हासिल कर सकते हैं।

११—यह मत और इसका अभ्यास, अन्तरी और रूहानी है। अभ्यासी को इख़्तियार है कि चाहे जिस वक़्त और चाहे जहाँ, एकान्त में आराम के साथ बैठ कर, और जो बैठा न जावे तो लेट कर, (बग़ैर दूसरे शख़्स के जानने के) अभ्यास कर सकता है और यह भी बहुत ज़रूर नहीं है कि वह अपनी कोई ज़ाहिरी रस्म या क़ायदे या व्यवहार को बदले, बशर्ते कि उस कार्रवाई से उसके ज़ाती फ़ायदे के मतबल से, किसी को किसी क़िस्म का दुख या नुक़सान न पहुँचता होवे।

१२—राधास्वामी मत और उसके अभ्यास के रक्षक और निगहबान, आप कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु हैं, यानी जो कोई सच्चे मन से थोड़ा शौक़ लेकर, थोड़ी-बहुत प्रतीत के साथ इस मत को क़ुबूल करके

सुरत-शब्द के अभ्यास में लगेगा, उस पर राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु आप दया फ़रमाते हैं और अन्तर में पर्चे और मदद देते हैं कि जिस को परख कर अभ्यासी का शौक़ आहिस्ता २ बढ़ता जाता है और प्रीति और प्रतीत चरणों में और भी अभ्यास की जुगत में बढ़ती जाती है।

१३—और जो कि मतलब और मक़सद राधास्वामी मत और उसके अभ्यास का यह है कि मन और सुरत दिन-दिन अपने पिंड में बैठक के स्थान से ऊँचे की तरफ़ सिमटते और सरकते जावें और ऊँचे देश के शब्द और स्वरूप से मिल कर, दिन २ रस और आनन्द ज़्यादा से ज़्यादा पाते जावें, तो जिस क़दर अपनी बैठक के मक़ाम से हटते जावेंगे उसी क़दर दुनिया और उसके सामान की तरफ़ से चित्त उपराम होता जावेगा, और राधास्वामी दयाल और सतगुरु के चरणों में प्रीति और प्रतीत बढ़ती और पकती जावेगी। यही निशान सच्चे अभ्यास और सबूत सच्चे उद्धार का है।

१४—यह बात अच्छी तरह से हर एक जीव को जो राधास्वामी मत में शामिल होवे, समझना चाहिए कि इस मत के अभ्यासी पर ज्यों २ वह अभ्यास करता जावेगा, वही हालत गुज़रती जावेगी जो कि मरने के वक़्त जीवों पर, जब कि रूह का खिंचाव दिमाग़ की तरफ़ होता है, गुज़रती

है, यानी सहज २ आँखों की पुतली को कि जिस में रूह की धार ठहर कर देह और दुनिया का काम कर रही है, अन्दर और ऊपर की तरफ़ उलटाया जाता है। और जिस क़दर यह काम दुरुस्ती से बनता जाता है, उसी क़दर सुरत, देह और दुनिया से न्यारी होती जाती है और इधर के बंधन ढीले होते जाते हैं। जब ऐसी हालत इसी ज़िन्दगी में होने लगी, और कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की दया और उनका जलवा अन्तर में मालूम होने लगा और संसार के भोग-बिलास और मान-बड़ाई से चित्त थोड़ा-बहुत हट कर अंतर अभ्यास यानी चरणों में ज़्यादा शौक़ और प्रेम के साथ लगने लगा, तो इस से ज़्यादा और क्या सबूत सच्चे उद्धार का दरकार है ?

१५—सच्चे प्रेमी अभ्यासी को ऊपर की लिखी हुई हालत और कैफ़ियत से साफ़ यक़ीन होता जावेगा कि इसी सुरत-शब्द मार्ग की कमाई से एक दिन पूरा काम बन जावेगा और यह कि इस मार्ग का सूत कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों से लगा हुआ है और इस मार्ग की कमाई करने वाले की, वे आप रक्षा फ़रमाते हैं और ख़ास दया उस पर फ़रमा कर दिन २ उसकी तरक़्क़ी में मदद देते हैं। फिर उसकी प्रीति और प्रतीत चरणों में ज़रूर बढ़ेगी और पुख़्ता होती जावेगी और दुनिया और उसके

सामान से, जो कि नाशमान है और उसमें रस और आनन्द बहुत थोड़ा, और दुख के साथ मिला हुआ है, ज़रूर अभावता और उदासीनता होती जावेगी।

१६—सच्चे प्रेमी अभ्यासी को राधास्वामी दयाल अपनी मेहर और दया से जब-तब शब्द की असली धुन सुना कर, और अपना प्रकाश स्वरूप दिखा कर या सतगुरु रूप में दर्शन देकर, सुरत-शब्द मार्ग की बड़ाई और अपनी दया की जाँच और यक़ीन कराते हैं कि जिससे उसको साफ़ मालूम हो जावे कि वे हर दम उसके अंग-संग हैं। और जब जब ज़रूरत होवेगी, वे उसकी मदद फ़रमावेंगे और उसकी सुरत को, सब बंधन ढीले कर के, और अपनी गोद में बैठा कर यानी अपने संग लेकर, और ऊँचे देश में चढ़ा कर, एक दिन निज घर में पहुँचा देंगे।

१७—सुरत की चढ़ाई पिंड के परे यकायक और जल्दी नहीं हो सकती, क्योंकि इसमें बहुत हर्ज और नुक़सान और तकलीफ पैदा होने का ख़ौफ़ है। लेकिन आहिस्ता २ कार्रवाई जारी रहने से अभ्यासी का बहुत फ़ायदा है यानी उसको आनन्द और सरूर हज़्म होता जावेगा और मस्ती, और इधर से बेहोशी नहीं होवेगी और दोनों काम, दुनिया और परमार्थ के, किसी दर्जे तक जारी रहेंगे और अभ्यास की तरक़्क़ी भी बराबर होती जावेगी।

१८—इस वास्ते सुरत-शब्द मार्ग के अभ्यासी को मुनासिब और लाज़िम है कि अपना अभ्यास प्रीति और प्रतीत के साथ बराबर जारी रक्खे और जल्दी और शिताबी न करे, और न बहुत घबराहट और बेकली, जिससे कि ना-उम्मेदी और निराशता पैदा होवे, मन में आने देवे, बल्कि दया का हाल दिन २ मुलाहिज़ा करके चित्त में दृढ़ विश्वास रक्खे कि राधास्वामी दयाल उसको, किसी भी हालत में नहीं छोड़ेंगे और उसकी ख़बरगीरी और सम्हाल करते हुए एक दिन ज़रूर धुर घर में पहुँचा देंगे।

१९—अब ख़्याल करना चाहिये कि जिस शख़्स का सच्चा और पक्का इरादा, दयाल देश में पहुँचने का है और दुनिया और उसके सामान से चित्त किसी क़दर उप-राम हो गया है और माया की हद्द में जिस क़दर कि रचना है, उसमें वह चित्त से ठहरना नहीं चाहता है, और राधास्वामी दयाल के शब्द स्वरूप, और भी सतगुरु रूप में, जिसका प्यार है, और ऊँचे देश और धुर धाम में पहुँच कर इन स्वरूपों के दर्शन का आनन्द और बिलास लेने को जिसके दिल में चाह और तड़प लग रही है, और माया के मसाले की देहियों से जिसको किसी क़दर नफ़रत हो गई है, तो ऐसा प्रेमी अभ्यासी किस तरह माया की हद्द में ठहर सकता है? वह तो ज़रूर ही सतगुरु स्वरूप और शब्द के साथ लिपट कर, और दयाल देश में

पहुँच कर विश्राम करेगा, चाहे यह काम एक जन्म में पूरा होवे या दो में। और उस सूरत में वह, कुछ अरसा, संतों के दसवें द्वार यानी सुन्न में जो कि माया की हद्द के पार है, क़याम करेगा, और दूसरे जन्म में सतगुरु के संग आकर और उत्तम कुल में जन्म ले कर फिर वही सुरत-शब्द मार्ग का अभ्यास, जहाँ से छोड़ा है, शुरू करके अपना काम पूरा बनावेगा यानी संत गति को प्राप्त होकर राधास्वामी के चरणों में बासा पावेगा।

२०—और जो शौक़ और प्रेम किसी क़दर हलका रहा और करनी भी उसी मुआफ़िक़ बनती रही, तो तीन जन्म में कारज बनेगा। और इस सूरत में पहिले जन्म में सहसदलकँवल के ऊपर, और फिर दूसरे जनम में दसवें द्वार में कोई दिन ठहर कर, तीसरे जन्म में दयाल देश में पहुँचेगा। और हर जन्म में उत्तम कुल में पैदा होकर और सतगुरु से मिल कर ब-दस्तूर अपना अभ्यास सुरत-शब्द मार्ग का, जारी रक्खेगा और प्रीति-प्रतीत और शौक़ हर जन्म में बढ़ता जावेगा।

२१—ऊपर के बयान से मालूम होगा कि किस क़दर महिमा और भारी गति राधास्वामी मत के अभ्यासी की है, यानी वह एक दिन आत्मा और परमात्मा और ईश्वर और परमेश्वर और ब्रह्म और पारब्रह्म के धाम के

ऊपर चढ़ कर और दयाल देश में पहुँच कर संत और परम संत गति को प्राप्त हो सकता है और तब उसकी गति इन सब से ज़्यादा और भारी हो जावेगी। अब जीवों को इख़्तियार है कि राधास्वामी मत के भेद को सुन कर और ऐसे भारी दर्जे के हासिल करने के वास्ते सतगुरु और राधास्वामी दयाल की सच्ची शरण लेकर सुरत-शब्द मार्ग के अभ्यास में, दिल-ओ-जान से कोशिश करें और चाहे किसी मक़ाम का, माया की हद्द में इष्ट बाँध कर और वहाँ की जैसी-कुछ कार्रवाई है, उसके मुआफ़िक़ अमल-दरामद करके, त्रिलोकी के ऊँचे देश में रहें और चाहे दुनिया और उसके भोग-विलास में अटक कर स्वर्ग और मृत्युलोक की ऊँची-नीची योनियों में भरमते रहें ॥

बचन १६

वर्णन हाल मन की तरंगों और ख़्यालों का, जो कि कर्म-भर्म के सूक्ष्म रूप हैं, और यह कि जब तक इनकी कमी और सफ़ाई न होगी, तब तक मन और सुरत, दुरुस्ती से अभ्यास में नहीं लगेंगे और प्रेम की तरक़्क़ी नहीं होगी, और जतन काटने उन ख़्यालों और तरंगों और कर्मों का ॥

हाल पैदा होने और विस्तार पाने मन के ख़्यालों और तरंगों का

१—मन का क़ायदा है कि जब इस में किसी तरंग की हिलोर उठती है, तब धार खड़ी होकर उस इन्द्रिय की तरफ़ कि जिसके भोग की तरंग उठी है, रवाँ होती है और जो वह भोग बाहर मौजूद होवे तो उस से मिल कर जैसा कुछ कि उसका रस है, मन को पहुँचाती है। और जो वह भोग इत्तिफ़ाक़ से उस वक़्त मौजूद नहीं है तो मन उसका अनुमान करके अपनी धार के वसीले से जो इन्द्रिय घाट तक आई है, ख़्याली रस लेता है और उस वक़्त उस भोग के रस का रूप हो जाता है और कोई दूसरा ख़्याल उस वक़्त नहीं रहता है और फिर उस भोग के हासिल करने के निमित्त अनेक तरह के जतन सोचता है और किसी क़दर वक़्त अपना, इसी गुनावन में ख़र्च करके और इरादा उस जतन के करने का बाँध कर उस ख़्याल को छोड़ देता है।

२—जिस क़दर अर्से तक कि मन इसी गुनावन और ख़्याल में लगा रहा, उस ख़्याल और इरादे का कि जो उसने वास्ते जतन करने के किया, मनाकाश में गहरा नक़्श पड़ जाता है और फिर वही नक़्श उस इरादे के मुआफ़िक़ मन से बाहर कार्रवाई, वास्ते प्राप्ति उस भोग के, करावेगा और जब वह भोग प्राप्त होगा, तब निहायत हर्ष और ख़ुशी

के साथ उस भोग में लिपट कर उसका रस लेगा। और फिर इस कार्रवाई का भी नक़्श मनाकाश में ब-दस्तूर पड़ेगा। और वह बार २ उस भोग के रस की याद दिला कर और हिलोर उठा कर ब-दस्तूर कार्रवाई और जतन, यानी अंतरी और बाहरी कर्म करावेगा और इसी तरह कर्मों का सिलसिला बढ़ता जावेगा।

३—कुल इन्द्रियों के भोगों की चाह का पैदा होना और उनकी प्राप्ति के लिए इरादा और फिर जतन का करना और उसके सुफल होने पर भोगों का रस लेना और फिर बारम्बार उसी क़िस्म की तरंगें उठाना और उनके पूरे होने के वास्ते तदबीर और जतन करना—यही सिलसिला कर्म पैदा करता है, और इसी कार्रवाई के नक़्श पर नक़्श अंतर में जमा होते जाते हैं और इसी का नाम कर्मों का दफ़्तर है।

४—यह तरंगें और उनके पूरे करने के वास्ते जो कुछ कि कार्रवाई की जावे, वह औरों के भोग-विलास देख कर या सुन कर या उनका हाल पढ़ कर पैदा होती हैं या अपने मन में नई उचंग उठा कर ज़ाहिर होती हैं। और इनके सिलसिले की कोई हद्द नहीं है यानी जिस क़दर सामान मुयस्सर आवे और जैसा संग मिल जावे तो इस क़िस्म की तरंगें, मिस्ल आरायश मकान व सवारी और लिबास और ज़ेवर और जमा करने धन और माल और बढ़ाने अनेक तरह

के सामान वग़ैरा के और लगाने बाग़ात और बढ़ाने सामान ऐश-ओ-आराम और करना अनेक तरह के काम नाम-वरी और यादगार के, बे-शुमार पैदा होती हैं और इस तरह कर्मों का दफ़्तर भी बहुत भारी हो जाता है।

५—यही सब नक़्श जिनको कर्मों का दफ़्तर कहा गया है, बराबर जीव से कर्म के बाद कर्म बे-तादाद कराते हैं। और हर एक कर्म के सुख और दुख का भोग थोड़ा-बहुत, वक़्त तरंग उठाने और उसका ख़्याल करने और फिर उसका भोग करने के, मन को, अंतर और बाहर मिलता है। और जिस क़दर कि शौक़ और ज़ोर के साथ कोई कर्म किया गया है, चाहे वह आप को या दूसरों को सुखदाई है या दुखदाई, उसी क़दर मज़बूत नक़्श उसका दिल में पड़ेगा और आइन्दा वह उसी तरह का एवज़ यानी फल, अन्तर और बाहर, देवेगा। यानी अंतर में तो वक़्त सख़्त तकलीफ़ और मौत के, जब कि सुरत यानी रूह की धार का खिंचाव ऊपर की तरफ़ होवेगा और वह उन नक़्शों के मक़ाम से गुज़र करेगी, तब वे नक़्श ज़िन्दा होकर उसको कुछ देर अटकावेंगे और जैसा कुछ कि उनका भोग है (सुख या दुख और रस या तकलीफ़) उसी मुआफ़िक़ फल देवेंगे। और उस वक़्त सुरत यानी जीव जो कि संसारी है, कोई जतन उस दुख के हटाने का नहीं कर सकेगा, और इसी तरह जब बाहर दुख-

दाई कर्मों का एवज़ मिलेगा, चाहे वह बतौर रोग या सोग के होवे या दूसरे के हाथ से (जिसको इस शख़्स ने साबिक़ में दुख दिया है) तकलीफ़ पहुँचे, उसका पूरा फल भोगना पड़ेगा और चाहे जिस क़द्र जतन और तद्बीर की जावे, वह तकलीफ़ और दुक्ख, बग़ैर पूरा भोग दिये, नहीं हटेगा।

६—और इसी तरह सुखदाई कर्मों का भोग अन्तर और बाहर मिलेगा। और जो वे कर्म पूरे हैं तो बाहर बग़ैर जतन या तद्बीर करने के, उनका फल सुख रूप सहज में प्राप्त होगा, और जो अधूरे हैं तो थोड़ा जतन और मेहनत करके हासिल होगा।

७—यह थोड़ा-सा हाल, शुरूआत और तरक़्क़ी-ए-सिलसिला कर्मों का बयान किया गया है। इसको विस्तार करके कुल्ल कर्मों का हाल वक़्त उनके बीजा पड़ने से और फिर ज़हूर करने और तरक़्क़ी पाने तक समझ लेना चाहिये। यही माया का जंजाल है कि अनेक तरह के भोग और पदार्थ पेश करके और उनमें जीव को लुभा कर कर्मों के चक्कर में डालती है कि फिर जिसका सिलसिला दूर तक जारी रहे और उससे निकलना मुशकिल हो जावे और माया के घेर में बारम्बार देह धारण करके अपनी करनी और इरादे का फल भोगता रहे।

८—एक मिसाल दी जाती है कि जिससे ऊपर का लिखा हुआ हाल आसानी से समझ में आजावे। जैसे कोई शख़्स किसी की शादी की महफ़िल में गया और वहाँ रोशनी और फ़र्श वग़ैरा और फुलवार की आरायश और आतिश-बाज़ी वग़ैरा देख कर मन में खुश हुआ और इरादा किया कि अपने लड़के की शादी में जो सामान मुयस्सर आवे तो उसी मुआफ़िक महफ़िल आरास्ता करे, और फिर इस इरादे के पूरा करने के वास्ते अनेक जतन और मेहनत करके धन का पैदा करना और जोड़ना शुरू किया और जब वक़्त आया, तब जिस क़दर कि सामान मुयस्सर हो सका, थोड़ी-बहुत, उसी के मुआफ़िक़ जैसा कि देखा था, महफ़िल तैयार की, और जब उसकी तारीफ़ हुई, तब फिर इरादा किया कि आइन्दा उससे भी बढ़ कर काम करे। इसी तरह सिलसिला इस कर्म का बढ़ता चला और फिर मालूम नहीं कि कब तक उसकी ज़िन्दगी में जारी रहे और जो सामान कि मुयस्सर आने में कमी रही तो रंज और अफ़सोस भोगना पड़ा और फिर भी उस इरादे को और उसके पूरा करने के वास्ते जतन और मेहनत को न छोड़ा, यानी जो इस जन्म में ख़ातिर-ख़्वाह काम न बना, तो उस की आशा दूसरे जन्म में बाक़ी रही और फिर वही जतन और मेहनत करने लगा। इस तरह वह

सिलसिला ब-दस्तूर जारी रहा। यह मिसाल बहुत थोड़े से हाल की है, लेकिन जीवों के मन में बे-शुमार तरंगें दुनिया के भोग-विलास और नामवरी की उठती रहती हैं। और जो एक पूरी यानी ख़त्म हो गई, तो फिर दूसरी और तीसरी पैदा हो गई। इस तरह कर्मों का चक्कर कभी ख़त्म नहीं होता।

६—जो कोई कहे कि कर्मों का नक़्श कैसे पड़ता है, तो उसका हाल यह है कि जैसे अक्सी तसवीर खींचने वाला यानी फोटोग्राफ़र जब तसवीर खींचता है, तब सूरज की किरण की मदद से अक्स शीशे पर पड़ता है, इसी तरह, सुरत-चैतन्य की रोशनी की मदद से मनाकाश में, जो कि मुआफ़िक़ शीशे के है, जीव के ख़्याल और कर्मों का नक़्श पड़ता है, बल्कि बाहर के आकाश में भी अक्सर तसवीर खिंच जाती है। चुनांचे समुद्र के किनारे के रहने वाले, वक़्त सुबह या क़रीब शाम के आने वाले जहाज़ का अक्स आकाश में देख कर मालूम कर लेते हैं कि फ़लाँ जहाज़ थोड़े अर्से में आने वाला है।

१०—सिवाय इसके, यह भी कैफ़ियत रोज़मर्रा जीवों पर गुज़र रही है कि जब कोई कुछ मज़मून या कलाम लिखना चाहता है या मकान बनाना चाहता है या मुसव्विर कोई तसवीर खींचना चाहता है या और कोई

कारीगर कोई चीज़ बनाना चाहता है, तो वह पहिले उस को अपने मन में सोचता है। और उस सोचने के वक़्त नक़्श या ख़ाका उस मज़मून या मकान या तसवीर या चीज़ वग़ैरा का, मनाकाश में लिख जाता है। पीछे, उस का नमूना वह बाहर लिखता है या बनाता है। ऐसे ही सब काम और ख़्यालों का हाल समझ लेना चाहिए कि पहिले उनका नक़्श मनाकाश में पड़ता है और फिर इन्द्रियों के वसीले से उन की सूरत बाहर ज़ाहिर होती है।

जतन छुटकारा पाने का, कर्मों के चक्र से

११—अब ग़ौर करने की बात है कि ऐसे कर्म के चक्र और जंजाल से जीव का छुटकारा कैसा मुश्किल है। सो सच्चा और पूरा निरवार, बग़ैर राधास्वामी दयाल की शरण लेने और उनकी जुगत के अभ्यास करने के, और किसी तरह मुमकिन नहीं है। और वह जुगत सुरत-शब्द योग है जिस की कमाई करने से तीनों क़िस्म के कर्म यानी संचित, प्रारब्ध और क्रियमान का सिलसिला सहज में कट सकता है। और कुल्ल कर्मों का हिसाब कोई दिन में बेबाक हो सकता है।

१२—जितने मत कि दुनिया में जारी हैं, वे अक्सर तो कर्म का उपदेश करते हैं और आशा सुख की इस लोक में या स्वर्ग वग़ैरा में बँधवा कर, ब-दस्तूर माया के जाल और कर्म के चक्र में फँसाते हैं। कोई २ बाहरमुख भक्ति,

मूर्तों या निशानों की (जो कि जड़ हैं) कराते हैं और असल का भेद नहीं बताते। इस सबब से वे उपासक स्थूल और सूक्ष्म शरीर में चक्कर खाते रहते हैं और कर्म के जाल से निकलने नहीं पाते। कोई २ ग्रन्थ और पोथी पढ़ने और पढ़ाने में अटकाते हैं और कोई ईश्वर या ब्रह्म या ख़ुदा का चिन्तवन और ध्यान कराते हैं। लेकिन वह ध्यान बे-ठिकाने और ना-दुरुस्त रहता है क्योंकि वह ईश्वर या ब्रह्म या ख़ुदा को अरूप क़रार देकर आकाश-वत सर्व-व्यापक बताते हैं, और ध्यानी, आकाश का तसव्वुर बाँध कर, इसी चैतन्य के मंडल में रहता है यानी माया के घेर के पार नहीं जा सकता। और बाज़े वाचक ज्ञान समझाते हैं यानी ख़ुद जीव को सर्व-व्यापक ब्रह्म क़रार देते हैं और माया और उसके सामान को मिथ्या समझ कर कहते हैं कि जाना-आना कुछ नहीं है, सिर्फ़ इतना चाहिए कि अपने तईं ब्रह्म स्वरूप मानने का विर्द[1] करें। इतनी ही कार्रवाई से जन्म-मरण से छुटकारा हो जाना मानते हैं। इन्होंने भी धोखा खाया और उस चैतन्य के मंडल से जो कि माया के संग रचना में फँसा हुआ है, बाहर नहीं गये।

१३—ख़ुलासा यह कि यह सब मत वाले और ख़ुद इनका ब्रह्म या ईश्वर या ख़ुदा (जो उनका सिद्धान्त पद है) माया के घेर और चक्र में फँसा हुआ है। फिर इन लोगों

१—अभ्यास।

का सच्चा निरवार काल और कर्म के घेर से किस तरह हो सकता है ? अलबत्ता यह बात सिर्फ़ राधास्वामी मत के मानने और उसकी जुगत के कमाने से हासिल हो सकती है और इसका बयान शरह के साथ आगे लिखा जाता है ।

राधास्वामी मत के अभ्यास की कमाई से तीनों क़िस्म के कर्मों का असर घटना और दूर होना मुमकिन है

१४—मालूम होवे कि राधास्वामी मत का अभ्यास शब्द और स्वरूप के आसरे सुरत (रूह) की धार के अंतर में उलटाने और चढ़ाने का है और उस धार का स्थान, वक़्त जाग्रत के, आँखों की पुतली में है । सो उस धार के साथ पुतली भी उलटती है । और जिस वक़्त कि पुतली और वह धार थोड़ी भी उलटती और खिंचती है, तो उसी वक़्त देह और दुनिया का होश कम हो जाता है या उसकी बिलकुल सुध नहीं रहती है और हाथ पैर ऐंठने लगते हैं और दाँती भी बंद हो जाती है और इन्द्रियाँ बल्कि मन भी शिथिल और बेकार हो जाते हैं ।

१५—जब ऐसी हालत अभ्यास कर के थोड़ी-बहुत पैदा होनी शुरू हुई, तो स्थूल और सूक्षम यानी अंतर और बाहर कर्मों की कार्रवाई आप ही हलकी होती जावेगी और अन्तर में कुछ रस और आनन्द पाकर, और मालिक की

क़ुदरत और दया का मुलाहिज़ा कर के, अभ्यासी का चित्त संसार और उसके भोगों की तरफ़ से आप ढीला होता और हटता जावेगा, और दुनिया के रस फीके पड़ते जावेंगे और शौक़ तरक़्क़ी अभ्यास और हासिल करने विशेष रस का, अन्तर में बढ़ता जावेगा, और संसारी ख़्वाहिशें घटती जावेंगी और जो ज़रूरी सामान के वास्ते यह अभ्यासी कुछ कार्रवाई, मिस्ल रोज़गार और पेशा वग़ैरा के, करेगा या चाह उठावेगा, तो उसमें हमेशा मालिक की मौज और दया की मुख्यता रक्खेगा और अपनी चाह को मालिक की मरज़ी के आधीन रक्खेगा। इस तरह क्रियमान कर्मों में अभ्यासी का बंधन बहुत कम या बिल्कुल नहीं होवेगा यानी सिलसिला कर्मों का आइन्दा के वास्ते बंद हो जावेगा।

१६—प्रारब्ध कर्म उनको कहते हैं कि जिन का फल इस ज़िंदगी में भोगना होगा। सो उनका असर कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया से बहुत हलका हो जावेगा, यानी जिस क़दर अभ्यासी को अपनी सुरत को आँख के मक़ाम से हटाने की ताक़त हासिल हुई है, उसी क़दर, वह देह और दुनिया से न्यारा होता जाता है। और जो कि जाग्रत में आँखों का स्थान सुरत की बैठक का है और वही सुख-दुख के भोग और कर्म करने का स्थान है, इस वास्ते जिस क़दर कि रूह की धार इस मक़ाम से

अभ्यास की मदद से हटती जावेगी, उसी क़दर दुख-सुख कम व्यापेगा। इस तरह प्रारब्ध कर्म का भोग हलका और कम होता जावेगा।

१७—अब बाक़ी रहे संचित कर्म, जो कि अभी नक़्श यानी बीज रूप मनाकाश में धरे हैं और कर्म कराने या फल देने को आइन्दा तैयार होंगे। सो यह कर्म जैसा कि अभ्यासी की सुरत मनाकाश को छेद कर ऊँचे को चढ़ती जावेगी, रास्ते में गुनावन और ख़्याल रूप पेश होकर, थोड़ी देर में अपना भोग और फल देकर नष्ट होते जावेंगे। यानी अगर अभ्यास शौक़ के साथ दुरुस्त बन पड़ा तो अभ्यासी की सुरत कुछ अर्से में मनाकाश के पार हो जावेगी और संचित कर्मों का दफ़्तर साफ़ हो जावेगा।

१८—इस तरह राधास्वामी मत के अभ्यासी के कुल्ल कर्म, एक या दो जन्म में कट सकते हैं। और जो ज़रा शौक़ और अभ्यास सुस्त रहा और संसार के भोगों की वासना थोड़ी मन में धरी रही, तो तीन जन्म में ज़रूर सफ़ाई हो जावेगी और सुरत, घट में ऊँचे देश में चढ़ कर शब्द और स्वरूप का रस और आनन्द लेवेगी और तब निर्मल प्रेम और उसके साथ अभ्यास भी दिन २ बढ़ता जावेगा।

दुनिया के ख़्यालों और तरंगों को परमार्थी चिन्तवन और उमंग के साथ बदलना चाहिये, तब थोड़ा-बहुत रस और आनन्द अन्तर में मिलेगा।

१९—अब समझना चाहिये कि जितने कर्म आदमी बाहर करता है, प्रथम वह अंतर में ख़्याल रूप में पैदा होते हैं, और वही ख़्याल, तरंग या धार रूप होकर इन्द्रिय के मक़ाम पर अपने भोग का रस मन को देते हैं। और मन, वक़्त उठने ख़्याल या तरंग के, उसी तरंग और उसके भोग और रस का थोड़ा-बहुत रूप हो जाता है और, दूसरी बात या काम की उस वक़्त उसको कुछ सुध नहीं रहती। और जब कोई उसकी तरंग के विस्तार और उसके भोग के रस लेने में विघ्न डाले, तो उस वक़्त वह बहुत बुरा और दुश्मन नज़राई देता है और जो मदद देवे, वह प्यारा और मित्र ख़्याल किया जाता है। यह हालत कुल्ल जीवों पर दुनिया में रोज़मर्रा बर्त रही है, लेकिन इसकी कार्रवाई अन्तर में इस तरह जल्द और सिलसिलेवार होती है कि किसी को उसकी ख़बर भी नहीं पड़ती है।

२०—दुनिया में जीव को जब किसी भोग का रस मिलता है तो फिर बार-बार उसी रस की प्राप्ति की चाह उठा कर जतन करता है और जो इत्तिफ़ाक़ से जतन करके

भी वह भोग प्राप्त न होवे, तो उसका ख़्याल उठा कर और गुनावन करके थोड़ा-बहुत रस, धार के उठ कर इन्द्रिय घाट तन आने का लेता है।

२१—अब जो कोई सच्चा शौक़ीन परमार्थ का है उसको चाहिये कि अपने मन और सुरत की धार को नौ द्वार यानी इन्द्रियों के मक़ाम से हटा कर दसवें द्वार की तरफ़ जो मस्तक में है (और जिस द्वारे से सुरत की धार पिंड में आकर नेत्रों में ठहरी है) संतों की जुगत के मुआफ़िक़ शब्द और स्वरूप के आसरे उलटाना शुरू करे। यानी पहिले परमार्थी रस लेने का ख़्याल मन में उठा कर जो जुगत कि बताई गई है उसके मुआफ़िक़ अभ्यास में बैठे। तब उसके ख़्याल के मुआफ़िक़, जैसा वह तेज़ और मज़बूत होगा, मन के स्थान से धार उठ कर ऊँचे की तरफ़ रवाँ होगी और जिस क़दर कि वह चल कर रास्ते के स्थान पर ठहरेगी या उसी तरफ़ की गुनावन करती रहेगी, उसी क़दर उस धार के ऊँचे देश के चैतन्य से मिलने का रस आवेगा।

२२—यह रस बहुत निर्मल और साफ़ है और थोड़ी सी तवज्जह अंतर में करने से मिल सकता है। जब इसकी थोड़ी-बहुत कैफ़ियत मालूम होगी यानी मन को कुछ मज़ा आवेगा और उसके नशे और सरूर का रस मालूम पड़ेगा, तब बार-बार उसी रस के लेने के इरादे से अभ्यास करेगा

और फिर यही हालत बढ़ती जावेगी यानी शौक़ और प्रेम दिन २ तरक़्क़ी करता जावेगा।

२३—इस वास्ते, हर एक सच्चे परमार्थी को मुनासिब है कि जब-जब फ़ुरसत और मौक़ा मिले, तब-तब सच्ची तरंग अंतर में परमार्थी रस लेने की उठा कर अभ्यास शुरू करे और जैसे दुनिया के कामों में जब किसी काम का ख़्याल करता है, तो उस वक़्त उसी का रूप हो जाता और दूसरी बात की सुध नहीं रहती है, इसी तरह अभ्यास के वक़्त भी सिर्फ़ परमार्थी ख़्याल को पक्का करके भजन या ध्यान करे और किसी दूसरे काम या बात का, जहाँ तक मुमकिन हो, ख़्याल न लावे, तो ज़रूर थोड़ा-बहुत रस अभ्यास में मिलेगा और फिर उसका शौक़ आहिस्ता २ बढ़ता जावेगा।

२४—सिवाय अभ्यास के वक़्त के, और वक़्तों में भी चार-पाँच मिनट या ज़्यादा अपने चित्त को मक़ाम और स्वरूप या शब्द का अंतर में ख़्याल करके वहाँ जोड़ता रहे, तो इतनी ही देर में कुछ रस मिलेगा। और यही कार्रवाई जब-जब ख़्याल आ जावे कई बार दिन और रात में करे और उससे फ़ायदा उठावे यानी रस लेवे, तब थोड़ी-बहुत ख़बर अंतर में आनन्द की, पड़ेगी और उसका शौक़ बढ़ेगा।

२५—जब ऊपर कही हुई कार्रवाई और मामूली अभ्यास से कुछ-कुछ रस मिलेगा और राधास्वामी दयाल की दया और क़ुदरत थोड़ी-बहुत नज़र आवेगी, तब किसी क़दर प्रेम उनके चरणों में पैदा होगा और दर्शनों का शौक़ बढ़ेगा। और फिर अभ्यास भी ज़्यादा दुरुस्ती से बन पड़ेगा। और रफ़्ता २ उसके रस और आनन्द का इस क़दर आधार हो जावेगा कि दिन-रात में बग़ैर दो-चार बार अभ्यास का रस लेने के, चैन नहीं आवेगा और बिरह और शौक़ ज़्यादा होता जावेगा।

२६—ऐसी करनी से दिन २ मेहर और दया भी बढ़ती जावेगी और उसके साथ प्रेम और करनी भी बढ़ती जावेगी और रफ़्ता २ एक दिन काम पूरा बन जावेगा।

दुनियावी ख़्यालों की क़िस्में और उनके हटाने की ज़रूरत, वास्ते सफ़ाई अंतर और दूर करने दुई और कपट के, कि जो परमार्थ में ज़्यादा विघ्न-कारक है।

२७—अब मालूम करना चाहिये कि ऐसी करनी या अभ्यास कि जिसका ज़िक्र ऊपर हुआ, दुरुस्ती से कैसे बन सकता है। यानी जिस वक़्त कि परमार्थी कार्रवाई का ख़्याल उठे, उस वक़्त किसी और ख़्याल या बात की तरंग

मन में नहीं उठाना चाहिये। तब उस परमार्थी ख़्याल का रूप दुरुस्त बनेगा यानी धार दसवें द्वार की तरफ़ उठ कर रवाँ होगी। और जो दूसरी क़िस्म की तरंगें उस वक़्त पैदा होवेंगी तो अनेक धारें पैदा होकर बाहर या नीचे की तरफ़ जारी हो जावेंगी और उस परमार्थी धार का रूप बिगड़ जावेगा। और इस सबब से उस का कुछ रस नहीं आवेगा क्योंकि मन दूसरी धारों में लिपट कर उन्हीं का रूप बन जावेगा और उन्हीं का रस लेवेगा।

२८—इस वास्ते सच्चे परमार्थी को चाहिये कि जितने ख़्यालात ग़ैरों के ताल्लुक़ के हैं, या अपनी पिछली ज़िन्दगी के कामों से ताल्लुक रखते हैं, जहाँ तक मुमकिन होवे, बिल्कुल अपने मन से भुला देवे, और वक़्त अभ्यास के खास कर, और दूसरे वक़्तों में भी, ऐसी अहतियात की आदत डाले कि उस क़िस्म के ख़्यालों को अपने मन में न उठने देवे और जो पैदा होवें तो उनको जल्द हटावे।

२९—दूसरी क़िस्म के ख़्याल जो मन में पैदा होते हैं, वे मन और इन्द्रियों के भोगों और दुनिया की मान-बड़ाई और नामवरी के हैं। इनकी निसबत भी वक़्त भजन के ख़ास कर, और दूसरे वक़्तों में भी वैसी ही अहतियात ज़रूर है कि फ़िज़ूल तरंगें न उठने पावें। जिस क़दर कि इस शख़्स के घर-गृहस्थ और देह के कारोबार और रोज़गार के

ताल्लुक़ ज़रूरी ख़्याल हैं, उनके उठाने और उनकी कार्रवाई जारी करने में मुक़र्ररा वक़्तों पर कुछ हर्ज नहीं होगा। लेकिन इस क़िस्म की तरंगें फ़िज़ूल और बे-ज़रूर और बे-वक़्त उठाना मुनासिब नहीं है। और जब वे ज़ाहिर होवें, बल्कि जब उनकी हिलोर उठे, उसी वक़्त से उनके रोकने और हटाने की मन को आदत डालना चाहिये, ताकि भजन और ध्यान और बानी के पाठ के वक़्त, वे ज़ोर न करने पावें।

३०—तीसरी क़िस्म के ख़्याल वे हैं कि जो ब-सबब ईर्षा या बैर और विरोध या लड़ाई और झगड़े या अपनी या दूसरे की हक़-तल्फ़ी की वजह से पैदा होवें। यह ख़्याल अक्सर झूँझल और ग़ुस्से और गरमी के भरे हुए होते हैं और जिस वक़्त कि यह उठते हैं, निहायत तकलीफ़ ख़्याल करने वाले को देते हैं और उस के सुरत और मन को बिखेर देते हैं और फैला देते हैं कि फिर वह उस वक़्त क़ाबिल परमार्थी बल्कि दुनिया की कार्रवाई के भी (जब तक कि ठंडा न होवे) नहीं रहता। परमार्थी शख़्स को इस क़िस्म के ख़्यालों से बचना बहुत ज़रूर है, नहीं तो उसका नुक़सान होगा। और जहाँ तक बने, किसी से झगड़ा या तकरार न करना और थोड़ी तकलीफ़ और नुक़सान की एवज़ में बदला लेने का इरादा न करना और हर एक की दुनिया की तरक़्क़ी को मालिक की मौज से होना

समझ कर ईर्षा और विरोध न करना चाहिये, और जिस किसी से पुरानी ना-मुआफ़क़त या अदावत चली आती है, उसका ख़्याल अपने दिल से निकाल कर, जो मुमकिन होवे और मुनासिब मालूम पड़े तो आपस में मेल कर लेना बेहतर होगा।

३१—चौथी क़िस्म के ख़यालात वे हैं कि जो एक तरंग के अंग २ से अनेक और बे-सिलसिले ख़ुद्-ब-ख़ुद् और बग़ैर इरादे इस शख़्स के, पैदा हो कर अर्से तक मन को अपने चक्र में डालकर घुमाते हैं। इनका कोई ख़ास स्वरूप नहीं है और न उन से कोई ख़ास मतलब निकलता है और न किसी तरह का रस मिलता है, मुफ़्त वक़्त बरबाद जाता है और मन की ऐसी कार्रवाई बिल्कुल बे-फ़ायदा होती है। ऐसी तरंगों के उठते ही रोकने और हटाने की आदत डालना बहुत ज़रूर है, नहीं तो जो उन की धार एक बार जारी होगई, तो फिर ख़बर नहीं कि कितनी देर तक मन उनमें भरमाता रहेगा और उस वक़्त इस शख़्स को होश भी नहीं रहता कि मैं क्या कर रहा हूँ।

३२—इस चौथी क़िस्म की तरंगों का हाल ख़्याल करने वाले को भी बहुत कम मालूम पड़ता है। जैसे जब पाँच-चार आदमी एक जगह बैठ कर बात-चीत करने लगे, तो उस वक़्त एक शख़्स की बात के अंग २ यानी लफ़्ज़

लफ़्ज़ से हर एक शख़्स अपने-अपने हाल और तबीअत और तजरुबे के मुआफ़िक़ एक-एक नई बात याद करके कहना शुरू कर देता है, और फिर इसी तरह उसकी बात के लफ़्ज़ों से और नई-नई बातें पैदा होती चली जाती हैं, यहाँ तक कि घंटे गुज़र जावें और बातें ख़त्म न होवें। और कोई भी यह नहीं कह सकता कि कौन-सी बात पहिले शुरू हुई थी और कैसे २ उससे नई बातें पैदा होकर सिलसिला बढ़ता चला गया। ऐसे ही मन, अंतर में, एक ख़्याल के अंग से अनेक ख़्याल और बातें पैदा करके, उनके सिलसिले को बे-इरादा और बे-मतलब बेहोश आदमी की तरह से (जो कि बे-सर-ओ-पा गुफ़्तगू करता है) बढ़ाता चला जाता है और आप इससे कि मैं क्या कर रहा हूँ, बे-ख़बर रहता है।

३३—पाँचवीं क़िस्म की तरंगें वे हैं कि जिनको मनोराज कहते हैं, यानी उसमें मन, अनेक तरह की ख़्वाहिशें मान और बड़ाई और हुकूमत और भोग और विलास और जमा करने अनेक तरह के सामान और तरक़्क़ी कुटुम्ब और परिवार वग़ैरा २ के उठा कर, अपनी चाह के मुआफ़िक़ उनको अपने ख़्याल ही में पूरा करके उनका रस लेता है। और उस वक़्त हर एक क़िस्म की हालत, जो कि उस सामान वग़ैरा के हासिल होने पर पैदा होती, उस

ख़्याल करने वाले शख़्स पर ज्यों की त्यों गुज़रती है और ऐसी कैफ़ियत ज़ाहिर होती है कि ख़्याल करने वाले का ज्यों का त्यों रूप उसके ख़्याल के मुआफ़िक़ बन जाता है और मन उस ख़्याली सामान का भोग पूरा करके रस लेता है और मग्न होता है। यह एक अजीब हालत नशे और सरूर की है कि जब-तब हर एक शख़्स के अंतर में पैदा होती रहती है। और जब यह भजन के वक़्त पैदा होवेगी, तो बिल्कुल अभ्यास का होश भी नहीं रहेगा और जब घंटे-दो-घंटे बाद होश आवेगा, तब यह भी ख़बर न होगी कि इस वक़्त मैंने भजन किया कि मनोराज करता रहा।

३४—प्रेमी अभ्यासी को मुनासिब और लाज़िम है कि पहली और तीसरी और चौथी और पाँचवीं क़िस्म की तरंगों को, जहाँ तक मुमकिन होवे, बिल्कुल न उठने देवे, बल्कि उनका बीजा भी अपने मन से आहिस्ता २ निकाल देवे। और दूसरी क़िस्म की तरंगें ज़रूरत के मुवाफ़िक़ और मुनासिब तौर पर उठावे और जिस क़दर बने, जल्द उनकी कार्रवाई करके फ़ारिग़ हो जावे। तब मन और सुरत निर्बन्ध और हलके होकर अभ्यास में दुरुस्ती के साथ लगेंगे और अंतर में रस और आनन्द भी मिलेगा। और जब तक कि फ़िज़ूल और बे-फ़ायदा तरंगें नहीं हटाई जावेंगी, तब

तक मन और उसके साथ सुरत, नीचे और बाहरमुखी धारों के साथ लिपटे और अटके रहेंगे, और न तो सिमटेंगे और न दसवें द्वार की तरफ़ सरकेंगे, और जो हिदायत कि अभ्यास की निसबत की गई है, उसकी कार्रवाई, जैसा कि चाहिये, दुरुस्त नहीं बन पड़ेगी और न उसमें जल्द तरक़्क़ी होगी ।

३५—सच्चे परमार्थी को इस बात की भी अहतियास रखनी चाहिये कि बे-मतलब और बे-ज़रूरत बात-चीत में किसी की बुराई-भलाई यानी निंदा-स्तुति न करे और न दूसरे की ज़बान से, जहाँ तक मुमकिन होवे, सुने । बल्कि जब-कभी ऐसा इत्तिफ़ाक़ पेश आवे तो दूसरों की बुराई-भलाई देख कर या सुन कर अपने मन को नसीहत करे कि उसी क़िस्म की बुराई की बातों से बचना इख़्तियार करे और भलाई की बातों को अपने वास्ते नमूना समझ कर उनके मुआफ़िक़ आप भी कार्रवाई करे ।

३६—ऐसे ख़्यालों का जिनका ज़िक्र ऊपर लिखा गया, मन में जमा होने और दौरा करने का नाम मलीनता और चंचलता है और जब तक यह विकार दूर न होंगे या कम न होते जावेंगे, तब तक सफ़ाई का आना और भजन का दुरुस्ती से बनना मुश्किल है ।

३७—जो जो ख़्याल कि मन में ऊपर की क़िस्मों के पैदा होते हैं, असल में यही सूक्षम कर्म और भर्म हैं। जब उनकी कार्रवाई बाहर की जाती है, तब उन कर्मों और भर्मों का रूप बाहर बनता है और हर एक शख़्स उनको देखता है। लेकिन जब तक कि वे ख़्याल और रूप मन में धरे हैं, चाहे वे शुभ या नेक हैं और चाहे अशुभ या बद हैं, दूसरा कोई उनसे वाक़िफ़ नहीं हो सकता, अलबत्ता मालिक अंतरयामी उनको देखता है और जो शख़्स ख़्याल करने वाला होशियार है, तो वह अपने मन की हालत को आप जान सकता है।

३८—इससे ज़ाहिर है कि किसी आदमी के असली ख़वास और चाल-चलन और मन की हालत से कोई शख़्स वाक़िफ़ नहीं हो सकता, जब तक कि उसके ख़्यालों का स्वरूप बाहर प्रगट न होवे। यह हाल सही सही उस वक़्त मालूम हो सकता है कि जब उससे किसी को काम पड़े या किसी क़िस्म के व्यवहार का बर्ताव पेश आवे। उस वक़्त ख़बर पड़ती है कि फ़लाँ आदमी असल में सच्चा है या झूठा और नेक है या बद।

३९—ज़ाहिरी कार्रवाई और चाल-चलन और व्यवहार वग़ैरा से किसी शख़्स का असली हाल पूरा २ सही नहीं मालूम हो सकता, क्योंकि ब-सबब ख़ौफ़ हाकिम और

उसके क़ानून के, और भी ख़ौफ़ और शरम बिरादरी और दोस्त आश्नाओं और पड़ोसियों के, और ख़ौफ़ नुक़सान रोज़गार और पेशे के, आदमी के बहुत से असली ख़वास और ख़सलत छिपे रहते हैं। लेकिन जब उसको मौक़ा मिले और किसी क़िस्म का ख़ौफ़ ज़्यादा न मालूम पड़े, तब वह अपनी ज़ाहिरी कार्रवाई के बिल्कुल बर-ख़िलाफ़ बर्तने को तैयार हो जाता है या बर्ताव करने लगता है। तब ख़बर पड़ती है कि अंदरूना उसका कैसा है।

४०—इस वास्ते पूरा २ एतबार, सब तरह की कार्रवाई और व्यवहार में, उस शख़्स का हो सकता है कि जिसके दिल में ख़ौफ़ अपने सच्चे कुल्ल मालिक का, यानी उसकी अप्रसन्नता और अपने परमार्थी नुक़सान का बसा हुआ है। वह हर वक़्त और हर हालत में और हर एक से सच्चा बर्तेगा और उसका अंतर और बाहर यकसाँ होगा। और जो कि दुनिया के ख़ौफ़ों के सबब से, थोड़ी-बहुत दुरुस्ती के साथ अपना ज़ाहिर बनाये हुये रखते हैं, उनका, वक़्त कम होने उन ख़ौफ़ों के, पूरा ऐतबार और भरोसा नहीं किया जा सकता है, क्योंकि वे, उस वक़्त के अपने अंदरूनी ख़्यालात के ब-मूजिब, बे-धड़क और बे-ख़ौफ़ बर्तने को तैयार हो जावेंगे।

४१—सच्चे परमार्थी को अपने मन के चाल-चलन और उसके ख़वासों को अपने अंतरी ख़्यालात और तरंगों से जाँचना चाहिये। और जब तक कि अंतर में सफ़ाई न होवे और सच्चे मालिक और सतगुरु का ख़ौफ़ दिल में पैदा न होवे और परमार्थी नुक़सान के बचाने की पक्ष मन में न आवे, तब तक अपने तईं गुनहगार और विकारों से भरा हुआ समझ कर जतन उनके दूर करने का, जैसा कि संतों ने फ़रमाया है, करता रहे और जब-तब चरणों में राधास्वामी दयाल और सतगुरु के प्रार्थना और फ़रियाद भी करता रहे। उनकी मेहर और दया से आहिस्ता आहिस्ता सफ़ाई होती जावेगी और उसी क़दर भजन का रस भी मिलता जावेगा कि जिससे शौक़ और प्रेम बढ़ता जावेगा।

४२—इसमें कुछ शक नहीं कि बग़ैर राधास्वामी दयाल की दया के, जीव की ताक़त नहीं है कि अपने बल से यह काम कर सके। लेकिन जो वह बचन सुन कर और समझ कर सच्चा इरादा इस बात का करेगा कि विकारों को दूर करके और प्रेम की दौलत हासिल करके एक दिन राधास्वामी दयाल के चरणों में पहुँच कर, अमर और परम आनन्द को प्राप्त होऊँ, और जो जुगत कि राधास्वामी दयाल ने फ़रमाई है, उसको कारवाई और अभ्यास थोड़ी-बहुत प्रीति और प्रतीत के साथ शुरू करेगा और अपने

मन और इन्द्रियों की थोड़ी-बहुत सम्हाल और निगहबानी शुरू कर देगा, तो कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल अपनी दया से उसको मदद देते जावेंगे, यानी आहिस्ता २ उसका प्रेम बढ़ाते जावेंगे और एक दिन निर्मल करके अपने चरणों में बासा देवेंगे ।

४३—जिस क़दर कि प्रेम राधास्वामी दयाल के चरणों का बढ़ता जावेगा, उसी क़दर मन और सुरत सिमट कर अंतर में चढ़ते जावेंगे और विकारी अंग और जितने कि फ़िज़ूल ख़्याल और तरंगें हैं, वे सहज में आप ही झड़ते जवेंगे और दिन २ सफ़ाई होती जावेगी और एक दिन काम पूरा बन जावेगा ।

॥ बचन २० ॥

वर्णन भूल और भरम और निर्बलता जीव का और यह कि बिना मेहर और दया कुल्ल-मालिक और संत सतगुरु के, और अभ्यास उस करनी के कि जो वे बतावें, इसका उलट कर निज घर में पहुँचना यानी सच्चा उद्धार मुमकिन नहीं है ।

१—जीव को इस देश में आये हुए बहुत अर्सा गुज़र गया और बहुत से जन्म इसने धारण किये और

अनेक क़िस्मों के संग और सोहबत में रह कर, तरह २ के ख़्वास और स्वभाव इसके मन में पैदा हो गए। यहाँ तक कि यह अपने निज मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल को, जिनकी यह अंश है, और निज धाम को, जहाँ का यह असल में बासी है, बिलकुल भूल गया और इसी देश को अपना वतन और इसी देह को अपना स्वरूप और यहाँ के संग-सोहबत को अपना प्यारा संग समझ कर इन्हीं में बर्तने लगा, और यहाँ ही के भोग-बिलास को अपने आनन्द और सरूर का वसीला जान कर उनके हासिल करने के लिये मेहनत और कोशिश करता है और जब वे प्राप्त होवें तो उन में मग्न होकर बर्तता है और आम तौर पर सिवाय दुनिया और उसके सामान के विस्तार और तरक़्क़ी के, और कोई ज़बर ख़्वाहिश दिल में नहीं लाता है।

२—इस क़दर उतार सुरत का पिंड में नीचे की तरफ़ हो गया है, और इस क़दर तमोगुण यानी ग़फ़लत, भूल और भर्म ने इसको घेर लिया है कि जो कोई इसको निज घर का पता जनावे या उसकी महिमा सुनावे, तो इसकी तवज्जह ऐसे बचनों की तरफ़ बहुत कम आती है और मन में शक और शुभे इस कसरत से भरे हुए हैं कि जब तक कोई अर्सा यह सच्चे भेदी और निज घर के पहुँचे हुए या पहुँचने

के जतन करने वालों का संग न करे, तब तक, वे भर्म और संदेह दूर नहीं हो सकते, और सच्चों के बचन की प्रतीत नहींआ सकती है।

३—एक भारी सबब प्रतीत न आने का यह भी है कि इस दुनिया में बहुत से पाखंडी और रोज़गारी लोगों ने सच्चों की नक़ल करके, अपने तईं पुजवाने या अपनी मान-बड़ाई और धन पैदा करने के लिये दुकान खोल कर, जीवों को अनेक तरह के धोखे दिये, और उनका धन जिस क़दर बन सका, खींचा, और तरह २ के बचन परमार्थी अपनी बुद्धि और चतुराई से गढ़ कर और कुछ इशारा सच्चों के बचनों का लेकर, अनेक तरह की पूजा जारी करी, और अनेक इष्ट जीवों को बँधवाये कि जिसके सबब से परमार्थ में अनेक गिरोह और फ़िरक़े हो गये और उनका आपस में मेल और इत्तिफ़ाक़ न रहा, बल्कि लड़ाई और झगड़े और दुश्मनी आपस में इस क़दर बढ़ गई कि एक दूसरे का खंडन करने लगा और हर एक गिरोह अपने तईं सच्चा और पूरा और दूसरों को झूठा और ओछा समझने और कहने लगा।

४—प्रथम तो जीवों को दुनिया के देह और रोज़गार के कारोबार से फ़ुर्सत बहुत कम मिलती है। और जो थोड़ा वक़्त फ़ुर्सत का मिलता भी है तो वह भोग-विलास और

बे-फ़ायदा बात-चीत और कामों और सैर और तमाशे वग़ैरा में ख़र्च किया जाता है। इस वजह से किसी की तवज्जह परमार्थ और उसकी तहक़ीक़ात की तरफ़ नहीं आती है। और जो किसी को थोड़ा-बहुत शौक़ परमार्थ और उसके खोज का पैदा भी हुआ, तो उसको बड़ी हैरानी और परेशानी होती है कि क्या करूँ और किसके बचन मानूं, क्योंकि हर एक जुदे-जुदे तौर और तरीके से परमार्थ का हाल बयान करता है और जुदी तरकीब वास्ते हासिल करने मोक्ष या उद्धार के बताता है और अपना इष्ट भी जुदा-जुदा मुक़र्रर किया है।

५—ज़ाहिर है कि जो कुल्ल परमार्थ के खोज करने वालों को सच्चे मालिक का पता और भेद मिला होता, तो सब उसी एक का इष्ट बाँधते और उससे मिलने का एक ही रास्ता और एक ही जुगत बयान करते और उन में आपस में मेल और इत्तिफ़ाक़ रहता और बर-ख़िलाफ़ी और ईर्षा और विरोध न होता। लेकिन जब कि वे जुदा २ इष्ट क़रार देते हैं और तरीक़े भी जुदा २ बयान करते हैं और कोई मालिक की मौजूदगी का यक़ीन करते हैं और कोई इनकार करते हैं, तो इससे साफ़ साबित है कि यह सब सच्चे कुल्ल-मालिक से बे-ख़बर हैं और जो कुछ कि ये बातें कहते हैं, वे या तो झूंठी और बनावट की हैं या

ओछी और अधूरी हैं । फिर, ऐसी सूरत में, सच्चे खोजी को सच्ची और पूरी बात का दरियाफ़्त करना निहायत मुश्किल बल्कि ना-मुमकिन हो गया ।

६—मालूम होवे कि सच्चे कुल्ल-मालिक का भेद और पता और मिलने की जुगत, सिवाय उसके निज भेदी के, और कोई नहीं जान सकता । या तो वह अपना भेद आप नर स्वरूप धर कर कहे या अपने निज भेदी,को जो संत सतगुरु हैं, हुक्म देवे कि वे जगत में प्रगट होकर वर्णन करें । इस सबब से यह भेद अब तक गुप्त रहा ।

७—जितने मत कि दुनिया में जारी हैं, वे या तो ब्रह्म अथवा परमेश्वर ने आप जगत में औतार लेकर प्रगट किए और हद्द उनकी ब्रह्म पद तक रही और या उसकी (परमेश्वर की) अंश और कलाओं ने, जैसे ऋषीश्वर और मुनीश्वर और जोगी और जोगेश्वर और पीर, पैग़म्बर और औलिया वग़ैरा ने जारी किये, पर सच्चे कुल्ल-मालिक का भेद और पते का ज़िक्र भी इन मतों में नहीं हैं ।

८—सिवाय इसके, जो जुगती कि इन मतों में वास्ते उद्धार जीव के, मिस्ल प्राणायाम वग़ैरा, बयान की है, वह और उसके संयम निहायत कठिन और ख़तरनाक हैं, और हर एक से, ख़ास कर ग्रहस्थियों से, उनकी कर्रवाई मुश्किल और ना-मुमकिन है ।

९—और जोकि इन सब मतों में वैराग और पुरुषार्थ पर ज़्यादा ज़ोर दिया है और सहारा और आसरा किसी का नहीं रक्खा है, इस सबब से जीव, जो कि इस ज़माने में ख़ास कर, निहायत दुखी और निबल हो रहे हैं और अनेक तरह की चिन्ता और रोग-सोग वग़ैरा में गिरफ़्तार रहते हैं, ताक़त उस कार्रवाई की नहीं रखते यानी न तो उनसे वैराग की धारणा दुरुस्ती से हो सकती है और न वह मेहनत और मशक़्क़त अभ्यास और उसके संयमों की सम्हाल वग़ैरा में, जैसा कि चाहिये, बन पड़ती है। इस सबब से क्या गृहस्थ और क्या विरक्त, थोड़ा-बहुत मामूली साधन दृष्टि या नाम के सुमिरन या ध्यान वग़ैरा का (और वह भी बे-ठिकाने) करके रह जाते हैं। और बाक़ी पोथियाँ पढ़ते या सुनाते हैं और ज़बानी महात्माओं के बचनों का अपनी बुद्धि और समझ के अनुसार, निर्णय और विचार करते रहते हैं।

१०—और बहुत से जीव तो ज़ाहिरी पूजा और पाठ और संयम वग़ैरा में, मिस्ल तीर्थ, ब्रत, मूर्त और मंदिर और नाम के ज़बानी सुमिरन, और पोथियों के पाठ वग़ैरा में लग गये। उनको उस नक़ल के असल की भी, जिसकी पूजा कि उन्होंने इख़्तियार की है, ख़बर नहीं है और इस पूजा से मुराद, औतार और देवताओं के स्वरूप से है जो कि पाषाण और धात के बना कर, मंदिरों में स्थापित किये हैं

या और कोई निशान पिछले महात्माओं का, किसी ख़ास जगह रक्खा है और उसका दर्शन, साथ ताज़ीम और अदब और भाव और प्यार के, करते हैं।

११—मालूम होवे कि इस कलियुग में, मुआफ़िक़ हुक्म कुल्ल-मालिक के, संत भी नर रूप धर कर इस दुनिया में प्रकट हुये और उन्होंने सत्तपुरुष का भेद, जो ब्रह्म और पारब्रह्म के परे है, सुनाया, और जुगत उसके धाम यानी सत्य लोक में पहुँचने की, सुरत-शब्द मार्ग की कमाई से समझाई। लेकिन जोकि कुल्ल जीव परमेश्वर या देवताओं या महात्माओं के इष्ट में बँधे हुये थे और बाहरमुखी पूजा, मूर्त और तीर्थ और निशान वग़ैरा की आम तौर पर जारी थी, इस सबब से संतों के बचन को बहुत कम जीवों के माना। और जब संत और उनके जाँ-नशीन गुप्त हो गए, तब वह भेद और तरीक़ा अभ्यास का भी गुप्त हो गया।

१२—इस तरह जब २ और जहाँ २ संत या उनके साध प्रगट हुये, तो उनके और उनके अभ्यासी जाँ-नशीनों के वक़्त में, कार्रवाई सतसंग और अभ्यास वग़ैरा की जारी रही। लेकिन जब अभ्यासी गुप्त हो गये, तब वह भेद भी गुप्त हो गया। और जो लोग कि पीछे उस मत में शामिल हुये, वे कोई न कोई बाहरमुखी पूजा या कार्रवाई और पोथियों के पढ़ने-पढ़ाने में, मिस्ल और मतों के जीवों के, अटक रहे।

१३—जबकि ऐसी हालत जगत की देखी कि कोई भी सच्चे मालिक के भेद से वाक़िफ़ नहीं रहा और न उसके धाम में पहुँचने का रास्ता और जुगत चलने की जानता है और सच्चे उद्धार का रास्ता बिल्कुल बंद पाया, तब कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल, आप संत सतगुरु रूप धर कर जगत में प्रकट हुये अपना निज भेद और निज धाम का हाल, जो कि ब्रह्म, पार-ब्रह्म और सत्तनाम सत्तपुरुष के परे है, और तरीक़ा अभ्यास सुरत-शब्द योग का आप बयान फरमाया और अभ्यास में ऐसी आसानी कर दी कि हर कोई गृहस्थ और विरक्त और मर्द और औरत उस को सहज तौर से कर सक्ता है।

१४—और उनहोंने दूसरे मतों का हाल भी बयान किया कि जिससे मालूम होवे कि कौन मत कहाँ तक पहुँचा है और उनके आचार्य कहाँ और किसका इष्ट बाँध कर ठहर गये और क्या तरीक़ा अभ्यास का उन्होंने जारी किया।

१५—और एक ख़ास और भारी दया जीवों पर यह फ़रमाई कि जो जीव राधास्वामी मत को क़ुबूल करके और उनके चरणों का इष्ट बाँध कर, जिस क़दर हो सके, अभ्यास सुरत-शब्द योग का शुरू करेगा, तो वे आप उसके सहाई होवेंगे और अपनी दया का बल देकर जिस क़दर करनी मुनासिब है, उससे करा कर, आप उसकी सुरत

को चढ़ा कर धुर मक़ाम में पहुँचावेंगे, और जो मुनासिब होगा तो दो या तीन या चार जन्म में उसका काम पूरा बना देंगे, क्योंकि जीव निहायत निबल और बारम्बार भूलनहार है और अपने बल से कोई कार्रवाई, जैसे संसार से वैराग और चरणों में अनुराग, नहीं कर सकता ।

१५—दूसरी ख़ास और गहरी दया यह फ़रमाई कि अभ्यास को ऐसा आसान कर दिया कि औरतें और मर्द, बग़ैर छोड़ने घर-बार और रोज़गार के, आसानी के साथ थोड़ा-बहुत कर सकते हैं और गृहस्थ में बैठे हुए अपनी सच्ची मुक्ति होती हुई आहिस्ता-आहिस्ता, इसी ज़िन्दगी में देख कर, चरणों में प्रीति और प्रतीत बढ़ा सकते हैं कि जो एक दिन निज धाम में पहुँचा कर छोड़ेगी ।

१७—ऐसी भारी दया और मेहर का कौन शुक्र अदा कर सकता है ? और असल में सच्ची और पूरी दया इसी को कहते हैं कि ग़रीब और लाचार दुखियाओं की, घर बैठे, ख़बर ली जावे यानी कुल्ल-मालिक आप इस लोक में आकर या अपने निज भेदी और प्रेमी को भेज कर और अपनी दया का बल देकर जीवों से थोड़ी-सी मुनासिब और ज़रूरी करनी करावें, और फिर पूरा फल बतौर दान और इनाम के बख़्शें, यानी सहज २ भक्ति और अभ्यास करा कर अपने लोक में बासा देकर जन्म-

मरण और काल और कर्म के कष्ट और क्लेश से बचा लेवें।

१८—ऐसी दया अब तक किसी ने नहीं करी और न कर सकता है और यह सच भी है कि सिवाय कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के ऐसी दया कौन कर सकता है कि थोड़ी सी प्रीति और प्रतीत और सेवा के एवज़ में, जीव के पूरे उद्धार का सिलसिला जारी कर देवे ? यह काम कुल्ल-मालिक आप कर सकता है या उसकी निज अंश, जिसको वह इख़्तियार देवे, कर सकती है। और दूसरे की ताक़त नहीं कि जीवों को काल और कर्म और माया के जाल से निकाल कर, उसके घेर के पार, निज देश में, पहुँचावे।

१९—काल पुरुष यानी ब्रह्म और परमेश्वर और ख़ुदा, माया देश की कुल्ल रचना का मालिक है और उस को मंज़ूर भी यही है कि जीवों को अपनी हद्द के पार न जाने देवे। कुल्ल देवता और माया की शक्तियाँ उसके इख़्तियार में हैं और सब रचना उससे डरती है और उसके हुक्म में चल रही है।

२०—यह काल पुरुष सिर्फ़ सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल और उनकी अंश, संत सतगुरु से डरता है, और उन के हुक्म में दख़ल नहीं दे सकता। यानी जिन जीवों पर कि उन्होंने अपनी दया की मुहर लगा दी, उन को वह रोक

नहीं सकता, बल्कि उनको रास्ता तै करने में अपनी हद के अंदर मदद देता है ।

२१—अब विचारो कि जिस किसी को कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल आप मिले या उनकी अंश से मेला हुआ, वह किस क़दर बड़भागी है ? और जो २ उनकी जैसी-तैसी शरण लेकर, सुरत शब्द मार्ग के अभ्यास में लग गये, वे भी बड़भागी हैं, क्योंकि राधास्वामी मत और उसके अभ्यास के रखवार राधास्वामी दयाल आप हैं, और शरण वालों और जैसी-तैसी करनी वालों की रक्षा और ख़बरगीरी अपनी दया से आप करते हैं । और इस दया और रक्षा का हाल राधास्वामी मत वालों को चंद रोज़ के अभ्यास के बाद आप मालूम हो सकता है और अपना उद्धार होता हुआ इसी ज़िन्दगी में आप देख सकते हैं ।

२२—असल हाल यह है कि बाहरमुखी पूजा और परमार्थी कार्रवाई, जैसे तीर्थ और व्रत और नाम का सुमिरन और ध्यान और पोथियों का पाठ वग़ैरा, हर कोई कर सकता है, लेकिन घट में मन और सुरत का ऊँचे देश में, आकाश के परे चढ़ाना, यह काम मुश्किल है और किसी की ताक़त नहीं कि इसको दुरुस्ती के साथ निर्विघ्न कर सके, जब तक कि कुल्ल-मालिक और संत सतगुरु या साधगुरु अपनी दया का बल साथ न देवें और रास्ते में काल

और कर्म और माया ओर मन के विघ्नों से अपनी रक्षा करके न बचावें ।

२३—यही सबब है कि ऐसे कुल्ल मतों के लोग जो कि दुनिया में जारी हैं, बाहरमुखी कामों में लग रहे हैं और बाज़े नाभि या हिरदे या छठे चक्र में ध्यान भी करते हैं, लेकिन उनको चढ़ाई का फ़ायदा पिंड में भी जैसा कि चाहिये, हासिल नहीं होता । और जो किसी ख़ास मत का सिद्धान्त पद ब्रह्मान्ड में भी है, तो उस के मानने वाले लोग उसके हाल से बे-ख़बर हैं और रास्ते के भेद और चलने की जुगत का तो कुछ ज़िक्र ही नहीं, बल्कि सिद्धान्त पद को सर्व व्यापक मान कर चलना-चढ़ना फ़िज़ूल बताते हैं । इस वजह से इनमें से किसी का भी सच्चा और पूरा उद्धार यानी जन्म-मरण से क़तई छुटकारा नहीं होता ।

२४—यह बात सिर्फ़ राधास्वामी मत में जहाँ कि कुल्ल मालिक आप मददगार हैं, हासिल हो सकती है, क्योंकि जब तक कुल्ल-मालिक आप या संत सतगुरु या साध गुरु उसके भेजे हुये, इस लोक में, जीवों के लेने के वास्ते न आवें, तब तक कोई जीव पिंड के ऊँचे देश और ब्रह्मांड में, और इन दोनों के परे राधास्वामी पद अथवा निर्मल चैतन्य देश में जा नहीं सकता, और न देह और मन और माया और इच्छा और इन्द्रियों और भोगों वग़ैरा से पीछा

छूट सकता है, क्योंकि जब संत सतगुरु या साध गुरू प्रगट होंगे, तब वे जीवों की प्रीति और सब तरफ़ से हटा कर, पहिले अपने चरणों में जोड़ेंगे, और फिर अपने निज रूप यानी चैतन्य शब्द स्वरूप में लगा कर, निज धाम में पहुँचा देंगे ।

२५—बग़ैर प्रेम के यह रास्ता तै नहीं हो सक्ता है और वह प्रेम राधास्वामी दयाल के चरणों में बग़ैर संत सतगुरु या साध गुरू और उनके प्रेमियों के संग-सोहबत के हासिल नहीं हो सकता है और न सच्ची दीनता कुल्ल मालिक और सतगुरु के चरणों में आ सकती है

२३—ऊपर के बयान से ज़ाहिर है कि जीव का सच्चा उद्धार बग़ैर कुल्ल-मालिक यानी धुर की दया के, मुमकिन नहीं है, यानी जब तक कि संत सतगुरु या साध गुरू (जो कि होनहार संत हैं) नहीं मिलेंगे, तब तक भेद कुल्ल-मालिक और रास्ता उस के निज धाम का और तरीक़ा चलने का मालूम न होगा और रास्ता तै करने में मदद नहीं मिलेगी। और यह संत सतगुरु और साधगुरू कुल्ल-मालिक के हुक्म से संसार में आते हैं और सच्चा उपदेश जीवों को देकर उनको निज घर की तरफ़ चलाते हैं। इस वास्ते जब तक कोई जीव कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की शरण न लेवेगा और उनके भेजे हुये संत सतगुरु या साधगुरू से

प्रीति नहीं करेगा, तब तक उसके उद्धार की कार्रवाई शुरू न होवेगी। और जो सच्चे मन से शरण लेकर जैसी-तैसी कार्रवाई यानी अभ्यास सुरत-शब्द मार्ग का शुरू कर देगा और जहाँ तक बन सके, हुकुम और आज्ञा के मुआफ़िक़ अपना चाल-चलन दुरुस्त करता जावेगा, उसको बराबर मदद मिलती जावेगी और कुल्ल-मालिक की मेहर और दया उसको एक दिन दयाल देश में पहुँचा कर छोड़ेगी, चाहे यह काम एक जन्म में बने या दो, तीन या चार जन्म में। हर जन्म में भक्ति और भजन बढ़ते जावेंगे।

२७—जो कोई कहे कि जब संत सतगुरु या साध गुरू प्रगट होवें, तब कुल्ल जीवों का उद्धार होना चाहिये, सो यह बात इस तौर पर दुरुस्त है कि जो जीव उनके सनमुख आवेंगे, उन पर ज़रूर उनकी दया होगी और उनके उद्धार का सिलसिला आगे-पीछे और अबेर-सबेर जारी हो जावेगा यानी जो अधिकारी जीव हैं, वे बहिसाब उत्तम, मध्यम, निकृष्ट और नीचे के, एक, दो, तीन या चार जन्मों में अपना काम बनवा लेंगे और बाक़ी जीवों के घट में दया का बीजा बो दिया जावेगा और वह उनके पिछले कर्मों को काट कर आहिस्ता २ अंकुर पैदा करेगा। और फिर वही जीव, अधिकारियों के शुमार में आजावेंगे और उनके पूरे उद्धार का सिलसिला जारी हो जावेगा,

यानी उनको हर जन्म में संत सतगुरु मिलेंगे और उनकी भक्ति और भजन बढ़ा कर, एक दिन निज धाम में पहुँचा देंगे

२८—संत सतगुरु सब एक हैं, उन में आपस में कुछ भेद नहीं है। जब हुकुम होता है, तब वे जीवों को आम तौर पर उपदेश फ़रमाते हैं और जब तक ऐसी मौज है, सिलसिला सतसंग और उद्धार का जारी रहता है।

२९—इस वास्ते, कुल्ल जीवों को मुनासिब और लाज़िम है कि अपने वक़्त के संत सतगुरु या साधगुरू का खोज करते रहें और जब वे भाग से मिल जावें, तो उन से उपदेश लेकर अभ्यास जारी कर दें, और उनके और कुल्ल-मालिक सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीति और प्रतीत बढ़ाते रहें, तो एक दिन उनका काम पूरा बन जावेगा।

३०—संत सतगुरु और साधगुरू का निशान यह है कि वे सुरत-शब्द मार्ग का उपदेश करेंगे, और आप भी शब्द अभ्यासी होंगे और कुल्ल-मालिक सत्तपुरुष राधा-स्वामी दयाल का इष्ट बँधवावेंगे, और अपने बचन सुना कर,कर्म, भर्म और संशय दूर करावेंगे और बाक़ी पहिचान उनकी सतसंग और उनके मार्ग के अभ्यास से आवेगी।

३१—खुलासा यह कि बग़ैर कुल्ल-मालिक की दया के, संत सतगुरु से मेला नहीं होगा, और न उन में भाव

आवेगा और जब विशेष दया होगी, तब जीव से सुरत-शब्द मार्ग का अभ्यास बन पड़ेगा और वह, संत सतगुरु की आज्ञा अनुसार, बर्ताव शुरू करेगा। और जब और ज़्यादा दया होगी, तब अंतर में उस को रस और आनन्द मिलना शुरू होगा और प्रीति और प्रतीत दिन २ बढ़ती जावेगी और इस तरह रोज़-ब-रोज़ तरक़्क़ी होती जावेगी और एक दिन काम पूरा बन जावेगा।

३२—लेकिन जो कोई इस बात को सुन कर यह कहे कि अब हम को कुछ करना ज़रूर नहीं है, जब दया होगी, वह आप करालेगी, सो यह कहन और समझ इस क़दर ना-दुरुस्त है कि उस को तलाश करना, संत सतगुरु और उनके सतसंग का बहुत ज़रूर है। और जब वे मिल जावें, तब उनके चरणों में प्रेम-प्रीति करना और उनसे उपदेश लेकर अभ्यास शुरू कर देना मुनासिब है। मेहर और दया, इस कार्रवाई में भी संग होगी और बाक़ी जो कुछ करनी दरकार और ज़रूर होगी, वह भी मेहर और दया करावेगी। क्योंकि दुनिया के कामों में भी आदमी तलाश और मेहनत से बाज़ नहीं आते और जो कुछ नतीजा उनकी मेहनत का होता है, वह प्रारब्ध अनुसार मिलता है, फिर परमार्थ में काहिली और सुस्ती और बे-परवाही किसी सूरत में जायज़ और दुरुस्त नहीं हो सकती और जो ऐसा करेगा, वह ख़ास दया से महरूम रहेगा।

२३—अब समझना चाहिये कि करनी और दया संग २ चलेंगी, तब काम पूरा बनेगा, और ज्यों २ करनी बढ़ती जावेगी, उसी क़दर मेहर और दया भी बढ़ती जावेगी। बिना कुल्ल-मालिक और संत सतगुरु की दया के, जो करनी की जावेगी, वह सच्चे उद्धार का फल नहीं देगी, बल्कि अहंकार पैदा करेगी और अभ्यासी को काल और माया के जाल में अटकावेगी और फिर आइंदा की तरक़्क़ी का रास्ता बंद हो जावेगा। और यह हाल उन लोगों का है कि जो, जुगती दरियाफ़्त करके, स्वतन्त्र यानी अपने बल से करनी करना चाहते हैं और सतगुरु से कुछ ताल्लुक़ रखने की ज़रूरत नहीं समझते।

बचन २१

वर्णन इस बात का कि सच्ची मुक्ति क्या है, और कौन जुगत से और कहाँ पहुँचने पर हासिल हो सकती है।

१—मुक्ति रूह की रुस्तगारी या नजात या छूटने और बंधन टूटने का नाम है।

२—बंधन दो क़िस्म के हैं—पहिला, तन, मन और इन्द्रियों का, और दूसरा, स्त्री, पुत्र, कुटुम्ब-परिवार और बिरादरी और धन और माल और भोग-बिलास और हुकूमत और नामवरी वग़ैरा का।

३—पहली क़िस्म का बंधन, जो तन, मन और इन्द्रियों के साथ कहा गया, उसमें स्थूल, सूक्ष्म और कारण और उससे ऊँचे के दर्जे की देह और मन और इन्द्रियाँ शामिल हैं, यानी हर एक दर्जे में रूह का बंधन उस दर्जे के मसाले की बनी हुई देह के साथ होता चला आया है और इसी तरह हर एक दर्जे यानी मंडल के भोग-बिलास और सामान वग़ैरा दूसरी क़िस्म के बंधनों में शामिल हैं।

४—इन बंधनों से अंतर और बाहर छूटने का नाम मुक्ति कहना चाहिये। जो ऐसी हालत जीते-जी न होवे तो इन बंधनों का ढीले होते जाना, वास्ते हासिल होने सच्ची और पूरी मुक्ति के, इसी ज़िन्दगी में ज़रूर चाहिये।

५—जिस तरकीब से कि अंतरी और बाहरी बंधन कम होते जावें, उसी का नाम सच्ची और पूरी जुगत, वास्ते हासिल होने सच्चे उद्धार के, समझना चाहिये और वह सुरत-शब्द मार्ग है। और इस समय में सिर्फ़ राधा-स्वामी मत में उसका अभ्यास जारी है। और किसी मत में उसका भेद और तरीक़ा अभ्यास का पूरा २ और साफ़ तौर पर बिल्कुल नहीं पाया जाता है।

६—अब मालूम होवे कि जहाँ तक माया की हद्द है, वहाँ तक माया के मसाले के ग़िलाफ़ दर्जे-ब-दर्जे रूह पर चढ़ते चले आये हैं, और जिस ग़िलाफ़ में बैठ कर रूह इस

लोक में ब-ज़रिये मन और इन्द्रियों के कार्रवाई करती है, वह स्थूल देह कहलाती है। और इसी देह के साथ कुल्ल बाहर के बंधन इस दुनिया में ताल्लुक़ रखते हैं। सो इनकी मुहब्बत कम होना, पहिले दर्जे की मुक्ति का शुरू होना है।

७—अब ग़ौर का मक़ाम है कि राधास्वामी मत के मुआफ़िक़ सच्ची और पूरी मुक्ति, पिंड और ब्रह्मांड के परे, यानी माया देश के पार, संतों के निर्मल-चैतन्य देश में पहुँच कर हासिल होगी। और वहीं पहुँच कर सुरत विदेह और बे-ग़िलाफ़ हो जावेगी। और नीचे के देश में किसी न किसी क़िस्म के ग़िलाफ़ और उसी दर्जे के मंडल की रचना और भोग-बिलास वग़ैरा में सुरत का बंधन रहा आवेगा और उस बंधन के सबब से दुख-सुख और जन्म-मरण का चक्कर भी जारी रहेगा। इस वास्ते, और किसी नीचे के दर्जे में, चाहे पिंड में होवे या ब्रह्मांड में, सच्ची मुक्ति प्राप्त नहीं हो सक्ती है। और जिस किसी ने कि उन दर्जों में मुक्ति का होना माना है, उन्होंने धोखा खाया। जो उन को संतों के देश की ख़बर होती तो वे रास्ते में न ठहर जाते।

८—ऊपर लिखा गया है कि सच्ची मुक्ति के हासिल करने की जुगत सिर्फ़ राधास्वामी मत में जारी है, सो इसका भेद समझना चाहिये कि कुल्ल रचना धारों की है

और कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों से जो आदि-धार प्रगट हुई, वही आदि-सुरत यानी रूह की धार है। यह धार रास्ते में किसी क़दर फ़ासले पर ठहरती हुई और मंडल बाँध कर रचना करती हुई, पिंड में उतर कर, दोनों आँखों के पीछे मध्य में ठहरी है और वहाँ से बाक़ी के चक्रों में ठेका लेती हुई, गुदा चक्र तक पहुँची है। और इधर, वही सुरत ब-ज़रिये दो धारों के जो कि दोनों आँखों में तिल के मक़ाम पर उतर कर बैठी है, देह और दुनिया की कार्रवाई करती है। अब, जब तक कि यह दोनों धारें उलट कर तीसरे तिल में न पहुंचें, और वहाँ से एक धार होकर सुरत दर्जे-ब-दर्जे उन ठेकों को जहाँ कि उतार के वक़्त ठहरती आई है, पार कर के अपने निज धाम यानी भंडार में न पहुँचे, तब तक सच्चा और पूरा उद्धार या मुक्ति नहीं हो सक्ती है।

६—यह चढ़ाई सुरत की, मक़ाम २ पर शब्द के वसीले से हो सक्ती है। और राधास्वामी मत में हर एक मक़ाम के शब्द का पता और भेद जुदा २ बयान किया है। सो सुरत उस शब्द को सुनती हुई एक मक़ाम से दूसरे और दूसरे से तीसरे और इसी तरह धुर मक़ाम तक चढ़ती चली जावेगी और वहाँ पहुँच कर विश्राम करेगी। वही मक़ाम कुल्ल-मालिक का धाम है और वही निर्मल-चैतन्य देश कहलाता है।

१०—यह काम बग़ैर कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की दया के, नहीं बन सकता है। इस वास्ते, हर एक सच्चे परमार्थी जीव को चाहिये कि प्रथम खोज संत सतगुरु और उनके सतसंग का करे, और जब वे मिल जावें तो उनके चरणों में गहरी प्रीति करे, और अंतर और बाहर सतसंग और सेवा तवज्जह के साथ करके, उनको अपने ऊपर मेहरवान और मुतवज्जह करले। तब, उनकी मेहर और दया से अंतर में रास्ता काटना यानी मन और सुरत की चढ़ाई शुरू होगी और दिन २ रस और आनन्द प्राप्त होकर शौक़ और प्रेम बढ़ता जावेगा।

११—मालूम होवे कि निर्मल-चैतन्य देश में माया नहीं है और वहाँ कुल्ल रचना रूहानी है यानी आनन्द और प्रेम स्वरूप है। और जो कि इस लोक और देह में भी जिस क़दर रस और आनन्द और ज्ञान है, वह सुरत-चैतन्य की धार के सबब से है, और सुरत उसका ख़ज़ाना है, इस वास्ते जो सुरत-चैतन्य का भंडार है, वही प्रेम और आनन्द और ज्ञान का भंडार है। वहाँ दुख-सुख और कष्ट और क्लेश नहीं है, हमेशा आनन्द ही आनन्द एक-रस, रहता है।

१२—पिंड और ब्रह्मांड में भी, जैसे कि माया ऊँचे देश में शुद्ध और लतीफ़ होती गई है, आनन्द और प्रेम

और ज्ञान, दर्जे-ब-दर्जे ज़्यादा होता गया है, लेकिन ब-सबब मिलौनी माया के, थोड़ी-बहुत मलीनता और माया के मसाले की बनी हुई किसी न किसी क़िस्म की देह का संग रहता है। और इसी सबब से थोड़ा-बहुत दुख और जन्म-मरण का कष्ट भी, चाहे ब-देर होवे, जारी रहता है। और यही वजह है कि संत फ़रमाते हैं कि इस देश में यानी पिंड और ब्रह्मांड की हद्द में, सच्चा और पूरा उद्धार और सच्ची मुक्ति नहीं हो सकती।

१३—और यही सबब है कि वेद मत वाले कहते हैं कि हमेशा की मुक्ति होना मुमकिन नहीं है और अबेर-सबेर और बाद प्रलय या महा प्रलय के तो ज़रूर आवागवन की कार्रवाई जारी रहेगी।

१४—भक्ति मार्ग वालों ने चार क़िस्मों की मुक्ति बयान की है—यानी सालोक, सामीप, सारूप और सायुज्ज। पहिली क़िस्म में भगवंत के लोक में बासा मिलता है, दूसरी क़िस्म में भगवंत के निकट विश्राम पाता है, तीसरी क़िस्म में भगवंत का रूप हो जाता है, और चौथी क़िस्म में अपने भगवंत में समा जाता है।

१५—लेकिन ज्ञानियों ने भगवंत का अभाव यानी उसके लोक की प्रलय होती हुई देख कर, बजाय भक्ति के ज्ञान की मुख्यता रक्खी। और ज्ञान से मतलब यह है कि

अपने उपास्य के लक्ष स्वरूप का, जो कि अनाम और अरूप है, दर्शन करके अंत को उस में समा जाना, और स्वरूप के स्थान में, ब-सबब उसके हमेशा क़ायम न रहने के, न ठहरना ।

१६—इसी लक्ष्य चैतन्य को ज्ञानियों ने शुद्ध ब्रह्म माना। पर, संत फ़रमाते हैं कि उसके पेट में माया, बीज रूप में मौजूद थी, लेकिन इन ज्ञानियों को ब-सबब न मिलने भेद संतों के देश के, नज़र न आई और इस वास्ते इन का आवागमन भी क़तई नहीं छूटा ।

१७—वेद में जो उपासना वर्णन करी है, वह ब्रह्म-पद यानी परमेश्वर की है, और पीछे करके, ब्रह्म के औतार स्वरूप और देवताओं वग़ैरा की जारी हुई, और उसके पीछे, सिर्फ़ नक़ल यानी मूर्तों की भक्ति जारी हो गई और असल का भेद और उसके प्राप्ति की जुगत यानी अंतर-अभ्यास बिल्कुल गुप्त हो गया ।

१८—अब जो कोई उन को असल का भेद और उसके प्राप्ति की जुगत बतावे, तो उससे लड़ने और झगड़ने को तैयार होते हैं और सिर्फ़ मूर्ति पूजा ही में मग्न और तृप्त हुए नज़र आते हैं। अब ख़्याल करो कि इस मूर्खता और ग़फ़लत से किस क़द्र परमार्थी नुक़सान जीवों का हो रहा है, यानी जड़ की पूजा करके सब

जीव जड़ हो रहे हैं, यानी नीचे की जोनों में उतरते चले जाते हैं।

१९—जो ब्रह्म-पद या उसके औतार स्वरूप की भक्ति, अंतर-अभ्यास के संग जारी रहती, तो भी किसी क़दर फ़ायदा जीवों को हासिल होता, यानी ऊँचे देश (ब्रह्मांड की हद्द में) बासा पाते और बहुत काल वहाँ सुख भोगते। लेकिन सिर्फ़ मूर्ति और तत्वों की पूजा से, बग़ैर भेद उनके असली स्वरूप और स्थान के, जीवों की करनी मुफ़्त बरबाद जाती है यानी सिर्फ़ शुभ कर्म का फल मिलता है और भगवंत के लोक में रसाई नहीं होती है।

२०—जो भक्ति कि संतों ने जारी फ़रमाई, वह कुल्ल-मालिक सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल की है, जिसका धाम ऊँचे से ऊँचा, पिंड और ब्रह्मांड और माया के घेर के पार, निर्मल-चैतन्य देश कहलाता है। वहाँ माया की मिलौनी बिलकुल नहीं है। इसी सबब से वह देश महा आनन्द और महा प्रेम और महा ज्ञान का भंडार है, और अनन्त और अपार और अगाध और अरूप और अनाम उसकी सिफ़त है। वहाँ पहुँच कर सुरत, अपने सच्चे माता-पिता राधास्वामी दयाल के दर्शनों का बिलास देखती है। वह देश अजर और अमर है और कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल भी अजर और अमर हैं, और वहाँ का सुख और

आनंद भी अजर और अमर है, और यह सुरत भी वहाँ पहुँच कर अमर हो जावेगी।

२१—इस वास्ते, संतों ने भक्ति और दीनता और प्रेम की मुख्यता रक्खी है, क्योंकि उनका भगवंत कुल्ल-मालिक और उसका धाम और उसकी भक्ति और सेवक—सब अमर और अजर हैं, और धुर मक़ाम में पहुँचने पर सेवक यानी सुरत को इख़्तियार रहता है कि जब चाहे तब अपने स्वामी से मिल जावे, और जब चाहे तब अलेहदा होकर और सन्मुख रह कर दर्शनों का आनन्द और बिलास करे। इन दोनों हालतों को भेद-भक्ति और अभेद-भक्ति कहते हैं। बग़ैर कुल्ल-मालिक की भक्ति के, किसी सूरत में किसी का पूरा उद्धार नहीं हो सकता।

२२—पूर्ण भक्ति से मतलब यह है कि भक्त, संतों की जुगत के मुआफ़िक़ अभ्यास करके अपने भगवंत के निज धाम में पहुँच कर चरणों में बासा पावे और दर्शन का रस और आनन्द लेवे। और वह निज धाम पिंड और ब्रह्मांड के परे है। इसी पूर्ण भक्ति का नाम पूरी मुक्ति और सच्चा और पूरा उद्धार है। इस सच्चे उद्धार और सच्ची मुक्ति की प्राप्ति के वास्ते, कुल्ल जीवों को थोड़ा-बहुत जतन करना (संतों की जुगत के मुआफ़िक़, मुनासिब और लाज़िम है।

बचन २२

सच्चा मत और सच्चा पंथ क्या है, और सकी कार्रवाई क्या है, और किस तौर से होती है, और उससे क्या फ़ायदा हासिल होगा ?

१—सच्चा मत उसको कहते हैं कि जो सच्चे की ख़बर और भेद और समझौती देवे, और सच्चा वह है कि जो हमेशा एक-रस क़ायम रहे और जिसमें कभी तग़ैयुर और तबद्दुल वाक़ै न होवे।

२—सच्चा पंथ उसको कहते हैं कि जो ऐसे सच्चे से (कि जिसकी तारीफ़ ऊपर की गई) मिलने का रास्ता और जुगत चलने की बतावे। सो जहाँ सच्चा मत है, वहीं सच्चे पंथ का भी भेद होगा, यानी ये दोनों, सच्चा मत और सच्चा पंथ बतौर जोड़े के हैं कि जहाँ एक होगा, वहाँ दूसरी भी ज़रूर होगा।

३—सच्चे में बड़े भेद हैं यानी एक की निसबत दूसरे को, जो ज़्यादा देर ठहरे, लोग सच्चा कहते और मानते हैं। लेकिन यह कथन और मानन दोनों ग़लत हैं।

४—असल सच्चा वही है कि जो ब-मुक़ाबले कुल्ल रचना के, हमेशा एक-रस क़ायम है और जो रचना नहीं भी होवे तो भी ब-दस्तूर क़ायम और मौजूद रहता है ।

५—इस असली सच्चे का पता और भेद, सिवाय संतों के, जो कि उसके हमेशा संग रहते हैं, और किसी को नहीं मालूम हुआ ।

६—इस दुनिया में उसका भेद या तो उसने आप सतगुरु रूप धर कर प्रगट किया या उसकी आज्ञा से संतों ने, जब २ वे उसके हुक्म के मुआफ़िक़ इस लोक में आये, ज़ाहिर किया ।

७—ऊपर जो लिखा गया है कि लोगों ने एक के मुक़ाबले में दूसरे को सत्त माना है और ऐसे सत्त कितने हो हैं, इसका मुफ़स्सिल बयान इस तौर पर है कि परमार्थ में जो कोई खोज लगाता हुआ चला और उसको एक पद् ऐसा मिला या नज़र आया कि जिससे कुल्ल नीचे की रचना पैदा या ज़ाहिर होती हुई और जिसके आसरे वह ठहरी हुई मालूम पड़ी, और उस पद् का उस खोजी को पूरा २ भेद न मालूम पड़ा और न उसको वह पद् जैसा कि असल में था, दिखलाई दिया यानी वह उसका अंत और पार न पा सका, तो उसने उसी को, मालिक उस रचना का, क़रार देकर सत्तपद् माना । जैसे मसलन यह सूरज

अपने मंडल की रचना का मालिक और कर्ता क़रार दिया जावे या इसके ऊपर का सूरज, जो दूरबीन से भी नज़र नहीं आता है, मालिक और सत्त माना जावे या यह कि उसके पूरे का सूरज जो पार-ब्रह्म स्वरूप है, कुल्ल-मालिक गरदान कर उसी पर ख़ातमा किया जावे और वही सत्त और शुद्ध माना जावे।

८—ऊपर जो तीन सूरज बयान किये गये, उनमें से पहिला तो निपट संसारी और नादानों का ख़ुदा और मालिक हो सकता है, और दूसरा, योगियों का, और तीसरा, योगेश्वरों का मालिक है। उसके पार का भेद किसी जीव या महात्मा को नहीं मालूम पड़ा, बल्कि ख़ुद उसके भी स्वरूप का वार और पार न पाया। इस सबब से, इन तीनों सूरजों को कुल्ल मत वालों ने जो कि अनजान हैं या योगी या योगेश्वरों या औतारों और पैग़म्बरों के मौतक़िद और पैरो हैं, सत्त और मालिक माना। लेकिन असल में इनमें से कोई भी कुल्ल-मालिक या असली सत्त नहीं है, क्योंकि पार-ब्रह्म रूपी सूरज के परे सत्तनाम सत्तपुरुष रूपी सूरज है और वह सच्चे कुल्ल-मालिक और असल सत्तपद राधास्वामी दयाल के आसरे क़ायम है।

९—यह सूरज जिनका ऊपर ज़िक्र हुआ, एक की ब-निस्बत दूसरा, ज़्यादा ताक़त वाला और बहुत बड़ा और

ज़्यादा देर ठहरने वाला है, यहाँ तक कि दूसरे और तीसरे सूरज की प्रलय होती हुई, किसी बिरले योगेश्वर ही ने देखी, और तीसरे यानी पार-ब्रह्म रूपी सूरज का आदि और अंत और उसका वार-पार किसी को भी नहीं मालूम हुआ, लेकिन इनको सत्त कहना ब-मुक़ाबले सत्तनाम सत्त पुरुष राधास्वामी पद के, जो कि अमर और अजर और सदा एक-रस क़ायम रहते हैं और ब्रह्मांड के परे हैं, दुरुस्त नहीं है। और राधास्वामी पद तो अनंत और अपार और अकह और अगाध है और असली सत्त वही है और उसका देश भी (यानी राधास्वामी पद से सत्तलोक तक) अजर और अमर है यानी हमेशा एक-रस क़ायम रहता है।

१०—इस असली सत्तपद यानी राधास्वामी धाम का जो कोई भेद बतावे और वहाँ पहुँचने का रास्ता लखावे, उनको संत या साध कहते हैं और उनके भेद को सत्त मत और सत्त पंथ कहना चाहिये। और यह भेद और लखाव सिर्फ़ राधास्वामी मत में जो कि कुल्ल-मालिक ने आप प्रगट किया, मौजूद है। और किसी मत में इसका ज़िक्र भी नहीं है।

११—अब समझना चाहिये कि राधास्वामी दयाल ने कुल्ल रचना के तीन दर्जे मुक़र्रर किये हैं। पहिला, निर्मल-चैतन्य यानी रूहानी देश है, जहाँ माया की मिलौनी

नहीं है और यही सच्चे मालिक का निज धाम और देश है। और दूसरा निर्मल-चैतन्य और शुद्ध-माया देश है जिसको ब्रह्मांड कहते हैं। इस दर्जे के शुरू में माया प्रगट हुई और पुरुष-प्रकृति और माया-ब्रह्म का स्थान इसी दर्जे में है और वही सरगुण और निरगुण ब्रह्म का मक़ाम है। तीसरा दर्जा, निर्मल-चैतन्य और मलीन माया देश है। सुरत-चैतन्य और मन का बासा इसी दर्जे में है और वही आत्मा-परमात्मा और वैराट स्वरूप का स्थान है।

१२—जो कि पहिले दर्जे में सिर्फ़ निर्मल-चैतन्य है और रचना भी वहाँ की ऐन रूहानी है यानी सुरत-चैतन्य की चैतन्य रूपी देह या ग़िलाफ़ है, इस वास्ते इसी देश में पहुँच कर सच्ची मुक्ति हासिल होगी यानी मन और माया के मसाले की बनी हुई देह से आज़ादगी हो जायगी।

१३—और उस पहिले दर्जे में संतों की जुगत की कमाई करने से पहुँचना होगा, और वह कमाई कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरू की दया से बन पड़ेगी।

१४—और वह जुगत यह है कि जिस धार पर कि सुरत पहिले दर्जे से उतर कर तीसरे दर्जे यानी पिण्ड में, आँखों के मक़ाम पर बैठी है, वहाँ से उसको, उसी धार को पकड़ के, उलटे चढ़ा कर, उसके निज धाम में पहुँचाना।

और वही धार शब्द और प्रकाश और नूर और जान की धार है। सो शब्द की धुन को सुनते हुये और प्रकाश को देखते हुये मन और सुरत घट से चढ़ेंगे।

१५—यह भेद और जुगत संत सतगुरु या साधगुरु या उनके सच्चे और प्रेमी मेली से मालूम होगी। और उन्हीं के सतसंग और बानी और बचन के पढ़ने और सुनने से जीव के भर्म और संशय और असत्य पद और पदार्थ में पकड़ और झुकाव दूर हो सकते हैं। और दूसरे के सतसंग या बानी और किताबें पढ़ने और सुनने से यह बात हरगिज़ हासिल नहीं हो सकती है, और न कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में गहरी प्रीति और प्रतीत पैदा होगी। और इस सबब से चाहे कोई जिस क़दर मेहनत करे, सुरत और मन की चढ़ाई, घट में ऊँचे देश की तरफ़ नहीं हो सकेगी।

१६—ऊपर बयान हुआ है कि बिना दया कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के, राधास्वामी मत का अभ्यास दुरुस्ती से नहीं बन पड़ेगा। इस वास्ते लाज़िम और ज़रूर है कि सच्चा परमार्थी पहिले खोज कर के, संत सतगुरु या साधगुरु या उनके सच्चे प्रेमी से मिले, और भेद-भाव समझ कर उपदेश घट में चढ़ाई की जुगत का लेवे। तब उसका सूत यानी सिलसिला कुल्ल-मालिक

के चरणों से लगेगा। और जिस क़दर वह अभ्यास करता जावेगा, उसी क़दर उसको अपने अंतर में दया भी मालूम पड़ती जावेगी और तब उसका रास्ता सुखाला तै होवेगा।

१७—जिस किसी के हृदय में सच्ची लाग परमार्थ की है और संसार की तरफ़ से किसी क़दर चित्त में वैराग और उदासीनता भी है और संत सतगुरु या साधगुरू और उनके सतसंग की सच्चे मन से शरण ली है, तो उसी को राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु अपनावेंगे, और फिर उसकी सब तरह से सम्हाल, अंतर और, बाहर आप करेंगे। और जब तक कि उसको निज धाम में नहीं पहुँचावेंगे तब तक उसकी बराबर सम्हाल और तरक़्क़ी फ़रमाते रहेंगे, यानी उसके हृदय में प्रीति और प्रतीत बढ़ा कर करनी करावेंगे, चाहे यह काम एक जन्म में बने या दो या तीन या चार जन्मों में।

१८—जो दर्जे कि ऊपर बयान किये गये, उन में से हर एक दर्जे में कई मंज़िलें या मक़ाम हैं। उनका भेद, तफ़सील के साथ, उपदेश के वक़्त समझाया जाता है और उसी का नाम सत्त मत है और इसी रास्ते का नाम सत्त पंथ है। जिस को यह भेद और रास्ता और चलने की जुगत मालूम नहीं है, वह हरगिज़ निज धाम में नहीं पहुँचेगा, और इस वास्ते उसका सच्चा उद्धार भी नहीं होगा, यानी

वह, असत्य देश में रह कर, हमेशा ऊँचे-नीचे लोकों में, देहियों के साथ दुख–सुख और जन्म-मरण का कष्ट भोगता रहेगा।

१६—इस वास्ते कुल्ल जीवों को मुनासिब है कि इस दुनिया की कार्रवाई और इसकी रचना की हालत देख कर, अमर देश और अमर सुख और आनन्द का खोज करें। और जोकि उसका पता संत सतगुरु या साध गुरू या राधास्वामी मत की संगत से मिल सकता है, तो चाहिये कि इन्हीं को तलाश कर के और उन से उपदेश लेकर, सुरत-शब्द मार्ग का अभ्यास शुरू कर दें। फिर जो कुछ कि फ़ायदा उस अभ्यास से हासिल होगा, वह उनको अपने अंतर में और अपनी हालत से आप ही ज़ाहिर होता जावेगा और फिर प्रीति और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरणों में बढ़ती जावेगी, और अभ्यास का शौक़ भी तेज़ होता जावेगा और इस तौर से एक दिन सब काम दुरुस्त बन जावेगा।

बचन २३

असली सत्त में, जो अमर, अजर और परम आनन्द स्वरूप है, पता और भेद लेकर, प्यार और भाव लाना और बढ़ाना चाहिये, तब असत्य यानी माया के देश और जन्म-मरण से छुटकारा होगा।

१—जहाँ जिस को भाव और चाव या प्रीति है, वहीं उसकी तवज्जह या ख़्याल जाता है और जिस क़द्र ज़्यादा दर्जे के प्रीति है, उसी क़द्र उसका चित्त या ख़्याल, बार बार प्रीयतम की तरफ़ जाता है। और जो बहुत ज़्यादा दर्जे की प्रीति है, तो वे दोनों अक्सर एक ही जगह यानी संग रहते हैं, ताकि हर वक़्त एक की नज़र दूसरे पर पड़े और जब चाहें जब बात-चीत करें, और संग उठें-बैठें।

२—जिस क़द्र जिसको जिस किसी में भाव और प्यार है, उसी क़द्र उसको अपने प्रीयतम से मिलने या उसका ख़्याल करने में रस आता है और ख़ुशी होती है और उसी क़द्र प्रीयतम की तरफ़ से भी खैंच और मेल और तवज्जह होती है और उसको भी मिलने और ख़्याल करने में वैसा ही रस मिलता है और तबियत ख़ुश होती है। और यही प्रीति ज़्यादा तवज्जह और ख़्याल करने और अक्सर मिलने से बढ़ती जाती है और दोनों की आपस में मुआफ़िक़त और मुहब्बत भी ज़्यादा होती जाती है, यहाँ तक कि एक दूसरे के हृदय में बस जाता है।

३—और जब यही प्रीति ज़्यादा से ज़्यादा हो जाती है, तब दोनों शख़्सों के मन और उनकी समझ-बूझ और चाह और पकड़ वग़ैरा भी एक हो जाती हैं और एक का कहन, दूसरा, बे-उज़्र, और ख़ुशी के साथ मानता है और जो

काम एक करता है, वह दूसरे को पसंद आता है और दोनों को आपस में एक दूसरे की ख़ुशी और रज़ामंदी का ख़्याल हमेशा पेश-ए-नज़र रहता है और एक दूसरे की सेवा और ख़िद्मत करने और हर काम में मदद देने को, उमंग के साथ, तैयार रहता है ।

४—जहाँ इस क़िस्म की प्रीति दो शख़्सों की आपस में है, वहाँ एक के सुख में दूसरा भी सुखी और दुख और तकलीफ़ में दूसरा भी दुखी रहता है । अगर किसी वक़्त में दूर भी होवें तो अक्सर ऐसा इत्तिफ़ाक़ होता है कि सख़्त तकलीफ़ के वक़्त एक की तबियत का असर, थोड़ा-बहुत, दूसरे की तबियत पर रूहानी और क़ुदरती तौर पर फ़ौरन पहुँच जाता है ।

५—अब ख़्याल करना चाहिए कि जब एक शख़्स का एक दूसरे शख़्स के साथ मोहब्बत करने का यह नतीजा होता है तो जब कि किसी की बहुत से आदमियों और जानवरों में, और माल और असबाब और मकानात वग़ैरा में, अपने २ दर्जे के मुआफ़िक़ प्रीति, और बन्धन मन का हुआ, तब उस शख़्स की क्या हालत होगी ? यानी वह कभी दुख, कभी सुख और कभी चिन्ता और फ़िक्र के चक्र में हमेशा गिरफ़्तार रहेगा और उसको दवा-दिवश यानी दौड़-धूप भी अपने प्रीतिवान और मित्रों से मिलने की, और उनके

कामों में मदद देने को हमेशा लगी रहेगी और बहुत कम वक़्त फ़ुर्सत का मिलेगा ।

६—ज़ाहिर है कि यह प्रीति और मोहब्बत दुनियावी कहलाती है और इस में ब-सबब नाशमान होने इस लोक की रचना के, वियोग यानी जुदाई भी ज़रूर होवेगी, और फिर उसका दुख भी जिस क़दर गहरी प्रीति होगी, उसी क़दर सहना पड़ेगा । खुलासा यह कि यहाँ सुख थोड़ा और चन्द-रोज़ा होता है और दुख घनेरा और बाज़ी हालतों में उम्र भर सहना पड़ता है ।

७—अब जानना चाहिये कि जहाँ जिसकी प्रीति है और वहीं उसका ख़्याल दौड़ २ कर जाता है, तो उसके साथ सुरत यानी चैतन्य की धार भी बराबर जाती है और जिस क़दर जिसकी जहाँ प्रीति है, उसी क़दर उसके चैतन्य और सुरत और मन की धार उसके प्रीयतम में समाई रहती है और दोनों तरफ़ से धार की आमद-ओ-रफ़्त ख़्याल के साथ जारी रहती है ।

८—यह हाल हर एक शख़्स पर उसके रोज़मर्रा के व्यवहार और बर्ताव में गुज़रता रहता है यानी जिस वक़्त वह किसी शख़्स या मक़ाम या चीज़ का, जिसमें उसके मन की प्रीति या बंधन है, ख़्याल करता है, उस वक़्त और जितनी देर कि उसका ख़्याल उधर लगा रहता है, वह उतनी देर

वहीं यानी अपने प्रीतिवान शख़्स वग़ैरा के पास ठहरता है और उस वक़्त जहाँ वह बैठ कर ख़्याल कर रहा है, मौजूद नहीं है। जैसे जब कोई किसी काम में गहरी तवज्जह के साथ मशग़ूल होता है या कोई सोच और विचार कर रहा है या किसी अपने प्यारे का चिन्तवन कर रहा है, उस वक़्त जो कोई उसके सामने आवे या बैठ या बात-चीत करे, तो वह बिल्कुल नहीं देखता है और न सुनता है और, जब उससे ताकीद के साथ कोई पूछे तो जवाब देता है कि मेरा ख़्याल या चित्त इस वक़्त और तरफ़ था। इससे ज़ाहिर है कि वह शख़्स उस वक़्त, बा-वजूद बैठे होने और आँख, कान खुले होने के, उस चिन्ता और ख़्याल की हालत में वहाँ मौजूद न था, क्योंकि उसके मन और सुरत की धार उस वक़्त उस तरफ़ को रवाँ हो गई थी कि जिस तरफ़ का वह चिन्तवन और ख़्याल कर रहा था।

६—इस तरह से हर एक शख़्स के मन और सुरत की धारें अनेक जीवों और पदार्थों में, दिन और रात, बाहर की तरफ़ बहती रहती हैं और चैतन्यता का घाटा होता रहता है, जैसा कि देखने में आता है कि जिस आदमी को कारोबार और चिन्ता और फ़िक्र ज़्यादा रहता है, उसी क़दर उसका जिस्म नाज़ुक और कम ताक़त वाला होता है और खाने की मिक़दार भी उसकी किसी क़दर कम हो जाती है।

लेकिन जो किसी को दिल-पसंद कारोबार ज़्यादा करने पड़ें और किसी तरह की चिन्ता और फ़िक्र न होवे यानी उसका मन बहुत जगह बँधा न होवे, तो वह, ब-सबब ख़ुशी के, फूलता रहता है और कम ताक़ती उसको नहीं सताती है। सबब इसका यह है कि पहली सूरत में उसकी धारें बहुत फैलती रहती हैं, और दूसरी हालत में, ब-सबब मन के ख़ुश होने और किसी क़दर बे-परवाह हो जाने औरों की तरफ़ से, धारों का फैलाव कम होता है।

१०—जहाँ जिसकी बहुत ज़्यादा प्रीति है तो उसका असर इसी ज़िन्दगी में नहीं, बल्कि आइन्दा की ज़िंदगी यानी जन्म में भी पहुँचता है, और उसी के मुआफ़िक़, दूसरे जन्म में संयोग जीवों के साथ होता है, या उन्हीं शौक़ों में, जो एक जन्म में बहुत ज़बर रहे, दूसरे जन्म में भी बर्ताव करता है।

११—ऐसी हालत जगत के जीवों की प्रीति की और उनके भर्मने की देहियों और पदार्थों में, और मेल होने अनेक क़िस्म के जीवों और सामान के साथ, मुवाफ़िक़ हर एक के ज़बर बंधन और शौक़ के, देख कर, संत सतगुरु अति दया करके, जीवों को सच्ची समझौती और सच्चे मालिक से मिलने की जुगत फ़रमाते हैं कि जिससे जन्म मरण का चक्कर जल्दी छूट जावे, और जीव, नाशमान रचना

के देश से न्यारे हो कर, अमर देश और अमर आनन्द के स्थान पर पहुँच कर, और अपने सच्चे मालिक का दर्शन पाकर, हमेशा को सुखी हो जावें ।

१२—जो कोई बड़ा आदमी है यानी धनवान और हुकूमतवान या गुणवान या रूपवान या कोई ख़ास हुनर वाला है, या जो कोई अपने साथ किसी क़िस्म की भलाई और सलूक करे या किसी तकलीफ़ और मुसीबत के वक़्त मदद देवे, तो ऐसे शख़्स में बहुत जल्द हर किसी को भाव और प्यार आता है, और उसकी सेवा और ख़िदमत करने को दिल-ओ-जान से तैयार हो जाता है और जो वह हुक्म और आज्ञा करे या कोई बचन कहे, उसको खुशी-दिल के साथ मानता है ।

१३—अब ख़्याल करो कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और उनके ख़ास पुत्र या मुसाहिब संत सतगुरु रचना भर में सब से बड़े और सर्व-समर्थ और सर्व-गुण निधान हैं, और जीवों का हित और आराम सदा उनके पेश-ए-नज़र रहता है और सख़्ती और नरमी और खुशी और ग़म के वक़्त वे हमेशा जीव के संग रहते हैं और जिस क़दर मुनासिब होता है, उसकी सम्हाल और रक्षा हर तरह से फ़रमाते हैं और हरचन्द ज़ाहिरी तौर से उनका दर्शन कठिन मालूम होता है, पर संत सतगुरु रूप में, जिस पर मेहर होवे, उसको सहज दर्शन प्राप्त हो सकते हैं ।

१४—सब कहते हैं कि कुल्ल-मालिक सब जगह मौजूद है। और जो ऐसा है तो वह हर एक के अंग-संग रहता है। लेकिन परख और पहिचान उसकी किसी को नहीं हो सकती है, जब तक कि राधास्वामी मत में शामिल होकर उसकी जुगत का कोई दिन अभ्यास न करे।

१५—अब ख़्याल करो कि ऐसे कुल्ल-मालिक सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल और उनके प्यारे संत सतगुरु के चरणों में किस क़दर भाव और प्यार जीवों को लाना चाहिये? पर शर्त यह है कि उनका या तो प्रत्यक्ष दर्शन मिले या घट में, उनके नाम, रूप, लीला और धाम का पूरा २ पता मालूम होवे, और भी जुगत उनसे मिलने की बताई जावे, तो अल्बत्ता जीवों को, थोड़ा-बहुत भाव और प्यार आवेगा। और जो संत सतगुरु रूप में दर्शन होवे तो उसकी भी थोड़ी-बहुत पहिचान आनी चाहिये, नहीं तो जैसा भाव और प्यार चाहिये, न तो कुल्ल-मालिक और न संत सतगुरु के चरणों में आ सकता है, क्योंकि रोज़-गारी और पाखंडियों ने ठगाई करके जीवों को बहुत डरा दिया है और अनेक भर्म उनके मन में पैदा कर दिये हैं कि जिससे जब-तक सच्चे और झूठे की छाँट न होवे और उनको थोड़ी-बहुत पहिचान न आवे, तब-तक, वे भाव और प्यार लाने में झिझकते और डरते हैं।

१६—जो कोई परमार्थ का बड़भागी है या जिस पर

धुर की मेहर और दया है, उसी को दर्शन करके, संत सतगुरु में थोड़ा-बहुत भाव और प्यार आवेगा और उनके बचन उसको प्यारे लगेंगे, और उनसे जुगती लेकर और थोड़ा-बहुत अभ्यास करके, उसको अंतर में रस और आनन्द मिलेगा और मेहर और दया के पर्चे भी मालूम होवेंगे। तब, दिन २ उसकी प्रीति और प्रतीत संत सतगुरु और कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में बढ़ती और पकती जावेगी और वही शख़्स सतगुरु के बचन को, जिस क़दर कि ज़रूरी है, मानेगा, और उसके मुआफ़िक़ कार्रवाई करके उसका फल और फ़ायदा इसी जिन्दगी में देखेगा।

१७—इसी तरह जिस किसी को संत सतगुरु और कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीति और प्रतीत आई है, और उनको जुगत के अभ्यास से कुछ २ रस अन्तर में मिला है, उसी के मन और सुरत की धारें बारम्बार अन्तर में ऊँचे देश की तरफ़ चढ़ेंगी और दिन २ संसार के भोग और बिलास, फीके और रूखे होते जावेंगे, और उस तरफ़ को धारों का झुकाव भी कम होता जावेगा।

१८—इसी तौर से आहिस्ते २ दुनिया और उसके समान से ऐसे प्रेमियों की तबियत हटती जावेगी और उनके मन और सुरत निज-घर की तरफ़ उमंग और प्रेम के साथ रवाँ होते जावेंगे और एक दिन उसकी सुरत धुर धाम में

पहुँच कर सच्चे मालिक का दर्शन पावेगी और अमर आनन्द को प्राप्त होगी ।

१६—जो कि कुल्ल-मालिक का भेद और मिलने का रास्ता और चलने की जुगत, बग़ैर संत सतगुरु या उनके सच्चे प्रेमी के, नहीं मालूम हो सकती है और न उनके और सच्चे मालिक के चरणों में, बिना उनके सतसंग और दया के, प्यार और भाव आ सकता है, इस वास्ते कुल्ल जीवों को, जो कि संसार और उसके समान की नाशमानता देख कर सच्चे और अमर सुख का खोज लगा कर उसको प्राप्त होना चाहते हैं, मुनासिब और लाज़िम है कि पहिले संत सतगुरु या उनके प्रेमी-जन का खोज करें, और जब भाग से वे मिल जावें, तब शौक़ और उमंग के साथ उनके बचन सुनें और समझें और विचारें और सुरत-शब्द का उपदेश लेकर अभ्यास शुरू कर दें । तब, थोड़े दिनों में उनकी और उनकी जुगत की कुछ पहिचान आवेगी और उसी मुआफ़िक प्रीति और प्रतीत भी चरणों में पैदा होगी और फिर भक्ति और भाव बढ़ता जावेगा और दिन २ हालत भी बदलती जावेगी, यानी संसार की तरफ़ से किसी क़दर उदासीनता और चरणों में प्रेम और अनुराग बढ़ता जावेगा ।

२०—जब तक, इस तौर से कारवाई नहीं की जावेगी, तब तक मन और सुरत की धारों का झुकाव, भोगों में, बाहर

की तरफ़ रहेगा और मालिक के चरणों में प्रेम और भाव नहीं आवेगा और इस वास्ते माया के घेर से सुरत न्यारी नहीं होगी और वे जीव बारम्बार देह धर कर दुख-सुख भोगते रहेंगे ।

२१—खुलासा यह कि जब-तक जीव को, प्रीति और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरणों में नहीं आवेगी, तब-तक धारों का रुख़ नहीं बदलेगा और बाहरमुख कार्रवाई कम न होवेगी, और इस सबब से असली सत्त से मेला भी नहीं होवेगा और न परम और अमर आनंद के धाम में पहुँचना होगा और जीव तुच्छ और नाशमान सुखों के वास्ते इस लोक में पचते और खपते रहेंगे और जन्म-मरण का दुख सहते रहेंगे ।

२२—ऊपर के लिखे हुए से मालूम होगा कि कुल्ल जीवों को मुनासिब और ज़रूर है कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी और संत सतगुरु के चरणों में, जैसी बने तैसी प्रीति लावें, तो जिस दर्जे की प्रीति होगी, उसी क़दर उनके मन और सुरत की धार, घट में ऊँचे देश की तरफ़ बारंबार रवाँ होकर, चरण-रस लेवेगी और बचन-बानी निहायत प्यारे लगेंगे और दर्शनों की तलब और तड़प थोड़ी-बहुत मन में लगी रहेगी, और सेवा की उमंग उठा कर तन, मन, धन भी परमार्थ में लगावेगा, और भेद और जुगत दरियाफ़्त करके,

मोहब्बत के साथ अभ्यास में भी ज़ोर देगा। यही स्वरूप सच्ची और निर्मल भक्ति का है। और जब महिमा सुन कर जीव इस काम में लगा, तब राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की दया आवेगी और मेहर से ऐसे भक्त का कारज वे आप बनावेंगे और मुनासिब तौर पर अंतर और बाहर के सतसंग में रस देकर उसकी भक्ति को बढ़ाते जावेंगे कि जिस से एक दिन धुर धाम में पहुँच कर परम आनन्द को प्राप्त होगा।

२३—भक्ति और प्रेम का दर्जा बड़ा भारी है। जिस घट में ये प्रगट होवें, वही जन बड़भागी है और वही दयापात्र है और वही एक दिन सच्चे मालिक के महल में दख़ल पावेगा।

२४—इस वास्ते, सब जीवों को इस बात का ख़्याल और विचार रखना चाहिये कि गहरी प्रीति सच्चे मालिक के चरणों में लावें और उसके चरणों में अपना मज़बूत नाता जोड़ें, और दुनिया और उसके सामान में मामूली प्रीति, गुज़ारे के लायक़ करें, ताकि ज़बर बन्धन न होने पावे। जैसे कोई परदेश को रोज़गार के वास्ते जावे और वहाँ के लोगों से कारँवाई के लायक़ प्रीति-भाव करे और जब मौक़ा वतन के जाने का मिले तो फ़ौरन् अपने देश को ख़ुशी के साथ रवाना होता है और उन परदेशियों की प्रीति से ज़रा भी उसके मन को बंधन या तकलीफ़ नहीं होती।

२५—इसी तरह सुरत, यहाँ परदेशी है और उसको इस परदेश में परदेशियों के मुआफ़िक बर्ताव करना मुनासिब है, और परमार्थ की कमाई करके गहरी जमा यानी प्रेम कुल्ल-मालिक के चरणों का अपने घट में हासिल करके, जल्द २ और बारन्बार सुरत-शब्द की रेल पर सवार होकर, अपने वतन यानी कुल्ल-मालिक के चरणों में आमद-ओ-रफ़्त यानी फेरा जारी करना चाहिये, और जब काम पूरा हो जावे, तब बे-तकल्लुफ़ अपने निज घर को, ख़ुशी के साथ जाने को तैयार रहना चाहिये। यह काम दुरुस्ती से तब बन पड़ेगा जब कि यह दिन २ अपनी प्रीति और प्रतीत चरणों में बढ़ायेगा, और संसार में, अपना प्यार ज़रूरत के मुआफ़िक़ रक्खेगा, और अपने मन और सुरत की धारों को फ़िज़ूल इस दुनिया में नहीं ख़र्च करेगा, बल्कि दिन-दिन घट में ऊँचे देश की तरफ़ को उनका प्रवाह बढ़ाता रहेगा और संत सतगुरु और प्रेमी जन से नाता मज़बूत जोड़ेगा।

॥ बचन २४ ॥

तीन बातें हमेशा सुमिरना यानी याद रखना चाहियें, और तीन बातें बिसरना यानी भूलना चाहियें ॥

१—जो तीन बात याद रखनी चाहिये ये हैं—

पहिली यह कि राधास्वामी दयाल सर्व-समर्थ और कुल्ल-मालिक हैं। दूसरी यह कि उनके चरण यानी चैतन्य की धार जो कि शब्द की धार है, हर एक के घट में मौजूद है। तीसरी यह कि दुनिया के सब सामान और पदार्थ नाशमान हैं यानी हमेशा एक रस और एक हालत पर क़ायम नहीं रहते, और यह देह भी जिसमें सुरत उतर कर ठहरी है, नाशमान है यानी मौत हर दम सिर पर खड़ी है।

२—ये तीन बातें बिसारनी यानी भूलनी चाहियें—

पहिली—मन का मान जो कि ब-सबब धसे होने ख़्याल अपनी बड़ाई ज़ात-पाँत, धन या गुण या ख़ूबसूरती या कोई और जौहर या अक़्ल या हुकूमत और ओहदा वग़ैरा के, पैदा होता है। दूसरी—मन और इन्द्रियों के भोग और माया के रचे हुये पदार्थ। तीसरी—भोग-बिलास वग़ैरा का चिन्तवन या ख़्याल और गुनावन और उनकी प्राप्ति के लिये आशा और मन्शा और तृष्णा।

भाग पहिला

वर्णन उन तीन बातों का, जो कि याद रखनी चाहियें

३—पहिली बात यह कि परमार्थी को चाहिये कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की याद, अक्सर वक़्त, दिन-रात में, करे और राधास्वामी नाम को इस क़दर पकावे कि सोते और

जागते और अभ्यास के वक़्त, जब मुनासिब और ज़रूर होवे, फ़ौरन याद आ जावे और इस बात का जिस क़दर बन सके, मज़बूत यक़ीन दिल में होना चाहिये कि राधास्वामी दयाल सर्व-समर्थ हैं और जो आदि धार उनके चरणों से निकसी, वही कुल्ल रचना की करतार है और बिना उनकी मौज के कुछ नहीं हो सकता।

४—इस बात का बयान दूसरे बचनों में हो चुका है और यहाँ ख़ुलासे के तौर पर लिखा जाता है कि एक स्थान की रचना दूसरे ऊपर के स्थान के आधीन है, यानी ऊपर से जो धार आती है, उसी की मदद से नीचे के स्थान की रचना ताक़त और मदद लेती है। यानी एक सूरज-मंडल, ऊँचे के सूरज-मंडल के आसरे क़ायम है और सब के परे कुल्ल-मालिक राधास्वामी धाम है और वही सब का निज कर्तार है। इससे ज़ाहिर होगा कि आदि धार की ताक़त से कुल्ल रचना हुई और उसी के आसरे ठहरी हुई है, यानी राधास्वामी धाम से धारा सत्तलोक तक आई और दयाल देश यानी पहिले दर्जे की रचना करी, और वहाँ से दो धारें प्रगट होकर सहसदल कँवल तक आईं और ब्रह्मान्डी यानी दूसरे दर्जे की रचना करी, और सहस दल कँवल से तीन धारें प्रगट हुईं और उनसे देवता और मनुष्य और चार खान की रचना, पिंड देश यानी तीसरे दर्जे में, हुईं।

५—दूसरी बात यह कि परमार्थी को चरण की पहिचान और प्रतीत हासिल करनी चाहिये, यानी जो चैतन्य धार कि दयाल देश से दसवें द्वार और दसवें द्वार से पिंड में उतर कर ठहरी हुई है, वही सुरत या धुन की धार है, और वही नाम और चरण की धार है। सो, इस धार की, अभ्यास करके, थोड़ी-बहुत पहिचान हासिल करना और इस बात की दृढ़ प्रतीत मन में पैदा करना चाहिये कि यह चरण या शब्द या जान की धार घट-घट में मौजूद है और इसी को पकड़ के सुरत ऊँचे देश यानी घर की तरफ़ उलट सकती है। और कोई दूसरा सीधा और धुर पहुँचाने वाला रास्ता नहीं है।

६—यह अक्सर बचनों में बयान हो चुका है कि चैतन्य का निशान और ज़हूरा शब्द यानी आवाज़ है, और जहाँ कि धार रवाँ है, वहाँ धुन उसके साथ मौजूद है। फिर जो चैतन्य की धार कि ऊपर से आई है और उसके साथ धुन यानी आवाज़ बराबर जारी है, वही रचना की कर्ता है। इस वास्ते जो उस धार को पकड़ के चलेगा, वही उस मक़ाम तक जहाँ से कि आदि धार प्रगट हुई, पहुँच सकता है। और किसी धार को पकड़ के जो कोई चलेगा, वह माया के घेर के बाहर नहीं जावेगा, क्योंकि सिवाय शब्द-चैतन्य की धार के, और जो धारें हैं, वे माया की हद में से निकसी हैं और और वहीं उनका ख़ात्मा हो जाता है।

७—परमार्थी को मुनासिब और लाज़िम है कि इस धार की बारम्बार याद करता रहे। और याद करने से मतलब यह है कि या तो शब्द को सुने या राधास्वामी नाम का, स्थान पर ध्यान लगा कर, सुमिरन करे या स्थान पर स्वरूप का ध्यान करे। ख़ुलासा यह कि इस धार के साथ जितनी बार बन सके, दिन-रात में मेल करता रहे। इसी को सुमिरना कहते हैं। ऐसी यादगारी से जिस क़दर ज़्यादा बन पड़ेगी, जल्द सफ़ाई होवेगी, और चरणों में प्रीति और प्रतीत बढ़ेगी और अभ्यास में आसानी के साथ तरक़्क़ी होवेगी।

८—तीसरी बात यह है कि परमार्थी को ख़्याल इस बात का हमेशा रखना चाहिये कि जिस क़दर माया के सामान और पदार्थ हैं, वे सब तुच्छ यानी थोड़ा रस देने वाले और नाशमान हैं, और यह देह भी जिसमें बैठ कर जीव उनका भोग करता है, नाशमान है, यानी एक दिन मौत ज़रूर आवेगी और उस वक़्त सब कारख़ाना और सामान दुनिया का, और यह देश एक-दम छोड़ना पड़ेगा। और कोई किसी तरह से किसी को ऐसे वक़्त पर मरने से बचा नहीं सकता।

९—इस बात का कोई सबूत ज़रूरी नहीं है, क्योंकि कुल्ल जीवों को रोज़मर्रा देखने में आता है कि बड़े और छोटे और राजा और अमीर और ग़रीब और कुल्ल पदार्थ और भोग वग़ैरा आते-जाते रहते हैं, और कोई वक़्त मुक़र्ररा से ज़्यादा

ठहर नहीं सकता। इस वास्ते हर एक को मुनासिब और लाज़िम मालूम होता है कि पेश्तर इसके कि ऐसा सख़्त वक़्त आवे, सुरत को तन-मन और इन्द्रियों से, जिस क़दर बन सके, न्यारा करके उसके घर की तरफ़ उल्टावें और अपनी मौत को याद रख कर किसी शख़्स या चीज़ में इस क़दर मन को न बाँधें कि जिससे छोड़ते वक़्त तकलीफ़ होवे। और इसी तरह सब भोगों और पदार्थों को नाशमान समझ कर उनमें गहरी और मज़बूत पकड़ नहीं करना चाहिये, नहीं तो वियोग के वक़्त बहुत दुख सहना पड़ेगा।

१०—इस बात को हमेशा याद रखने से जीव का बहुत फ़ायदा मुमकिन है, यानी उसका बंधन दुनिया और उसके सामान और कुटुम्ब-परिवार और भोगों वग़ैरा में बहुत हलका रहेगा और अख़ीर वक़्त पर उसको छोड़ने में तकलीफ़ नहीं होवेगी। और जहाँ तक मुमकिन होवे, राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीत और प्रतीत बढ़ाना और पकाना चाहिये कि जिससे जीव के उद्धार में कोई विघ्न न पड़े।

११—बल्कि सिवाय अख़ीर वक़्त पर तकलीफ़ न होने के, जीते-जी भी राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीति और यादगारी करने वाले को बहुत कुछ फ़ायदा हासिल होवेगा, यानी दुनिया और उसके भोगों की तरफ़ से चित्त आहिस्ते २ हटता जावेगा, और अंतर में रस और आनन्द पाकर

चरणों में प्रीति और प्रतीत और शौक़ दर्शनों का बढ़ता जावेगा और अख़ीर वक़्त पर ज़्यादा से ज़्यादा आनन्द और दया की मदद मिलेगी, और देह और दुनिया को छोड़ने का रंज बिल्कुल नहीं व्यापेगा। और यह हालत सुरत-शब्द मार्ग के अभ्यास से, जो कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल ने बहुत आसान तौर से जारी फ़रमाया है, हासिल होवेगी।

भाग दूसरा

वर्णन उन तीन बातों का, जो कि बिसारनी चाहियें

१२—पहिली बात यह कि परमार्थी को अपने मन का मान घटाना और दूर करना चाहिये। यह सब औगुणों में बहुत भारी और ज़बर और बारीक विकार है और बहुत दिक़्क़त से और बहुत देर में घटता और दूर होता है। चाहे जिस क़दर कोशिश की जावे, थोड़ा-बहुत, झीने से झीना मान मन में धरा रहता है और वक़्त २ पर प्रगट होता रहता है।

१३—इसके दूर करने का जतन, सिवाय सुरत-शब्द मार्ग के अभ्यास के, कि जिससे सुरत और मन पिंड देशको छोड़ कर ब्रह्मान्ड में, और फिर वहाँ से मन से अलेहदा होकर सुरत, दयाल देश की तरफ़ चढ़ेगी, और कोई नहीं है। यानी जब तक कि सुरत, पिंड में रहेगी, तब तक इस विकार का क़तई

दूर होना मुमकिन नहीं है, चाहे कुछ कम हो जावे या कहीं २ और किसी किसी वक़्त बिल्कुल ज़ाहिर न होवे, क्योंकि जड़ इसकी ऊँचे देश में है। और जब तक कि यह विकार यानी मान और अहंकार मन में बसे रहेंगे, तब तक सच्ची दीनता, सतगुरु और प्रेमी जन और कुल्ल-मालिक के चरणों में, जैसा कि चाहिये, नहीं आवेगी, और न पूरा फ़ायदा परमार्थ का, यानी प्रेम हासिल होगा।

१४—इस वास्ते परमार्थी को चाहिये कि जैसे बने तैसे इस विकार को अपने मन से हटावे और घटावे और अपनी ताक़त और ज़ात और पाँत और धन और हुकुमत और गुण और जौहर की बड़ाई को भुलावे और किसी मौक़े पर और किसी काम और किसी बात में उसको पेश न करे, और न उसकी याद और ख़्याल मन में लावे, यानी न तो किसी अपनी बात में और किसी मौक़े पर बड़ाई या तारीफ़ करे और न दूसरों से कराने की चाह या आस रक्खे, और न दिल में उसका ख़्याल लावे। और जब कोई अनजानता से या जान-बूझ कर, ज़िद्द और हसद से कोई बचन ओछा या अपमान का इससे कहे, तो उस वक़्त अपनी ताक़त या बड़ाई का ख़्याल करके ग़ुस्सा और रोष न करे और न कहने वाले से और किसी वक़्त एवज़ लेने का इरादा करे और न ऐसा समझे कि मेरा अपमान हुआ या इज़्ज़त में ख़लल आया,

बल्कि अपने आपे को नीच और नाकारा समझ कर यह ख़याल करे कि वह ऐसे ही बल्कि ज़्यादातर ओछे और अपमान के बचनों के ही लायक़ है।

१५—जहाँ किसी का स्वार्थ यानी दुनियावी मतलब अटका होवे, वहाँ हर कोई मान-बड़ाई छोड़ कर सच्ची दीनता करता है और इसी तरह अपने से ज़बर के रू-ब-रू भी दीनता से बर्तता है। फिर बड़े अफ़सोस की बात है कि यह जीव दुनिया के मतलब के वास्ते तो सब क़िस्म का मान और अहंकार छोड़ देवे और परमार्थ में कोई न कोई या किसी न किसी क़िस्म के मान के अंग को लेकर उलटा अपना मान और आदर चाहे और सच्ची दीनता न करे। लेकिन इससे यह बात ज़ाहिर होती है कि उस शख़्स ने परमार्थ की दौलत की क़द्र न जानी और दुनिया की मान-बड़ाई और विद्या-बुद्धि और धन और हुकूमत और गुण वग़ैरा को बड़ा समझा। फिर ऐसे शख़्सों को सच्चे प्रेम की दात कैसे मिले ?

१६—भक्ति और प्रेम मार्ग में सच्ची दीनता एक बड़ा जौहर या ज़ेवर और भारी सिंगार समझा जाता है। जिसमें यह अंग नहीं पाया जाता या वह बे-परवाही और निडरता के साथ परमार्थियों से बर्ताव करता है तो राधा-स्वामी दयाल उस पर प्रेम की बख़्शिश हरगिज़ नहीं करेंगे

और वह अपने अहंकार के सबब से गहरे परमार्थ से ख़ाली रहेगा, क्योंकि राधास्वामी दयाल का यह हुकुम है कि "दीन ग़रीबी मत इस जुग का, और गुरु भक्ती कर परमाण"। सो जब तक मन में दीनता न आवेगी, तब तक गुरू और साध और कुल्ल-मालिक के चरणों में सच्चा प्रेम नहीं आवेगा और इसी सबब से दया भी नहीं आवेगी और परमार्थी तरक़्क़ी भी नहीं होवेगी।

१७–दूसरी बात यह है कि परमार्थी को मन और इन्द्रियों के भोगों और माया के रचे हुए पदार्थों को, जहाँ तक बन सके, चित्त से बिसारना चाहिये और उनमें ज़रूरत के मुआफ़िक़ बर्ताव करना मुनासिब है। लेकिन फ़िज़ूल ख़्वाहिशें, सुरत-चैतन्य की धार को नीचे और बाहर की तरफ़ बहाती हैं और इसमें अभ्यासी का किसी क़दर नुक़सान होता है।

१८—भोगों और पदार्थों में खैंच-शक्ति बहुत है और वे मन और इन्द्रियों को लुभा कर अपनी तरफ़ खैंचते हैं। लेकिन इसमें, मन की चाह और तरंग भोगों के रस लेने की, उनकी खैंच शक्ति को जगाती है, क्योंकि जो मन में तरंगें न उठें तो चाहे जैसे भोग और पदार्थ सन्मुख आवें तो वे मन और इन्द्रियों को लुभा नहीं सकते।

१९—इस वास्ते अभ्यासी को, ख़ास कर शुरू अभ्यास के समय, थोड़ी-बहुत सम्हाल अपने मन की, करना मुनासिब

है यानी किसी क़दर भोगों से, आम तौर पर, वैराग रखना चाहिए और ज़रूरत के मुआफ़िक़ उनमें बर्ताव करना चाहिये ।

२०—इसमें कुछ शक नहीं है कि मन और इन्द्रियों को, भोगों की तरफ़ से रोकना निहायत मुशकिल काम है, क्योंकि वे जन्मान-जन्म और युगान-युग और सालहा-साल से उनमें बर्तते चले आये हैं और यह बर्ताव उनका पुराना स्वभाव हो गया है । और सब जीवों का इसी क़िस्म का व्यवहार देख कर शौक़ पैदा होता है और बढ़ता रहता है । और पुरानी आदतों और शौक़ का जो कि अभ्यास करके ख़ूब मज़बूत हो गये हैं, एक-दम छोड़ना निहायत मुशकिल बल्कि क़रीब २ ना-मुमकिन है, इस सबब से परमार्थी को, शुरू अभ्यास के समय, मन और इन्द्रियाँ अपनी चंचलता ज़ाहिर करके दुरुस्ती से अभ्यास में नहीं लगने देती हैं । इस वास्ते दुनिया और उसके सामान और भोगों की नाशमानता और ओछापन देख कर, थोड़ा-बहुत चित्त को उनकी तरफ़ से उदासीन रखना ज़रूर है ।

२१—जीव की ताक़त नहीं है कि मन और माया से मुक़ाबला कर सके और भोगों की चाह या उनमें बर्ताव यकायक हटा देवे । इस वास्ते मुनासिब और ज़रूर है कि समर्थ पुरुष राधास्वामी दयाल की शरण और ओट लेकर परमार्थ की कार्रवाई शुरू करे और उनकी दया का बल

लेकर मन और इन्द्रियों से मुक़ाबला करता रहे, तो आहिस्ते २ वे किसी क़द्र ज़ेर होते जावेंगे और अभ्यास में कुछ-कुछ रस मिलता जावेगा। और बाक़ी सम्हाल और उनके ज़ोर से बचाव, राधास्वामी दयाल अपनी दया से आप फ़रमावेंगे और एक दिन मेहर और दया से धुर घर में, इनसे जिता कर, पहुँचा देंगे।

२२—जीव को मुनासिब है कि राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीति और प्रतीत बढ़ाता रहे और जिस क़द्र बन सके, अपना अभ्यास नियम से दुरुस्ती के साथ करता रहे। बाक़ी जो कुछ कसर होगी, वे अपनी दया से दूर करेंगे और अपना बल देकर सब विघ्न और विकार हटा देंगे।

२३—जीव को इस क़द्र अहतियात करना लाज़िम और मुनासिब है कि जहाँ तक बन सके, भोगों की फ़िज़ूल चाहें और तरंगें हटाता रहे, और भोगों और पदार्थों की याद या उनका ख़याल मन में न लावे, सिवाय इसके कि जिस क़द्र वास्ते गुज़ारे के, दुनिया और देह में, ज़रूर और मुनासिब है।

२४—और यह भी मुनासिब है कि मन और माया और इन्द्रिय वग़ैरा को, जो कि परमार्थ में विघ्न कारक हैं, ज़ोरावर, बैरी और दुश्मन समझ कर, और अपने तईं निबल और कमज़ोर देख कर, अपने रक्षक कुल्ल-मालिक राधास्वामी

दयाल की याद बढ़ाता रहे और जब-जब दुश्मनों का ज़ोर ज़्यादा होवे, तब-तब उनकी दया और सहायता माँगता रहे और अपनी भूल-चूक पर शरमाता और पछताता रहे ।

२५–तीसरी बात यह है कि परमार्थी को होशियारी रखनी चाहिये कि भोग-बिलास वग़ैरा की गुनावन न उठावे और न उनका चिन्तवन करे और न आशा बाँधे और न तृष्णा जगावे, क्योंकि आशा और गुनावन भोगों की, ज़्यादा नुक़सान करती है, ब-निस्बत उस भोग के एक या दो बार भोग लेने के ।

२६—गुनावन और चिन्तवन जिस किसी भोग का किया जावे और उसके प्राप्ति की आशा बाँध कर जतन शुरू किया जावे, तो ज़्यादा वक़्त और ख़्याल और बुद्धि उस भोग के करने और उसकी प्राप्ति के जतन के विस्तार में लगेंगे, और शौक़ उसकी प्राप्ति का बढ़ता जावेगा । और जब वह भोग जतन करके प्राप्त होगा, तब मन और इन्द्रियाँ उसमें ज़्यादा शौक़ और ज़ोश के साथ लगेंगे और बारम्बार उसके भोगने की चाह जगा कर तृष्णा बढ़ावेंगे । और इस तरह वह तरंग मन में बहुत ज़बर होकर अभ्यास में ख़लल डालेगी । और जो कभी वह चीज़ प्राप्ति न हुई तो मन को बहुत दुख होगा ।

२७—जो कोई चाह के उठने के बाद फ़ौरन उस भोग को भोग लेगा तो ज़्यादा देर वह चाह मन में नहीं बसेगी और न बार २ उसका ख़्याल उठेगा, बल्कि परमार्थी, ऐसी

चाह उठने और उसके पूरा होने के पीछे, अपने मन में थोड़ा-बहुत शरमावेगा और पछतावेगा और फिर वैसी चाह कम उठावेगा।

२८—लेकिन जिसके मन में चाह ज़बर है, वह उसके गुनावन और उसको पूरा करने के लिये जतन किये बग़ैर नहीं मानेगा, और उसके मन में पछतावा भी जल्द नहीं आवेगा, और जो कोई उसको रोकेगा या समझौती देवेगा, उससे नाराज़ होगा बल्कि दुश्मनी करेगा और जब तक कि भोग पूरा नहीं कर लेगा या उस चाह के निमित्त जतन करने में कुछ दुख नहीं पावेगा, तब तक उसको नहीं छोड़ेगा।

२९—भोग के गुनावन करने में किसी क़दर रस मिलता है और मन ऐसे ख़्यालों के विस्तार करने में मग्न होता है। इस सबब से वह तरंग पक जाती है और गुनावन का रस पाकर मन बारम्बार उसको उठाता है। इसी तरह अनेक भोगों की अनेक तरंगें मन में बस जाती हैं और वक़्त-वक़्त पर प्रगट होकर मन को अभ्यास में नहीं लगने देती हैं।

३०—और परमार्थ में यह ज़रूरी है कि मन तरंगों और उनके गुनावन से ख़ाली होवे। इस वास्ते परमार्थी को इस बात की अहतियात ज़रूर चाहिये कि जहाँ तक

मुमकिन होवे, किसी भोग की फ़िज़ूल इच्छा न उठावे और उसके गुनावन में अपना वक़्त बरबाद न करे, और जो मामूली और ज़रूरी चाहें हैं, उनमें दस्तूर के मुआफ़िक़ थोड़ी अहतियात के साथ बर्तता रहे। पर जहाँ तक बन सके, उसकी याद और गुनावन मन में कम करे और हटाता जावे, बल्कि दुनिया की तरंगों से उसको किसी क़दर ख़ाली करे। परमार्थी तरंगें और ख़्याल, जैसे सतगुरु और प्रेमी जन की सेवा और परमार्थी चर्चा वग़ैरा करना शुरू करे, और फिर उनको भी हटा कर या कम करके, सिर्फ़ राधास्वामी दयाल के चरणों का प्रेम और उनके दर्शनों के प्राप्ति की चाह बढ़ावे, और उसके पूरे होने के निमित्त, जतन मुनासिब, यानी भजन, सुमिरन और ध्यान और सतसंग, शौक़ के साथ करता रहे।

बचन २५

वर्णन उस जुगत का कि जिस से परमार्थी को संसार का दुख-सुख कम व्यापे, बल्कि बिल्कुल न व्यापे, और अभ्यास में थोड़ा-बहुत रस और आनन्द बराबर मिलता रहे और आहिस्ते २ बढ़ता जावे ॥

१—संसार में सब जीव दुख-सुख भोग रहे हैं। सबब इसका यह है कि उनका बंधन और आसक्ति अपनी देह

और कुटुम्ब-परिवार और धन और माल और भोग वग़ैरा में है। जब इनमें से कोई चीज़ का हर्ज-मर्ज होता है या घाटा-बाढ़ा होता है, या जब सब काम इच्छा के मुवाफ़िक़ होते जाते हैं या कोई काम बर-ख़िलाफ़ मर्ज़ी होता है, तब ही सुख-दुख या आराम और तकलीफ़ व्यापते हैं।

२—इस वास्ते संतों और सब महात्माओं ने, परमार्थ में, पहिले यह शर्त रक्खी है कि परमार्थी को तन, मन, धन अर्पण करना चाहिए यानी उनमें से अपना बंधन और आसक्ति आहिस्ते २ कम करके एक दिन अपना पूरा छुटकारा उनसे करना मुनासिब है। तब सुख-दुख के चक्कर से सच्चा और पूरा बचाव होगा और परमार्थ के बचनों की क़द्र और महिमा मालूम पड़ेगी।

३—लेकिन यह बात, यानी तन-मन से निरासक्त और निरबंध होना बहुत कठिन और मुश्किल है, क्योंकि जीव जन्मान-जन्म और युगान-युग और सालहा-साल से, उनमें बर्तता और बंधता चला आया है और संग करके उसकी आसक्ति और बंधन अपनी देह और कुटुम्ब-परिवार और धन-माल और भोग-विलास वग़ैरा में दिन-दिन मज़बूत हो गये हैं, फिर उसका यकायक छूटना किस क़द्र कठिन है, वह साफ़ ज़ाहिर है।

४—यह आसक्ति और बंधन दो तरकीबों से कम

और ढीले हो सकते हैं। पहिले, गहरा शौक़ और प्रेम, सतगुरु और सतसंग और मालिक के चरणों में होना। दूसरे, संतों की जुगत यानी सुरत-शब्द मार्ग का, थोड़ा-बहुत विरह और प्रेम अंग लेकर, अभ्यास करके मन और सुरत को ऊँचे देश में चढ़ाना।

५—पहिली हालत तो किसी बिरले बड़भागी और गहरे संस्कारी परमार्थी की होवेगी। लेकिन दूसरी हालत हर एक परमार्थी को, जो थोड़ा सा भी शौक़ लेकर सतसंग और शब्द का अभ्यास करेगा, आहिस्ते २ कमाई करके, हासिल हो सकती है।

६—जब किसी को गहरा शौक़ और प्रेम, संत सतगुरु और उनके सतसंग में बचन और महिमा सुन कर आ गया, तब उसकी आसक्ति अपनी देह और कुटुम्ब-परिवार और धन-माल और भोग-बिलास वग़ैरा में एक दम ढीली होकर, चरणों में कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के आ जावेगी, और जिस क़दर अभ्यास करके रस अन्तर में मिलता जावेगा, दिन २ बढ़ती जावेगी। और फिर वही शख़्स सतगुरु की आज्ञा और मालिक की मौज के अनुसार सहज में बर्तने लगेगा और उसके मन और इन्द्रियों के विकार और पिछली टेक और पक्ष और कर्म और भर्म बहुत जल्द दूर हो जावेंगे, और अभ्यास में भी उसको मन

और माया के विघ्न बहुत कम सतावेंगे और पिछले-अगले कर्म भी उसके सहज में दया और प्रेम के बल से कट जावेंगे और माया का चक्कर तीन गुणों का जो हरएक के अन्तर और बाहर चल रहा है, उस पर बहुत कम बल्कि कुछ भी असर नहीं कर सकेगा और सुरत और मन उसके ऊँचे देश की तरफ़ सहज में चढ़ते और निर्मल होते चले जावेंगे और संसारी चाहें भी जल्द नष्ट हो जावेंगी। ऐसे प्रेमी परमार्थी को महा बड़भागी और उत्तम संस्कारी समझना चाहिए और कुल्ल-मालिक और संत सतगुरु की दया हर वक़्त उसके शामिल-ए-हाल रह कर, उसकी परमार्थी तरक़्क़ी और सब तरह की सम्हाल उसके सुरत और तन-मन की करती जावेगी।

७—दूसरे दर्जे के परमार्थी, सतसंग और अभ्यास करके, आहिस्ते २ उसी मक़ाम और हालत को, जो कि उत्तम संस्कारी को जल्द प्राप्त होती है, पहुँच सकते हैं। दया और मेहर कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की उनके संग भी ब-दस्तूर जारी रहेगी और रफ़्ते-रफ़्ते उनका कारज बनावेगी।

८—दुनिया में रह कर और देह में मन और इन्द्रियों के घाट पर बैठ कर, कोई भी दुख-सुख के चक्कर से बच नहीं सकता, सिवाय उनके कि जिनके मन और सुरत

एकाग्र हो कर कुल्ल-मालिक के चरणों में लग गए हैं और उनका रस और आनन्द लेते हैं। या वे कि जो अभ्यास करके मन और इन्द्रियों के घाट से न्यारे हो गये, उनको भी दुख-दुख देह और संस्कार का नहीं व्यापेगा।

९—परमार्थ में शामिल होने और करनी करने का मतलब यही है कि एक दिन ऐसे दर्जे पर पहुँचे कि जहाँ इसको सुख-दुख दुनिया और देह का न व्यापे, और अपने प्यारे सच्चे मालिक की मौज के साथ ख़ुशी से मुआफ़िक़त करे और रफ़्ते २ अमर देश में पहुँच कर परम आनन्द को प्राप्त होवे। सो यह बात कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की मेहर और संत सतगुरु की दया और अन्तर और बाहर के सतसंग से हासिल होगी।

१०—उत्तम संस्कार से, जिसका ज़िक्र ऊपर किया गया, मतलब यह है कि कोई शख़्स पिछले जन्म से भक्ति और अभ्यास करता आया है और अब नम्बर उसका अन-क़रीब पूरे दर्जे पर पहुँचने का आ गया है। सो ऐसे जीवों की हालत संत सतगुरु का दर्शन करके और बचन सुनके, जल्द बदलती जावेगी और बाक़ी जीवों को वही हालत आहिस्ते २ सतसंग और अभ्यास करके हासिल होगी। सिर्फ़ देर और सबेर का फ़र्क़ है।

११—हर हाल में परमार्थी को ख़्याल और तवज्जह

इस बात पर रखना ज़रूर और मुनासिब है कि जहाँ तक मुमकिन होवे, संत सतगुरु की आज्ञा के अनुसार बर्ताव करे और जब-जब जैसी मौज होवे, उसके साथ मुआफ़िक़त करे, तब परमार्थ का पूरा लाभ प्राप्त होगा और दुख-सुख के चक्कर से छुटकारा हो जावेगा।

१२—लेकिन यह कैफ़ियत तब हासिल होगी, जब कि परमार्थी शख़्स की आसक्ति और बन्धन तन, मन, धन में आहिस्ते २ कम होकर दूर हो जावेंगे। नहीं तो जिस क़द्र कि झुकाव और फँसाव इन में रहेगा, उसी क़द्र उनके घाटे-बाढ़े में तकलीफ़ और आराम पावेगा और उसी क़द्र मौज के अनुसार बर्ताव में भी कसर रहेगी।

१३—इस बर्ताव के कई दर्जे हैं और उनका ज़िक्र खोल कर बयान किया जाता है। पहिला, सब्र यानी लाचार होकर जो तक़लीफ़ या आफ़त आवे, उसको झेलना। यह हालत संसारियों की है कि पहले रो-पीट कर और इसकी-उसकी, बल्कि मालिक तक की शिकायत करके, जब कुछ बस न चला तब चुप्प होकर बैठ रहे। दूसरा, तहम्मुल यानी बर्दाश्त करना। यह हालत विद्यावान और बुद्धिमानों की है कि सोच-विचार करके और दुनिया में उसी क़िस्म के वाक़ै और नमूने, जो पिछले और हाल के वक़्त में जा-ब-जा जीवों पर गुज़रे हैं, याद लाकर अपने मन

को समझाना और जो तकलीफ़ या दुख आयद हुआ है, उसको धीरज के साथ बर्दाश्त करना। तीसरे, शुक्र यानी अपने मालिक के चरणों में अहसानमंदी ज़ाहिर करनी। यह हालत परमार्थी को शुरू भक्ति में है कि उसको वक़्त सख़्ती और तकलीफ़ के ऐसी समझौती अपने मन को देनी चाहिये कि न मालूम किस क़दर भारी सदमा और दुख आने वाला था कि जो अपने प्यारे मालिक ने दया और मेहर से बहुत कम कर दिया यानी सूली का काँटा और मन का सेर भर रक्खा, और फिर उसमें भी न मालूम क्या मसलहत और फ़ायदा परमार्थी यानी भक्त का मंज़ूर है। सो हर दम और हर हालत में शुक्राना मालिक का मुनासिब और लाज़िम है और धीरज के साथ, बग़ैर तंग होने मन के, उस तकलीफ़ या दुख को सहना और उस सहन में भी मालिक की दया उसको थोड़ी-बहुत नज़र आवेगी। चौथे, तसलीम यानी शौक़ के साथ मंज़ूर और क़ुबूल करना, हर एक हालत ख़ुशी और आराम और सख़्ती और तकलीफ़ का, ऐसी समझ लेकर कि वह अपने प्यारे मालिक की भेजी हुई है और किसी हाल में वह मसलहत और फ़ायदे से ख़ाली न होगी। यह हालत ऊँचे दर्जे के प्रेमी भक्तों की है कि वे हमेशा ऐसी समझ रखते हैं कि जो कुछ होता है, मालिक के हुक्म और मौज से होता है, और जो अपने

प्यारे के हुक्म से कोई हालत अपने ऊपर आई तो उसका आदर करना यानी ख़ुशी से क़ुबूल और मंज़ूर करना वाजिब और लाज़िम है। और उसका निरादर करना यानी मन में दुखी और नाराज़ होना, ख़िलाफ़ क़ायदे और दस्तूर प्रेम और भक्ति के है। पाँचवाँ, रज़ा यानी राज़ी होना मालिक की मौज और हुक्म में। यह हालत पूरे प्रेमी भक्तों की है कि वे कभी किसी बात का सोच और फ़िक्र नहीं करते और उनहोंने अपने सब कामों को मालिक की मौज और रज़ा पर छोड़ दिया है यानी मामूली कार्रवाई और तदबीर भी चाहे करते हैं, लेकिन नतीजा उसका, जैसा कुछ मौज से होवे, उस पर राज़ी हैं और किसी तरह की फ़ुरना या ख़्याल उनके मन में नहीं उठता। ख़ुलासा यह कि किसी काम या उसके नतीजे और फल में उनका बंधन नहीं है। जो कुछ करते हैं, मौज के आसरे पर, और जो नतीजा मौज से होवे, उसमें ऐसे ही राज़ी और मग्न रहते हैं, जैसे बालक, माता-पिता के हुक्म और कार्रवाई में बे-फ़िक्र और ख़ुश रहता है।

१४—इनमें से दो दर्जों में दुनियदारों का बर्ताव रहता है और बाक़ी के तीन दर्जे भक्तों के हैं यानी वही लोग जो राधास्वामी मत में शामिल होकर, प्रेमा भक्ती संत सतगुरु अथवा कुल्ल-मालिक के चरणों में कर रहे हैं।

१५—जो कोई राधास्वामी दयाल की शरण में आया, उसकी सम्हाल और रक्षा वे अपनी दया से जिस क़द्र कि मुनासिब और उसकी परमार्थी तरक़्क़ी के वास्ते ज़रूर है, आप करते हैं। और जिस क़द्र जिसकी प्रीति और प्रतीत चरणों में गहरी और मज़बूत है, उसी क़द्र उनकी दया उसको प्रगट नज़र आती है और तकलीफ़ और आराम के वक़्त उससे सहारा और मदद मिलती है, और मौज के साथ मुआफ़िक़त करने में उसी क़द्र उसको आसानी होती है।

१६—लेकिन जब तक जिस-किसी की जिस क़द्र आसक्ति और बंधन, संसार और उसके समान में है, उसी क़द्र, उस के मन को संसार की हानि-लाभ में सुख-दुख होवेगा। पर जो शरण और प्रीति-प्रतीत चरणों से राधास्वामी दयाल के मज़बूत है, तो उसका असर उस क़द्र उस पर नहीं होगा, जैसा कि संसारियों के दिल पर होता है, बल्कि जल्द मौज और मेहर और दया का ख़्याल करके, थोड़ा झकोला खाकर अपने मन को सम्हाल लेगा और ब-दस्तूर प्रेम और भक्ति के घाट पर आ जावेगा।

१७—प्रेमी भक्तों को इन्हीं तीन दर्जों के मुआफ़िक़ सुरत-शब्द मार्ग के अभ्यास में भी रस और आनंद आवेगा और आहिस्ते २ तरक़्क़ी होती जावेगी, यानी मन में उनकी

प्रीति और प्रतीत चरणों की, और चाह दर्शनों की बढ़ती जावेगी और उसी क़दर दुनिया और उसके सामान की मुहब्बत कम होती जावेगी ।

१८—हर एक प्रेमी भक्त को मुनासिब है कि अभ्यास के वक़्त विरह या प्रेम अंग मन में लावे और नीचे से अपने मन और सुरत की धार को समेट कर, ऊपर को चढ़ावे और स्थान २ पर ठहरावे । और जो यह कार्रवाई थोड़ी-बहुत दुरुस्ती के साथ बनती जावेगी यानी दुनिया और उसके सामान के ख़्याल मन में नहीं आवेंगे, तो थोड़ा-बहुत रस और आनन्द अभ्यास में ज़रूर मिलता रहेगा और उसकी ताक़त और शौक़ बढ़ते जावेंगे ।

१९—जब कभी विरह या प्रेम अंग का घाटा मालूम पड़े, तो उस वक़्त प्रेमी अभ्यासी को मुनासिब है कि चरणों में प्रार्थना करके राधास्वामी दयाल की दया माँगे तो उसका मन थोड़ा-बहुत सिमटेगा और इस सिमटाव और किसी स्थान पर ठहराव का रस थोड़ा-बहुत ज़रूर मालूम पड़ेगा, यानी अभ्यास में जो ऊपर की जुगती के मुवाफ़िक़ किया जावेगा, तो कभी ख़ाली नहीं रहेगा ।

२०—अब मालूम होवे कि हर एक जीव के अंतर में मन और माया का त्रिगुणात्मक चक्कर हमेशा चलता रहता है, और उसके मुआफ़िक़ मन और इन्द्रियों की हालत बद-

लती रहती है, यानी कभी सतोगुणी, कभी रजोगुणी और कभी तमोगुणी ख़्याल या तरंगें पैदा होती रहती हैं, और इसी चक्र के साथ अगले-पिछले और हाल के कर्मों के फल का असर भी, जैसे कि इस शख़्स ने किये हैं, ज़ाहिर होकर मन और इन्द्रियों की हालत को बदलता रहता है।

२१—सिवाय इसके, जीव के संगियों की दुख-सुख की हालत का जो कि वे अपने कर्मों के सबब से भोगते रहते हैं, इस शख़्स पर थोड़ा-बहुत असर पहुँचता है और उसके और इन्द्रियों की हालत को उसी मुआफ़िक बदलता रहता है।

२२—अलावा इसके, जो-जो ख़्वाहिशें या तरंगें संसारी यह शख़्स अपने या अपने संगियों के वास्ते उठाता है और उनकी चिन्ता या गुनावन अपने मन में करता है या जतन या तद्बीर सोचता और विचारता है, उनका भी असर इसके मन और बुद्धि और इन्द्रियों पर पहुँच कर उनकी हालत को बदलता है।

२३—अब ख़्याल करो कि इतने झगड़े और बखेड़े मन और माया और कर्म और आशा और मंशा वग़ैरा के इस जीव के पीछे लगे हुये हैं। सो जब तक इसके चित्त में संसार और उसके सामान की तरफ़ से थोड़ा-बहुत वैराग न होगा और चरणों में, राधास्वामी दयाल के, प्रीति और प्रतीत और चाह दर्शन की ज़बर न होगी, तब तक इसके मन और

सुरत का अंतर में सिमटाव और चढ़ाई दुरुस्ती से नहीं बन पड़ेगी ।

२४—इस वास्ते, प्रेमी अभ्यासी को मुनासिब है कि जहाँ तक मुमकिन होवे, इन चक्रों को हटा कर और भुला कर और उमंग और प्रेम हृदय में जगा कर अभ्यास किया करे, और चरणों में वास्ते प्राप्ति दया के, जब-तब अभ्यास के समय, और कभी २ दूसरे वक़्तों पर भी प्रार्थना करता रहे, तो राधास्वामी दयाल की मेहर से उसका सब काम आसानी के साथ बनता जावेगा यानी दर्शन का शौक़ और चरणों में प्रेम बढ़ता जावेगा, और अगले पिछले कर्मों का असर घटता जावेगा, और संसारी ख़्वाहिशें सिवाय ज़रूरी और मुनासिब के घटती और कम होती जावेंगी, और अभ्यास में थोड़ा-बहुत रस मिलता रहेगा, और दया और मेहर की अंतर और बाहर परख करके, मौज के साथ मुआफ़क़त करने का इरादा बढ़ता जावेगा, और फिर संसारी दुख-सुख की हालत, ऐसे प्रेमी भक्त पर कम आवेगी, और जब कभी आवेगी तो उसका असर बहुत कम व्यापेगा ।

२५—इस क़दर ख़्याल रखना चाहिये कि यह हालत और कैफ़ियत पूरी २ एक-दम प्राप्त नहीं हो सकती है । लेकिन जो कोई राधास्वामी दयाल की शरण में आया और अपनाया गया, और वह चेत कर होशियारी के साथ अंतर

और बाहर सतसंग करता है और उनके दर्शनों की चाह दिन २ बढ़ाता जाता है, उसकी भक्ति रोज़-ब-रोज़ बढ़ती जावेगी और वह सब दर्जे आहिस्ते २ तै करता हुआ, एक दिन निज धाम में राधास्वामी दयाल के चरणों में पहुँच कर, परम और अमर आनन्द को प्राप्त होगा। और जिस क़दर उसकी हालत बदलती जावेगी, उसी क़दर मन और माया और काल और कर्म और तीनों गुण वग़ैरा के चक्करों का असर उस पर कम होता जावेगा, और एक दिन इन सब से न्यारा हो जावेगा।

२६—यह सच्च है कि संसार यानी कुटुम्ब, परिवार, धन, माल और भोग-बिलास वग़ैरा की प्रीति और आसक्ति छोड़ना और चरणों में गहरा प्रेम लाना, यकायक मुश्किल है। लेकिन जो भाग से कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु या साधगुरू और उनके सतसंग और अभ्यास की जुगती में प्यार आ जावे, तो जल्द और सहज में इन सब से वैराग अंतर में आ सकता है।

२७—दुनिया में देखने में आता है कि जिस किसी की मुहब्बत या आसक्ति थोड़ी-बहुत किसी इन्द्रिय भोग में हो गई, तो वह उसके रस में इस क़दर मस्त हो जाता है कि तमाम संसारी प्रीति और बंधनों को चन्द रोज़ में ढीला कर देता है, बल्कि अपनी देह और जान और

इज़्ज़त का भी कुछ ख़्याल नहीं करता, जैसे शराबी तमाशबीन और जुआरी वग़ैरा।

२८—इसी तरह जिन किनहीं दो शख़्सों की गहरी मुहब्बत आपस में हो जाती है, तो चाहे वह ग़ैर क़ौम के होवें, लेकिन उनका आपस में निहायत ख़िला-मिला हो जाता है। और इस क़दर अपने दोस्त की ख़ातिर एक दूसरे को मंज़ूर होती है कि कुटुम्ब, परिवार और बिरादरी वग़ैरा से नाता बहुत ढीला कर देते हैं और धन और माल वग़ैरा दोस्त की नज़र करके जैसे वह रहे और रक्खे वैसे ही ख़ुशी से रहते हैं और मरते दम तक दोस्ती को निबाहते हैं।

२९—इस वास्ते, यह कुछ ज़रूर नहीं है कि जब मन और सुरत ऊँचे देश में अभ्यास करके चढ़ें, तब ही चित्त में वैराग आवेगा, क्योंकि यह लोग जिनका ज़िक्र ऊपर हुआ कुछ भी परमार्थ की ख़बर नहीं रखते, और न उनकी तवज्जह इस तरफ़ को होती है।

३०—लेकिन कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और संतों की जीवों पर बड़ी दया है कि वे एक दम संसार का त्याग नहीं कराते हैं, बल्कि यह उपदेश है कि गृहस्थ में रह कर और कारोबार और रोज़गार, दस्तूर के मुआफ़िक़ करते हुए, संतों की जुगत का अभ्यास करो, तो जिस क़दर मन

और सुरत के सिमटाव और चढ़ाई से, अन्तर में रस और आनन्द मिलता जावेगा और चरणों में प्रीति और प्रतीत बढ़ती जावेगी, उसी क़द्र चित्त, संसार और उसके सामान और पदार्थों से अंतर में उपराम होता जावेगा और यह अंतरी वैराग सच्चा और पक्का होवेगा।

३१—बाज़े लोग परमार्थ के निमित्त छोटी या बड़ी उम्र में, घरबार और रोज़गार छोड़ कर भेष धारण कर लेते हैं, यानी फ़क़ीर बन जाते हैं। पर जो उनको सच्चे और पूरे गुरू से संतों की जुगत नहीं मिली, तो उनका वैराग थोड़े दिनों में ढीला पड़ जाता है और अनुराग यानी मालिक के मिलने की चाह भी बदल जाती है। फिर ऐसे त्याग से कुछ फ़ायदा नहीं होता है।

३२—इसमें शक नहीं कि ज़ाहिरी त्याग करने में ऐसे लोगों ने बहुत मरदानगी की, पर ब-सबब न मिलने पूरे गुरू और पूरी जुगत के, जो फ़ायदा कि उनको हासिल होना चाहिये था नहीं हुआ। बल्कि जो थोड़े दिन के पीछे जब कि भेष के रंग में रँग गये और वहाँ की चाल-ढाल में पक गये उनके मन में बिल्कुल चाह अपने जीव के कल्याण की नहीं रहती। और फिर जो पूरे गुरू भी मिलें और पूरी जुगत भी बतावें, तो वे उनका सतसंग करना और उपदेश लेना मंज़ूर नहीं करते। फिर ऐसे त्याग और वैराग से

असली फ़ायदा हासिल नहीं हुआ और मुफ़्त अपनी ज़िन्दगी सैर और तमाशे और खान-पान और मान-बड़ाई के लालच में बरबाद करी।

३३—संत सतगुरु जो कुल्ल रचना के भेद से वाक़िफ़ हैं, अति दया करके जीवों को समझाते हैं कि सच्चा और पूरा वैराग, बग़ैर मन और सुरत को आकाश में चढ़ाने के, हासिल नहीं हो सकता। और ज़ाहिरी त्याग करना, जब तक कि मन में सच्चा और पूरा वैराग न आवे और अनुराग, प्राप्ति दर्शन कुल्ल-मालिक का, पैदा न होवे, महज़ फ़िज़ूल है और वह सबसे भारी विकार अहंकार का पैदा करने वाला है। इस वास्ते क़तई हुक्म दिया कि पहिले, भक्ति गृहस्थ में रह कर शुरू करो, और जब अभ्यास करके मन और इन्द्रियों की हालत बदले, तब अन्तर में अपने चित्त को, सर्व-भोग और पदार्थों की तरफ़ से, बल्कि कुल्ल संसार और उसके कारोबार से हटाते जाओ, तब रफ़्ते २ पूरा काम बनेगा।

३४—जिस किसी ने बे-समझे-बूझे और बग़ैर मिलने पूरे गुरू और उनकी पूरी जुगत के, घरबार और रोज़गार छोड़ दिया, उसने भारी ग़लती की और धोखा खाया, क्योंकि मन और इन्द्रियों और काम, क्रोध, लोभ, मोह वग़ैरा कि जड़ बहुत दूर और ऊँचे देश में है। सो जब तक अभ्यासी, अभ्यास करके वहाँ तक नहीं पहुँचेगा, तब

तक उसके त्याग और वैराग का पूरा ऐतबार नहीं हो सकता और न उसको संतों के निज देश में, जहाँ कि मन और माया और काल और कर्म और कष्ट और क्लेश बिल्कुल नहीं हैं, बासा मिलेगा, यों ही माया देश में चक्कर खाता रहेगा। इस वास्ते हर एक परमार्थी को, जो गृहस्थी है या विरक्त, मुनासिब और लाज़िम है कि संतों के उपदेश के मुवाफ़िक़ कार्रवाई करे, तब उसका सच्चा और पूरा उद्धार होगा, और जो गृहस्थ में है तो उसके दोनों यानी स्वार्थ और परमार्थ दुरुस्त बन जावेंगे।

३५—खुलासा यह है कि संसार और उसके सामान और पदार्थों से वैराग, चित्त में आना, बहुत कठिन नहीं है। पर शर्त यह है कि सच्चे मालिक के चरणों में प्रीति आ जावे और संतों की जुगत का अभ्यास दुरुस्ती के साथ बन पड़े कि जिससे मन और सुरत दिन २ ऊँचे देश की तरफ़ चढ़ते जावें। और जो सच्चे मालिक का भेद और उससे मिलने की जुगत, संत सतगुरु या उनके सच्चे प्रेमी से न मिले, तो उस वैराग का पूरा २ ऐतबार नहीं हो सकता और न उसका असली फ़ायदा, यानी अंतर में रस और आनन्द का मिलना और दिन २ मालिक के चरणों से मेल होना, हासिल होगा।

॥ बचन २६ ॥

राधास्वामी मत वालों को अपने उद्धार की निसबत किसी तरह शक और संदेह मन में नहीं लाना चाहिये, क्योंकि जो कोई राधास्वामी दयाल की शरण लेकर, सुरत-शब्द का अभ्यास करेगा, उसका पूरा उद्धार एक, दो, तीन, हद्द चार जन्मों में ज़रूर हो जावेगा।

१—राधास्वामी मत में बाहर सतसंग, और अन्तर में अभ्यास सुरत और मन के ऊँचे देश की तरफ़ चढ़ाने का, कराया जाता है, और भेद कुल्ल-मालिक के निज धाम का, जो कि सुरत का निज देश है, और भी रास्ते की मंज़िलों का, समझाया जाता है कि जिससे अभ्यासी रास्ते में कहीं न अटके और हर एक मक़ाम को तै करता हुआ धुर धाम में पहुँच कर राधास्वामी दयाल का दर्शन और उनके चरणों में बासा पावे।

२—जो कि राधास्वामी मत के सतसंगी कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल का इष्ट बाँध कर और उनके चरणों की शरण दृढ़ करके, उनके निज धाम में पहुँचने की आशा रखते हैं, और उसको दिन २ बढ़ाते और मज़बूत

उमंग के साथ घट में चढ़ते हैं, उसी क़दर शब्द और रूप का रस और आनन्द मिलता है और उसके साथ शौक़ और उमंग भी ज़्यादा और दुनिया के ख़्याल यानी गुनावन कम और दूर होते जाते हैं और मन निश्चल और चित्त निर्मल होता जाता है।

६—राधास्वामी मत में सब में भारी संयम शौक़ और प्रेम का है और जब यह थोड़ा-बहुत दिल में पैदा हुआ और अभ्यास करके थोड़ा-बहुत रस और आनन्द पाकर बढ़ने लगा, ता दिन २ अभ्यास की तरक़्क़ी होती जावेगी और दर्शनों के प्राप्ति की आशा और प्रतीत मज़-बूत हो जावेगी।

७—मालूम होवे कि जिस क़दर मन और सुरत को रस और आनन्द अन्तर में मिलता जाता है, उसी क़दर संसार के भोगों और पदार्थों से चित्त हटता जाता है और ख़्वाहिश और संसारी चाह कम होती जाती है और शौक़ दर्शन का बढ़ता जाता है और देह और दुनिया के बंधन भी ढीले होते जाते हैं।

८—जब कि इस तरह अभ्यास करके मन और सुरत का झुकाव और खिंचाव घट में ऊपर की तरफ़ को होने लगा, तब अख़ीर वक़्त पर, जब कि सुरत सर्व अंग करके, पिंड को छोड़ कर, ऊपर की तरफ़ क़ुदरती तौर पर

खिंचेगी, उस वक़्त अभ्यासी को इस क़दर आसानी अपने घर की तरफ़ चलने की होवेगी, और ऐसा भारी रस और आनन्द खुलने शब्द का और नज़र आने दर्शन का मिलेगा कि उसको पाकर सुरत, निहायत उमंग के साथ, ऊपर को चढ़ेगी और सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु जहाँ मुनासिब समझेंगे, उसको ऊंचे और सुख स्थान में बासा देवेंगे।

९—यह हाल गहरे अभ्यासियों का होगा। और जो कम दर्जे के अभ्यासी हैं, उनकी भी सुरत उसी तरह शब्द और स्वरूप की मदद पाकर, ऊपर की तरफ़ को, उमंग के साथ, अख़ीर वक़्त पर मामूल से ज़्यादा, चढ़ेगी और सुख स्थान में यानी सहसदल कँवल और उसके ऊपर बासा पावेगी। और जो ज़्यादा दर्जे के अभ्यासी हैं, वे अपने दर्जे के मुआफ़िक़ त्रिकुटी में या दसवें द्वार में, और जो अव्वल दर्जे के हैं, वे सत्तलोक और राधास्वामी पद में बासा पावेंगे।

१०—ख़ुलासा यह है कि सुरत-शब्द योग का अभ्यासी, चाहे जिस दर्जे का होवे और जिसने कि सच्चे मन से राधास्वामी दयाल की शरण ली है, वह सहसदल कँवल के नीचे नहीं ठहरेगा। वह राधास्वामी दयाल की मेहर और संत सतगुरु की दया से, इस मक़ाम के ऊपर और

ऊँचे से ऊँचे मक़ामों में, अपनी २ भक्ति के मुआफ़िक़ दर्जे पाता हुआ, एक दिन धुर धाम में पहुँच जावेगा। और इसी का नाम पूरा उद्धार है।

११—हरचन्द मन और माया और काल और कर्म, भक्ति की तरक़्क़ी में, अनेक तरह के विघ्न डालते रहते हैं, पर जिस किसी के हृदय में सच्चा शौक़ अपने जीव के उद्धार का, दया से, पैदा हो गया है, वे उसका रास्ता रोक नहीं सकते, बल्कि कुछ अर्से के अभ्यास के बाद, वही विघ्न, अभ्यासी के मददगार हो जाते हैं, और इस तौर पर राधास्वामी दयाल की दया से रास्ता सहज में तै हो जाता है।

१२—कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल इस क़दर अपने भक्तों पर, जो सच्चे मन से शरण में आये हैं, दया फ़रमाते हैं कि सिर्फ़ उन्हीं का नहीं, बल्कि उनके निज कुटुम्बियों का भी, जिस क़दर मुनासिब होता है, उद्धार फ़रमाते हैं, यानी उनसे अपने भक्त की सेवा लेकर या उसमें प्रीति लगा कर, आख़िर वक़्त पर उनके मन और सुरत को सहज में थोड़ा-बहुत चढ़ाते हैं और चौरासी से चक्कर से बचा कर, और फिर नर देही में लाकर सतसंग और भजन वग़ैरा कराते हैं। इस तरह उनके उद्धार का रास्ता भी जारी हो जाता है।

१३—यह ख़ास दया किसी भी वक़्त में जीवों पर नहीं हुई, जो कि अब कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल ने संत सतगुरु स्वरूप धारण करके जीवों पर आप फ़रमाई है यानी कि जिस किसी ने सच्चे मन से उनके चरणों में थोड़ी-बहुत भक्ति करी तो उसका, और भी उसके निज रिश्तेदारों का, बल्कि नौकरों तक का, दर्जे-ब-दर्जे उद्धार फ़रमाते हैं।

१४——माद्दे का ख़वास है कि जिस तरफ़ एक दफ़ा रवाँ होवे, तो बार २ उसी तरफ़ को, वक़्त मुक़र्ररा पर, रुजू करता है, जैसे कि एक बार मुसिल लिया जावे या फ़स्द खोली जावे, तो माद्दा या ख़ून उसी तरफ़ को, वक़्त मुक़र्ररा पर, बारम्बार रुजू करते हैं, फिर सुरत और मन जिनका निज घर ऊँचे देश में है, अख़ीर वक़्त पर जब कि क़ुदरती खिंचाव अंदर में कुल्ल पसारे का ऊपर की तरफ़ को होगा, किस तरह, और तरफ़ को जा सकते हैं ? पर शर्त यह है कि मन और सुरत में चाह और आशा अपने घर में जाने और अपने मालिक से मिलने की पैदा होकर, जिस क़दर मुमकिन होवे, जीते-जी मज़बूत हो जावे।

१५—और जो घर का भेद नहीं मिला और जीते-जी उस रास्ते पर चलना शुरू नहीं किया और आशा और वासना देह और संसार और उसके भोगों और पदार्थों में रही, तो वह मन और सुरत, ज़रूर अपनी चाह और करनी

के मुआफ़िक़, सहसदल कँवल के नीचे जो सुन्न है, उसमें ग़ोता लगा कर, फिर नीचे की तरफ़ उतर कर, किसी न किसी देश में और योनि में बासा पावेंगे यानी फिर जनमेंगे और शरीर धारण करेंगे।

१६—जो करनी अच्छी है तो स्वर्गादिक और मृत्यु लोक में नर देही पावेंगे और सुख भोगेंगे और जो नाक़िस करनी है तो नीचे देश और नीची योनियों में भरमेंगे

१७—जिस वक़्त कि सुरत छठे चक्र के पार सुन्न में जाती है, उस वक़्त देह और दुनिया की कार्रवाई की याद भूल जाती है, लेकिन थोड़े अर्से के बाद, जो ज़बर वासना है, उसकी फुरना होती है और उसी के मुआफ़िक़ उस सुन्न से, जहाँ बासा मिलेगा, उस धार पर, जो उस देश या योनि से मिली हुई है, सवार होकर उतर जाती है।

१८—इस उतार का सबब यह है कि उस सुरत और मन का रुख़ ज़िन्दगी में नीचे की तरफ़ रहा और भोगों की आसक्ति करके धार उसी तरफ़ को हमेशा जारी रही। सो उसी स्वभाव और वासना के मुआफ़िक़ मरने के बाद भी वैसी ही फुरना उठती है और सुरत को खींच कर नीचे के देश और योनि में ले जाती है।

१९—इस वास्ते, हर एक जीव को, चाहे औरत होवे या मर्द, मुनासिब और लाज़िम है कि इसी ज़िन्दगी में

अपने निज घर और उसके रास्ते का भेद और जुगत चलने की, संत सतगुरू या उनके प्रेमी सेवक से दरियाफ़्त करके, जिस क़दर बन सके, उस रास्ते पर चलना शुरू करे, और कुछ रस और आनन्द अन्तर में पाकर आशा और चाह अपने निज घर में पहुँचने और अपने सच्चे पिता कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के दर्शन के प्राप्ति की, मज़बूत बाँधे, तो अलबत्ता उसको संत सतगुरु की दया से ऊँचे देश में बासा मिलेगा, और जब तक कि धुर धाम में नहीं पहुँचेगा, तब तक, एक दो या तीन जन्म धारण करके, वही जुगत कमा कर, ऊँचे से ऊँचे देश में बासा पावेगा, और हर एक जन्म, पहिले जनम से बेहतर होगा और संत सतगुरु भी हर जन्म में मिलेंगे ॥

२०—राधास्वामी मत के हर एक सतसंगी को मुनासिब है कि जिस क़दर अभ्यास बन सके, राधास्वामी दयाल की शरण लेकर, हर रोज़, बिला नाग़ा करता रहे और सतसंग करके चरणों में प्रीति और प्रतीत बढ़ाता जावे, और शक और शुबहा या किसी तरह का सन्देह मन में न रक्खे, तो राधास्वामी दयाल मेहर से अपना बल देकर, जिस क़दर करनी मुनासिब और ज़रूर है, करा कर, एक दिन, निज घर में पहुँचा देंगे कि जहाँ सुरत परम आनन्द को प्राप्त होगी और जन्म-मरण के दुख और देहियों के

कष्ट और क्लेश से बिलकुल छुटकारा हो जावेगा। इसी को पूरा उद्धार कहते हैं। और जो कोई इस तरह अभ्यास जारी रक्खेगा, वह और योनियों में नहीं जावेगा यानी चौरासी का चक्कर उसका फ़ौरन कट जावेगा। इस बात में किसी को कभी शक और सन्देह न लाना चाहिये।

बचन २७

सच्चे परमार्थी को, वास्ते अपनी तरक़्क़ी के, सात बातों की सम्हाल रखना ज़रूर है।

१—जो कोई कि सच्चा परमार्थी है और सच्चे मालिक से उसके निज धाम में पहुँच कर मिलना चाहता है, उसको ये सात बातें ज़रूर माननी चाहियें और उनके मुआफ़िक़ अपने परमार्थ की कार्रवाई करनी चाहिये। तब उसके हृदय में प्रेम पैदा होगा, और उन सातों बातों की सम्हाल के साथ दिन २ बढ़ता जावेगा यानी परमार्थी रंग चढ़ता जावेगा और संसारी रंग उतरता जावेगा यानी मन के अंग बदलते जावेंगे और दिन २ विकार घटते जावेंगे।

२—वे सात बातें ये हैं—

पहिले, कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीति और प्रतीत।

यह बात सतसंग में निर्णय और भेद के बचन सुन कर, और उनका गहिरा मनन और विचार कर के हासिल

होगी। हर एक परमार्थी को मुनासिब और लाज़िम है कि जिस क़दर संशय और भ्रम और शक और शुबहे निसबत कुल्ल-मालिक की मौजूदगी और उसकी सर्व समर्थता और क़ुदरत के, उसके मन में धरे होवें या पैदा होवें, उनको सतसंग में बैठ कर साफ़ और दूर करावे, क्योंकि जो किसी क़िस्म का थोड़ा भी शक और संदेह इस मामले में रहा, तो वह प्रीति और प्रतीत में विघ्न डालेगा। और फिर अभ्यास में भी कसर पड़ेगी। और ये संशय और भ्रम राधास्वामी मत के सतसंग में आसानी से दूर हो सकते हैं।

२—दूसरे, संत सतगुरु और साध गुरू के चरणों में प्रीति और प्रतीत।

यह बात वास्ते दुरुस्ती से बनने अभ्यास और पूरे तौर पर समझने उसूल राधास्वामी मत के, बहुत ज़रूरी है। जो संत सतगुरु में थोड़ा-बहुत भाव नहीं आवेगा, तो मत की भी समझ ब-ख़ूबी नहीं आवेगी, और न जुगत दुरुस्ती से कमाई जावेगी और न अन्तर और बाहर मेहर और दया की प्राप्ति होगी। जो कोई सच्चा खोजी और दर्दी है, उसको संत सतगुरु के चरणों में बचन सुनते ही भाव और प्यार आवेगा, क्योंकि उन बचनों को सुन कर और समझ कर, अपने प्रीयतम कुल्ल-मालिक का लखाव आवेगा और उसके निज धाम और रास्ते का पता और भेद मिलेगा

और चलने की जुगत दरियाफ़्त होगी। फिर ख़्याल करो कि जो कोई अपने प्यारे माशूक़ और मतलूब का पता और निशान बतावे, तो वह किस क़द्र प्यारा लगना चाहिये? दुनिया में जो कोई क़ासिद वग़ैरा अपने प्यारे की परदेश से ख़बर लाता है, वह निहायत प्यारा लगता है और उसकी बहुत ख़ुशी के साथ ख़ातिरदारी और मेहमानदारी करते हैं। फिर जो कुल्ल-मालिक का भेदी और मन्त्री है, उसका जिस क़द्र भाव और प्यार और सेवा की जावे, वह थोड़ी से थोड़ी है, क्योंकि वही सब तरह से मदद देकर, एक दिन, जीव को धुर घर में पहुँचा सकता है। और किसी तरह किसी का गुज़र महल में, या उसके रास्ते पर नहीं हो सकता।

४—सच्चे परमार्थी को सतसंग और अभ्यास करने से दिन २ उनकी गत-मत और ताक़त की ख़बर पड़ती जावेगी और उसी क़द्र उसकी प्रीति और प्रतीत उनके चरणों में बढ़ती और मज़बूत होती जावेगी।

५—तीसरे, शब्द और नाम में प्रीति और प्रतीत। राधास्वामी मत में नाम की दो क़िस्में हैं। एक ध्वन्यात्मक जिसको शब्द कहते हैं और उसकी धुन, घट २ में हरदम जारी है और यह मुराद चैतन्य की धार रवाँ से है, जिसके साथ बराबर धुन होती है और वही धारा कुल्ल रचना की कर्ता और सम्हालने वाली है। और दूसरा, वर्णात्मक।

इससे मतलब उसी ध्वन्यात्मक नाम से है जो कि बोलने और लिखने में आया और ध्वन्यात्मक नाम को लखाता है। ध्वन्यात्मक नाम यानी शब्द ज्यों का त्यों बोलने और लिखने में नहीं आ सक्ता, लेकिन जहाँ तक कि मुमकिन था, संत उसको तलफ़्फ़ुज़ में लाये हैं और उसके वसीले से ध्वन्यात्मक नाम को लखाते हैं।

६—ध्वन्यात्मक नाम चैतन्य की धार है, और वही जान और सुरत की धार है, और उससे सब रचना हुई और उसी के आसरे क़ायम है। इसी धार को यानी उस के साथ जो धुन हो रही है, उसको पकड़ के चलना, सुरत-शब्द योग कहलाता है। इसी जुगत से यानी सुरत को शब्द में लगा कर चढ़ाने से रास्ता तै करना और एक दिन धुर घर में पहुँचना मुमकिन है। और कोई दूसरा रास्ता धुर घर का पहुँचाने वाला रचा ही नहीं गया। प्राण की धार और दूसरी धारें माया के घेर से निकसी हैं, सो वहीं उलट कर ख़त्म हो जाती हैं। माया यानी भौसागर के बाहर कोई धा नहीं जाती है। इस वास्ते सच्चे परमार्थी को मुनासिब है कि शब्द का भेद लेकर यानी मक़ाम २ की धुन को दरियाफ़्त करके और उसमें प्यार और भाव लाकर नित्त नियम से अभ्यास करे, और कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की शरण दृढ़ करके, संत सतगुरु की दया संग लेवे। तब अभ्यास

में पूरी मदद मिलेगी और अगले-पिछले कर्म और मन और माया के विघ्न, सहज में, आहिस्ते २ कटते और दूर होते जावेंगे ।

७—और मालूम होवे कि वर्णात्मक नाम के अभ्यास से सफ़ाई, और ध्वन्यात्मक नाम के अभ्यास से चढ़ाई होवेगी । और बिना शब्द के अभ्यास के, मन, और किसी तरह, बस में नहीं आवेगा । और बग़ैर मन के ज़ेर होने के, माया के घेर से निकलना और मालिक के धाम में पहुँचना ना-मुमकिन है ।

८—चौथे, प्रेमी और भक्त जन यानी राधास्वामी मत के सतसंगियों में प्यार और दया-भाव ।

जो सच्चे परमार्थी हैं, उनके मन में सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरणों में प्यार ज़रूर होगा, और उस प्यार को वे दिन २ बढ़ाने की कोशिश करेंगे । फिर जो कि अपने प्यारे को प्यार करते हैं और आप भी उसके प्यारे होते जाते हैं, उनसे प्यार रखना ज़रूर मुनासिब है । बल्कि सच्चे प्रेमी के मन में ऐसों की प्रेम की हालत और परमार्थी कार्रवाई देख कर, आप ही आप, उनकी तरफ़ प्यार और दया-भाव पैदा होगा, जैसा कि किसी आशिक़ ने इन कड़ियों में कहा है । "मुझे अपने प्रीयतम से है यह क़रार, कि जब तक है जाँ देह में बर-क़रार । करूँ उसके भक्तों से हरदम पियार, रहूँ उनको आपे के मुआफ़िक़ निहार" ॥

९—और जो कि हर एक सुरत, राधास्वामी दयाल की अंश यानी बच्चा है, फिर सब सुरतें आपस में भाई और बहिन हुईं। इस तरह सब के साथ दया-भाव मन में रखना चाहिये। लेकिन जो कोई इन में से अपने प्रीयतम कुल्ल-मालिक और संत सतगुरु के चरणों में प्यार लावे और सेवा करे और उनका हुक्म माने, तो उनको अपने प्रीयतम के प्यारे और प्यार करने वाले समझ कर, उन में, सिवाय दया-भाव के, सच्चे मन से प्यार आना चाहिये और परस्पर यानी दोनों तरफ़ से यही बर्ताव तहे दिल से जारी होना चाहिये, क्योंकि उनके संग से कुल्ल-मालिक और संत सतगुरु के चरणों में प्रीति और भक्ति और सेवा बढ़ेगी और अभ्यास सुखाला बन पड़ेगा।

१०—जो कोई कहे कि मुझको कुल्ल-मालिक या संत सतगुरु के चरणों में तो भाव और प्यार है, पर सतसंगियों में (जो सच्चे प्रेमी हैं) मुझको भाव नहीं आता, तो उसकी कुल्ल-मालिक और संत सतगुरु के चरणों प्रीति का में भी पूरा ऐतबार नहीं हो सकता, क्योंकि जब उसको अपने प्रीयतम के सच्चे प्यार करने वाले अच्छे नहीं लगते, तो उसको कुल्ल-मालिक और संत सतगुरु कैसे अच्छे लग सकते हैं ? इस वास्ते ऐसे शख़्सों की प्रीति का कुछ भरोसा नहीं हो सकता है और न वे सतसंग में ज़्यादा अर्से तक ठहर सकेंगे।

११—ऊपर के कलाम से यह मतलब नहीं है एक सतसंगी हर एक सतसंगी की, प्यार-भाव के साथ, ख़ातिरदारी और सेवा करता फिरे। इसमें उसके सतसंग और अभ्यास और सतगुरु की सेवा में ख़लल पड़ेगा। हुक्म यह है कि सब सतसंगी इसको प्यारे लगें और जब ज़रूरत और मौक़ा होवे, तब यह उनकी ख़ातिरदारी और मेहमानी, अपने भाई के मुआफ़िक़ करे, ख़ास कर जबकि कोई सतसंगी इत्तिफ़ाक़ से इसके मकान पर आवे, या चन्द रोज़ को ठहरे।

१२—पाँचवे, निरख-परख अपने मन और इन्द्रियों के हाल और चाल की।

यह काम वास्ते हर दम होशियार रहने और दूर करने भूल और भरम के, बहुत ज़रूर है।

१३—मन और इन्द्रियों का स्वभाव है कि हर वक़्त कोई न कोई तरंग उठा कर या किसी न किसी भोग और पदार्थ की तरफ़ तवज्जह करके चंचल बने रहते हैं और इनकी चंचलता से परमार्थी की व्रत्ति हमेशा डावाँडोल रहती है। और वास्ते सफ़ाई और दुरुस्ती अभ्यास के, निश्चलता ज़रूर चाहिये। इस वास्ते हर परमार्थी को मुनासिब और लाज़िम है कि अपने मन की चौकीदारी करता रहे, यानी फ़िज़ूल और बे-फ़ायदा और ना-मुनासिब तरँगें न उठावे, और न अपनी इन्द्रियों को, किसी तरफ़, बे-फ़ायदा

और ना-मुनासिब तौर पर तवज्जह करने देवे, और न इस क़िस्म की तरंगों या पदार्थों और भोगों के गुनावन में अपने मन और इन्द्रियों को लिपटने देवे। इस तरह कुछ अर्से तक कार्रवाई करने से, यानी हर वक़्त मन और इन्द्रियों की सम्हाल रखने से, इस क़दर ताक़त आ जावेगी कि अभ्यास के वक़्त, थोड़ा-बहुत अपने मन को निश्चल कर सकेगा, और तब कुछ रस अभ्यास का भी ले सकेगा, और मन की कुचाल को आहिस्ते २ दूर कर सकेगा, नहीं तो मन चंचल रह कर अभ्यास का रस नहीं आने देगा, और कुल्ल वक़्त अभ्यास का तरह २ के ख़्यालों में ख़र्च करा के, ख़ाली उठावेगा और फिर नतीजा उसका यह होगा कि कुल्ल-मालिक और संत सतगुरु और शब्द की तरफ़ से अभाव पैदा हो जावेगा, और एक क़िस्म की निराश्ता तबिअत में आ जावेगी कि जिससे कोई दिन में अभ्यास भी छूट जावेगा और बे-मुखता यानी मन-मुखता बढ़ती जावेगी।

१४—मन का क़ायदा है कि अपनी कसरों को नहीं देखता और न उनके दूर करने का जतन, जो संत सतगुरु बार २ फ़रमाते हैं, करना चाहता है, और ऐसी आशा रखता है और बल्कि प्रार्थना भी करता है कि दया से सब विकार एक दम दूर हो जावें, और अंतर में शब्द खुल

जावे। यह आशा और प्रार्थना कुछ बुरी नहीं है, लेकिन जो यह सच्चा परमार्थी है तो इस को हुक्म के मुआफ़िक़ दया का बल लेकर अपना ज़ोर भी, जिस क़दर बन सके, वास्ते दुरुस्ती अभ्यास और हटाने गुनावन और विघ्नों के, लगाना ज़रूर चाहिए। तब दया इस की मदद करेगी। और जो यह मन और इन्द्रियों की तरंगों में बहता रहता है और नित्त नई चाहें भोग-विलास की उठाता रहता है, और वक़्त अभ्यास के भी इसी क़िस्म के ख़्यालों में भ्रमता रहता है, तो ऐसी सूरत में दया क्या कार्रवाई कर सकती है, सिवाय इसके कि मौज से उसको कुछ डर दिखाया जावे और दुख और तकलीफ़ वाक़े होवे ? तब वह भोगों की तरफ़ से थोड़ा-बहुत हट सकता है। लेकिन इस क़िस्म की कार्रवाई, जहाँ तक मुमकिन होता है, संत सतगुरु मंज़ूर नहीं करते हैं, सिर्फ़ बचन सुना कर और समझौती देकर होशियार करते हैं, ताकि यह आप, अपने नफ़े और नुक़सान को सोच कर दुरुस्ती से चाल चले। और जब यह हिम्मत बाँध कर ऐसी कार्रवाई शुरू करता है, तब उसको मदद देकर उसकी चाल बढ़ाते हैं और अन्तर में थोड़ा-बहुत रस देकर शौक़ और प्रेम जगाते हैं कि जिससे अभ्यास सुखाला बनता जावे और आहिस्ते २ तरक़्क़ी होती जावे। इस तरक़्क़ी का हाल, अभ्यासी अपने मन की हालत को परख कर,

जान सकता है और दिन २ दया और मेहर को भी अंतर और बाहर परख सकता है, अलबत्ता जिसने सच्ची शरण ली है, उसके अगले-पिछले कर्म जिस क़दर जल्दी मुनासिब है, काटते हैं, ताकि वह हलका होकर यानी विघ्नों से बच कर, सुखाला, प्रेम पूर्वक, अभ्यास में लगे।

१५—खुलासा यह है कि परमार्थी को जहाँ तक बने, भोगों की इच्छा नहीं उठाना चाहिए और न उनकी गुनावन में अपना वक़्त खर्च करना चाहिये। जो भोग कि मौज से प्राप्त होवे, और बशर्ते कि वह ना-जायज़ और ना-मुनासिब और किसी तरह हारिज न होवे, तो उसमें, अहतियात के साथ बर्तने में दोष नहीं है।

१६—छठे, सच्ची दीनता कुल्ल-मालिक और सतगुरु के चरणों में और अपने तईं ओछा और कसर-वाला समझ कर, प्रार्थना करना, वास्ते प्राप्ति दया के।

जो कोई अपने मन की निरख और परख यानी चौकीदारी करता रहेगा, उसको अपनी कसरें हमेशा नज़र आवेंगी। तब उसके मन में सच्ची दीनता कुल्ल-मालिक और सतगुरु के चरणों में पैदा होगी। और फिर वही शख़्स सच्ची प्रार्थना, वास्ते उनके दूर होने के, करेगा और जो जतन कि बताया जावेगा, उसकी कार्रवाई भी उससे बन

पड़ेगी और कुल्ल-मालिक और सतगुरु की दया की परख और क़दर भी उसी के चित्त में आवेगी।

१७—ऐसा जीव जो कि अपनी कसरों को निहारता रहता है, सब के साथ दीनता और ग़रीबी के साथ बर्ताव करेगा, यानी जो कोई उस पर किसी वक़्त किसी क़िस्म की तान मारेगा, तो वह उसका मुक़ाबिला नहीं करेगा, बल्कि अपनी कसरों का ख़्याल करके, तान के बचन की बर्दाश्त करेगा और तान मारने वाले से नाराज़ नहीं होगा, बल्कि उसको अपना हितकारी समझेगा।

१८—जो कोई अपने तईं ओछा या अपने में कसरें देखता है, वह, वास्ते दूर करने उनके, और हासिल करने तरक़्क़ी के, बराबर जतन करता रहेगा। पर जो कोई अपने तईं पूरा मानेगा, वह अभ्यास में ढीला हो जावेगा और उसकी तरक़्क़ी का रास्ता बंद हो जावेगा। इस वास्ते परमार्थी को चाहिए कि जब तक अपना काम पूरा न बने, तब तक जतन करने से बाज़ न रहे और दीनता और प्रार्थना का अंग न छोड़े।

१९—सातवें, कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की मौज के साथ, जहाँ तक मुमकिन होवे, मुआफ़िक़त करना।

यह भक्ति का एक ख़ास अंग है कि जो कुछ अपना भगवंत कहे या करे, उसको अपने वास्ते बेहतर और मुफ़ीद

समझे, और चाहे वह कार्रवाई मन के मुआफ़िक़ होवे या नहीं, जहाँ तक मुमकिन होवे, उसके साथ मुआफ़िक़त करे, यानी उसको अपने प्रीयतम की मौज समझ कर क़बूल और मंज़ूर करे, क्योंकि जब यह बात मालूम है कि कुल्ल-मालिक सर्व-समर्थ और सब से ज़बर है और उसकी मौज में किसी को दख़ल नहीं है, फिर विचारो कि उसके साथ मुआफ़िक़त करना बेहतर है या ना-मुआफ़िक़त। पहिली सूरत में भक्ति बढ़ेगी और अदब क़ायम रहेगा, और दूसरी सूरत में मन रूखा-फीका होकर अपने प्रीयतम से किसी क़दर बे-मुख हो जावेगा और अभ्यास में भी ख़लल डालेगा। इसमें सेवक का भारी नुक़सान होगा। मुनासिब यह है कि जब कोई काम ख़िलाफ़ मन के वाक़ै होवे और उसकी बर्दाश्त न कर सके, तो चरणों में प्रार्थना, वास्ते बदलने मौज या मिलने ताक़त और सहारे के, वास्ते बर्दाश्त, करे तो राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु ज़रूर थोड़ी-बहुत दया करेंगे या इफ़ाक़ा बख़्शेंगे, यानी ताक़त और सहारा अंतर में देवेंगे।

२०—उनकी मौज अपने सेवकों के वास्ते कभी मसलहत से ख़ाली नहीं होती। पर उस मसलहत का समझना मुश्किल है और कभी २ दया करके ख़ासों को मसलहत भी जना देते हैं। सेवक को हर हाल में, यानी सुख और दुख के वक़्त, मुनासिब है कि उन्हीं के चरणों की तरफ़

तवज्जह करके दया और सहारा चाहे, जैसे बालक चाहे माता कभी उसकी ताड़-मार भी करे, तो उसी की गोद की तरफ़ दौड़ता है और दूसरे की तरफ़, चाहे वह सहारा भी देवे यानी बचावे, तो भी रुख़ नहीं करता।

२१—यह बात सही है कि सब जीव एक ही बार पूरे तौर से इस घाट पर नहीं बर्त सकते, यानी सर्व अंग करके मौज के साथ मुवाफ़िक़त नहीं कर सकते। लेकिन जो कोई कि राधास्वामी मत में शामिल होकर भक्ति में आया है, उसको जानना चाहिये कि यह बात उस पर फ़र्ज़ और लाज़िम है कि भक्ति के क़ायदों के मुवाफ़िक़ जिस क़दर बन सके, अपने प्रीयतम भगवंत की मौज के साथ मुवाफ़िक़त करे। अलबत्ता जीवों के दर्जे के मुवाफ़िक़, जैसे उत्तम, मध्यम और निकृष्ट, इस बर्ताव में भेद रहेगा। लेकिन चाहे जिस दर्जे का भक्त होवे, उस को अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ कोशिश इस बात की करना चाहिये कि जो कुछ उसका भगवंत और मालिक उसकी निसबत कहे या करे, उसमें अपना हित और बेहतरी समझे।

२२—इस बात की कार्रवाई दुरुस्ती के साथ सिर्फ़ सुनने और समझने से नहीं हो सकती। कुछ मदद अंदरूनी अभ्यास की भी दरकार है, यानी सेवक के मन और सुरत का घाट भी थोड़ा-बहुत बदलना चाहिये और अंतर में

कुछ रस और आनन्द और दया और रक्षा के पर्चे भी मिलने चाहिये, तब उसको थोड़ी-बहुत ताक़त मुवाफ़िक़त करने की, साथ मौज के, सख़्ती और सुस्ती में, हासिल होवेगी। सिवाय इसके, कुछ दया भी संत सतगुरु और सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल की दरकार है कि जो सेवक को इस क़दर बल और ताक़त बख़्शेगी कि जिससे वह आसानी के साथ मुआफ़िक़ और ना-मुआफ़िक़ मौज को बर्दाश्त कर सके। सो जो कोई सच्चे मन से सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल की भक्ति में आया है, उसको यह तीनों बातें—यानी बाहर के सतसंग और अन्तर अभ्यास की मदद और राधास्वामी दयाल की दया, थोड़ी-बहुत अपने दर्जे के मुआफ़िक़ ज़रूर हासिल होंगी और उसी क़दर उसको, ताक़त मौज के साथ मुआफ़िक़त करने की, भी मिलेगी और यह ताक़त जिस क़दर कि इसकी प्रीति और प्रतीत कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरणों में, और भी सुरत-शब्द मार्ग के अभ्यास में बढ़ती जावेगी, दिन-दिन ज़्यादा होती जावेगी और एक दिन पूरे दर्जे पर पहुँचा कर छोड़ेगी।

२३—कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की शरण दृढ़ करने और उनकी मौज के साथ मुआफ़िक़त करने में बड़े फ़ायदे हैं, और जीव का संसारी और देह के बंधनों से जल्दी

छुटकारा हो सकता है और कर्मों का असर, जो थोड़े-बहुत किये जावें, उस पर बिल्कुल नहीं पहुँचेगा, और हमेशा अपने सच्चे माता-पिता राधास्वामी दयाल के आसरे और भरोसे देह और संसार में किसी क़दर निःचिंत होकर बर्ताव करेगा, क्योंकि उसको अपनी हालत की रोज़मर्रा जाँच करने से अच्छी तरह से मालूम हो जावेगा कि कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की नज़र, दया और मेहर की, उस पर है और वे सब तरह से और हर हाल में उसकी दया और रक्षा फ़रमाते हैं। फिर संत सतगुरु और कुल्ल-मालिक दयाल के चरणों में किसी तरह का ख़ौफ़ नहीं है यानी काल और कर्म और उसके दूत कुछ नुक़सान या तकलीफ़ इस क़िस्म की नहीं पहुँचा सकते हैं कि जिससे वह जीव घबरा कर या निराश होकर बे-मुख हो जावे और मत को, या उसके अभ्यास को, छोड़ देवे।

२४—इस वास्ते सब जीवों को, जो राधास्वामी दयाल की शरण में आये हैं और उपदेश लेकर सुरत-शब्द मार्ग का थोड़ा-बहुत अभ्यास कर रहे हैं, मुनासिब और लाज़िम है कि अपने बल और पौरुष की तरफ़ से नज़र हटा कर, राधास्वामी दयाल की दया का आसरा और भरोसा लेकर ऐसी हिम्मत बाँधें कि अपना बर्ताव संसार और परमार्थ में, जहाँ तक मुमकिन है, प्रेमाभक्ति के क़ायदों के मुआफ़िक़

जारी करें, और किसी तरह का फ़िज़ूल शक और शुबहा या सन्देह, अपने नफ़े और नुक़सान की निसबत, मन में न लावें। तो यक़ीन होता है कि राधास्वामी दयाल अपनी मेहर और दया से ज़रूर उनकी रक्षा और सम्हाल, जिस क़दर होवेगी, फ़रमावेंगे, यानी पहिले नम्बर, तवज्जह वास्ते दुरुस्ती उनके परमार्थ के, और दूसरे नम्बर, तवज्जह वास्ते सम्हाल और दुरुस्ती उनके स्वार्थ यानी संसारी कारोबार के, फ़रमावेंगे। अगले-पिछले कर्मों का फल ज़रूर भोगना पड़ेगा, लेकिन उसमें दया से बहुत रक्षा और सम्हाल होवेगी, यानी दुखदाई कर्म के भोगने में बहुत कमी हो जावेगी और सुखदाई कर्म का फल ज़्यादा मिलेगा।

राधास्वामी मत की पुस्तकों का

संशोधित सूचीपत्र—१-२-८६ से

पद्य (हिन्दी)

		अजिल्द	सजिल्द
१. सार बचन छंद बंद, पहला भाग		१०.००	१२.००
२. सार बचन छंद बंद, दूसरा भाग		१०.००	१२.००
३. प्रेमबानी, पहला भाग	....	११.००	१४.००
४. प्रेमबानी, दूसरा भाग		९.००	११.००
५. प्रेमबानी, तीसरा भाग	....	९.५०	११.००
६. प्रेमबानी चौथा भाग	....	६.००	८.००
७ संत संग्रह पहला भाग	....	१.७५	२.००
८. संत संग्रह, दूसरा भाग		२.५०	४.५०
९. प्रेम प्रकाश		१.००	३.००
१०. बिनती-प्रार्थना	....	१.००	२.२५
११. नियमावली	....	१.२५	२.१०

गद्य (हिन्दी)

१२. सार बचन वार्तिक	...	५.५०	७.५०
१३. आखिरी बचन स्वामीजी महाराज		०.२५	—
१४. प्रेमपत्र, पहला भाग	....	११.००	१४.००
१५. प्रेमपत्र, दूसरा भाग		१३.५०	१५.५०
१६. प्रेमपत्र, तीसरा भाग	....	९.००	११.००
१७. प्रेमपत्र, चौथा भाग	....	१०.००	१२.००
१८. प्रेमपत्र, पाँचवाँ भाग	....	१०.५०	१२.५०
१९. प्रेमपत्र, छठा भाग	....	७.००	९.००
२०. जुगत प्रकाश	....	२.००	३.५०
२१. सार उपदेश	....	१.५०	२.५०
२२. प्रेम उपदेश	....	१.५०	२.७५
२३. राधास्वामी मत संदेश		१.५०	३.००
२४. राधास्वामी मत उपदेश	....	१.७५	—
२५. निज उपदेश	....	१.१०	—
२६. प्रश्नोत्तर सन्त मत		०.७०	—
२७. छाँटे हुए बचन महात्माओं के		०.६०	—
२८. गुरु उपदेश		०.२५	—
२९. बचन महाराज साहब		५.००	७.००
३०. बचन बाबूजी महाराज, पहला भाग		२.००	५.००
३१. बचन बाबूजी महाराज, दूसरा भाग		२.५०	४.००

	अजिल्द	सजिल्द
३२. बचन बाबूजी महाराज, तीसरा भाग	८.००	१०.००
३३. बचन बाबूजी महाराज, चौथा भाग	१०.००	१२.००
३४. जीवन चरित्र, स्वामीजी महाराज	३.००	५.००
३५. जीवन चरित्र, बाबूजी महाराज	—	८.००
३६. शब्द कोश, संत मत बानी	२.००	—
३७. लोक-परलोक हितकारी	३.५०	४·००
३८. मौलाना रूम के दृष्टान्त और औलियाओं की कथाएँ	३.५०	४·५०
३९. समाध पुस्तिका	१.५०	—

बँगला

४०· R. S. Mat Sandesh	२.२०	—
४१. Prasnotter	२.६०	—
४२. Saarupdesh	२.८०	—

गुजराती

४३. राधास्वामी मत उपदेश	१.५०	—
४४. राधास्वामी मत सन्देश	१.५०	—

सिंधी

४५. राधास्वामी मत संदेश	१.००	

अँग्रेजी

४६. राधास्वामी मत प्रकाश Radhasoami Mat Prakash	—	१·०००
४७. डिस्कोरसेज औन राधास्वामी फ़ेथ Discourses on Radhasoami Faith	—	१०.००
४८. फेलप्स साहब के नोट्स Phelps' Notes	—	५.५०
४९. ए-सोलेस-टू-सतसंगीज़ A Solace to Satsangis	१·००	—

सेक्रेटरी, राधास्वामी सतसंग,
स्वामी बाग, आगरा-२८२००५